ॐ

जैनहितैषी ।

साहित्य, इतिहास, समाज और धर्मसम्बन्धी
लेखोंसे विभूषित

मासिकपत्र ।

सम्पादक और प्रकाशक—नाथूराम प्रेमी ।

दशवाँ भाग । माघ, फाल्गुन श्रीवीर नि० संवत् २४४० ४-५ वाँ अंक ।

विषयसूची ।

		पृष्ठ
१	बुकर टी० वाशिंगटन	१९३
२	कन्या-निर्वाचन	२००
३	आवरण	२०५
४	पुस्तक-परिचय	२१८
५	तेरापंथियोंका सौभाग्य और गुरुओंकी दुर्दशा ...	२२६
६	जैनी क्या सबसे जुदा रहेंगे ?	२३७
७	समाजसम्बोधन (कविता)	२४४
८	डॉक्टर सतीशचन्द्रकी स्पीच	२४६
९	ऐतिहासिक लेखोंका परिचय	२५३
१०	सत्य-परीक्षक यन्त्र	२५९
११	विविध प्रसंग	२६२
१२	कर भला होगा भला (गल्प)	२७८
१३	सेठ हुकमचन्दजीकी संस्थायें	३०१
१४	करो सब देशकी सेवा (कविता)	३१२
१५	मीठी मीठी चुटकियाँ	३१३
१६	विविधसमाचार	३१७

पत्रव्यवहार करनेका पता—

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, पो० गिरगांव-बम्बई ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Printed by G. N. Kulkarni at his Karnatak Press,

जीव दुःख न पावें ।

जैनियोंका यह महत् धर्म है, इसके साथ यह भी देखना चाहिये कि जीवात्मा जो उनके और अपने शरीरमें है वह भी कष्ट न पावे, इस लिये. आपका प्रथम कर्त्तव्य है कि रोग होते ही आराम करनेका यत्न करें, जिससे आत्माको कष्ट न हो । उपाय भी बहुतही सहज है । रोगके होते ही **डॉक्टर बर्म्मनकी** ४० प्रकारकी पेटेंट दवाओंका पूरा सूची-पत्र मंगाकर पढ़िये, यह सूचीपत्र विनामूल्य और बिना डाँकखर्चके घर बैठे पावेंगे, केवल एक पोष्ट कार्डपर अपना नाम और ठिकाना लिख भेजनेका कष्ट उठाना पड़ेगा । डाक्टर बर्म्मनकी प्रसिद्ध दवायें ३० वर्षसे सारे हिन्दुस्थानमें प्रचलित हैं, कठिन रोगोंकी सहज दवायें बनाई गई हैं । कम खर्चमें तुरन्त आराम करती हैं । आजही कार्ड लिखिये ।

डाक्टर एस० के० बर्म्मन ।

५ ताराचन्द दत्त स्ट्रीट कलकत्ता ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनहितैषी ।

श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम् ।
जीयात्सर्वज्ञनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥

१०वाँ भाग] माघ,फा०श्री०वी०नि०सं०२४४०। [४,५ वाँ अं.

बुकर टी० वाशिंगटन।

आफ्रिकाके मूलनिवासियोंकी नीग्रो (हबशी) नामक एक जाति है। सत्रहवीं सदीमें इस जातिके लोगोंको गुलाम बनाकर अमेरिकामें बेचनेका क्रम आरंभ हुआ। यह क्रम लगभग दो सदियोंतक जारी रहा। इतने समय तक दासत्वमें रहनेके कारण उन लोगोंकी कैसी अवनति हुई होगी, उन्हें कैसा भयंकर कष्ट सहन करना पड़ा होगा और उनकी स्थिति कैसी निकृष्ट हुई होगी, सो सभी अनुमान कर सकते हैं। इन लोगोंके साथ पशुओंसे भी बढ़कर बुरा वर्ताव किया जाता था। वे बुरी तरहसे मारे पीटे जाते थे, कुटुम्बियोंसे जुदा कर दिये जाते थे, और एक साधारण चीज़के समान चाहे जिसके हाथ बेच दिये जाते थे। यह अत्याचार सन् १८६२ तक जारी रहा। आखिर महात्मा लिंकनकी अनुकम्पा और आन्दोलनसे १८६३ के प्रारंभमें नीग्रो जातिके तीस चालीस लाख आदमियोंको स्वाधीनता मिल गई; गोरोंके समान ये काले लोग भी मनुष्य समझे जाने लगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बुकर टी० वाशिंगटनका जन्म सन् १८५२--५८ में इसी नीग्रो जातिके एक अत्यन्त गरीब दासकुलमें हुआ। जिस समय अमेरिकाके सब दास मुक्त किये गये उस समय उसकी अवस्था तीन चार वर्षकी थी। स्वतंत्र होनेपर उसके मातापिता अपने बच्चेको लेकर कुछ दूर माल्डन नामक गाँवको, नमककी खानमें मज़दूरी करनेके लिए, चले गये। वहाँ बुकरको भी दिनभर खानके भीतर नमककी भट्टीमें काम करना पड़ता था। यद्यपि बालक बुकरके मनमें लिखना पढ़ना सीखनेकी बहुत इच्छा थी, तथापि उसके पिताका ध्यान केवल कुटम्बके निर्वाहके लिए पैसा कमानेहीकी ओर था। ऐसी अवस्थामें शिक्षाप्राप्तिकी अनुकूलता नहीं हो सकती। इतनेमें उस गाँवके समीपही नीग्रो जातिकी शिक्षाके लिए एक छोटीसी पाठशाला खोली गई। इस पाठशालामें वह रातको जाकर पढ़ने लगा। मज़दूरीके कष्टप्रद जीवनमें भी वह अपनी ज्ञान बढ़ानेकी इच्छाको चरितार्थ करने लगा। सन् १८७२ में, वह हैम्पटन नगरके नार्मल स्कूलमें पढ़नेके लिए गया। बिना पैसेके अत्यन्त कष्ट सहन करके मज़दूरी करते हुए उसने हैम्पटनकी ५०० मीलकी लम्बी सफ़र तै की। स्कूलके अध्यक्ष बड़े ही परोपकारी थे। उनकी कृपासे बुकर चार वर्षमें ग्रेजुएट होगया। इस स्कूलमें वाशिंगटनने जिन बातोंकी शिक्षा पाई उनका सारांश यह है:—

१ "पुस्तकोंके द्वारा प्राप्त होनेवाली शिक्षासे वह शिक्षा अधिक उपयोगी और मूल्यवान् है जो सत्पुरुषोंके समागमसे मिलती है।"

२—"शिक्षाका अन्तिम हेतु परोपकार ही है। मनुष्यकी उन्नति केवल मानसिक शिक्षासे नहीं होती। शारीरिक श्रमकी भी बहुत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आवश्यकता है। श्रमसे न डरनेसे ही आत्मविश्वास और स्वाधीनता प्राप्त होती है। जो लोग दूसरोंकी उन्नतिके लिए यत्न करते हैं जो लोग दूसरोंकी सुखी करनेमें अपना समय व्यतीत करते हैं--वे ही सुखी और भाग्यवान् हैं।"

३--"शिक्षाकी सफलताके लिए ज्ञानेन्द्रिय, अन्तःकरण और कर्मेंद्रियकी एकता होनी चाहिए। जिस शिक्षासे श्रमके विषयमें घृणा उत्पन्न होती है उससे कोई लाभ नहीं होता।"

बुकर स्कूलमें पढ़ने और बोरडिंगमें रहनेका खर्च न सकता था, इस लिए वह स्कूलमें द्वारपालकी नोकरी करके और छुट्टीके दिनोंमें शहरमें मज़दूरी या नौकरी करके द्रव्यार्जन करता था। इस प्रकार स्वयं परिश्रम करके अपने आत्मविश्वासके बलपर उसने हैम्पटन स्कूलका क्रम पूरा किया। उसका नाम पदवीदानके समय माननीय विद्यार्थियोंमें दर्ज किया गया!

ग्रेजुएट होनेके बाद वाशिंगटन अपने घर लौट आया और वहाँ एक नीग्रो-स्कूलमें शिक्षकका काम करने लगा। कोई दोवर्ष तक यह काम करके वह शिक्षाविषयक ज्ञान प्राप्त करनेके लिए. वाशिंगटन शहरमें आठ महिने रहा। वहाँ उसने नीग्रो लोगोंकी सामाजिक दशाके सम्बन्धमें बहुतसा ज्ञान प्राप्त किया। इसके बाद उसने हैम्पटन स्कूलमें दो वर्षतक शिक्षकका काम किया और एक सुप्रसिद्ध शिक्षक हो गया।

सन् १८८१ में, अलाबामा रियासतके टस्केजी नामक ग्रामके निवासियोंने एक आदर्शस्कूल खोलना चाहा और इसके लिए उन्होंने मि० वाशिंगटनको अपने यहाँ बुला लिया। वहाँ पहुँचकर वाशिंगटनने दो महिने तक उस प्रदेशके निवासियोंकी सामाजिक और आर्थिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दशाकी अच्छी तरह जाँच की और इसके बाद उसने एक टूटीसी झोपड़ीमें पाठशाला खोल दी। इस पाठशालामें वाशिंगटन ही अकेले शिक्षक थे। लड़के और लड़कियाँ मिलकर सब ३० छात्र थे। वे सब व्याकरणके नियम और गणितके सिद्धान्त मुखाग्र जानते थे परन्तु उनका उपयोग करना न जानते थे। वे शारिरीकश्रम या मिहनत करनेको नीच काम समझते थे। ऐसी अवस्थामें, पहले पहल वाशिंगटनको अपने नूतन तत्त्वोंके अनुसार शिक्षा देनेमें बहूत कठिनाइयाँ हुई। उसने निश्चय किया कि इस प्रान्तके निवासियोंको कृषिसम्बन्धिनी शिक्षा दी जानी चाहिए और एक या दो ऐसे भी व्यवसायोंकी शिक्षा दी जानी चाहिए जिसके द्वारा लोग अपना उदरनिर्वाह अच्छी तरह कर सकें। उन्होंने ऐसी शिक्षा देनेका संकल्प किया जिससे विद्यार्थियोंके हृदयमें शारीरिक श्रम, व्यवसाय, मितव्यय और सुव्यवस्थाके विषयमें प्रेम उत्पन्न हो जाय; उनकी बुद्धि, नीति और धर्ममें सुधार हो जाय; और जब वे पाठशालासे निकलें तब अपने देशमें स्वतन्त्र रीतिसे उद्यम करके सुखप्राप्ति कर सकें तथा उत्तम नागरिक बन सकें। परन्तु ऐसी शिक्षा देनेके लिए वाशिंगटनके पास एक भी साधनकी अनुकूलता न थी। इतनेमें उन्हें मालूम हुआ कि टस्केजी गाँवके पास एक खेत बिकाऊ है। इसपर हैम्पटनके कोषाध्यक्षसे ७९० रुपया कर्ज लेकर उन्होंने वह जमीन मोल ले ली। उस खेतमें दो तीन पुरानी झोपड़ियाँ थीं। उन्हींमें वे अपने विद्यार्थियोंको पढ़ाने लगे। पहले पहल विद्यार्थी किसी प्रकारका शारीरिक काम न करना चाहते थे; परन्तु जब उन्होंने अपने हितचिन्तक शिक्षक वाशिंगटनको हाथमें कुदाली फावडा लेकर काम करते देखा तब वे बड़े उत्साहसे काम करने लगे।

जमीन मोल लेनेके बाद इमारत बनानेके लिए धनकी आवश्यकता हुई। तब वे गाँव गाँवमें भ्रमण करके द्रव्य एकट्ठा करने लगे। इस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

काममें उन्होंने बड़े बड़े कष्ट उठाये; परन्तु अन्तमें उनका प्रयत्न सफल हुए बिना न रहा। धन एकट्ठा करनेके विषयमें वाशिंगटनके नीचे लिखे अनुभवसिद्ध नियम बड़े कामके हैं:—

१. तुम अपने कार्यके विषयमें अनेक व्यक्तियों और संस्थाओंको अपना सारा हाल सुनाओ। यह हाल सुनानेमें तुम अपना गौरव समझो। तुम्हें जो कुछ कहना हो संक्षेपमें और साफ़ साफ़ कहो।

२. परिणाम या फलके विषयमें निश्चिन्त रहो।

३. इस बातपर विश्वास रक्खो कि संस्थाका अन्तरंग जितना ही स्वच्छ, पवित्र और उपयोगी होगा उतना ही अधिक उसको लोकाश्रय भी मिलेगा।

४. धनी और गरीब दोनोंसे सहायता माँगो। सच्ची सहानुभूति प्रकट करनेवाले सैकड़ों दाताओंके छोटे छोटे दानोंपर ही परोपकारके बड़े बड़े काम होते हैं।

५. चन्दा एकट्ठा करते समय दाताओंकी सहानुभूति, सहायता और उपदेश प्राप्त करनेका यत्न करो।

आत्मावलम्बन और परिश्रमसे धीरे धीरे टस्केजी संस्थाकी उन्नति होने लगी। सन् १८८१ में इस संस्थाकी थोड़ीसी जमीन, तीन इमारतें, एक शिक्षक और तीस विद्यार्थी थे। अब वहाँ १०६ इमारतें २,३५० एकड़ जमीन, और १५०० जानवर हैं। कृषिके उपयोगी यंत्रों और अन्य सामानकी कीमत ३८,८५, ६३९ रुपया है। वार्षिक आमदनी ९,००,००० रुपया है और कोषमें ६,४५००० रुपया जमा हैं। यह रकम घर घर भिक्षा माँगकर एकट्ठा की जाती है। इस समय संस्थाकी कुल जायदाद एक करोड़से अधिककी है जिसका प्रबन्ध पंचोंद्वारा किया जाता है। शिक्षकोंकी संख्या १८० और वि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्यार्थियोंकी १६४९ है। १००० एकड़ जमीनमें विद्यार्थियोंके श्रमसे खेती होती है। मानसिक शिक्षाके साथ साथ भिन्न भिन्न चालीस व्यवसायोंकी शिक्षा दी जाती है। इस संस्थामें शिक्षा पाकर लगभग ३००० आदमी दक्षिण अमेरिकाके भिन्न भिन्न स्थानोंमें स्वतन्त्र रीतिसे काम कर रहे हैं। ये लोग स्वयं अपने प्रयत्न और उदाहरणसे अपनी जातिके हज़ारों लोगोंको आधिभौतिक और आध्यात्मिक, धर्म और नीतिविषयक शिक्षा दे रहे हैं।

वाशिंगटनको टस्केजी संस्थाका जीव या प्राण समझना चाहिए। आपहीके कारण इस संस्थाने इतनी सफलता प्राप्त की है। आप पाठशालामें शिक्षकका काम भी करते हैं और संस्थाकी उन्नतिके लिए गाँव गाँव, शहर शहर, भ्रमण करके धन भी एकट्ठा करते हैं। उन्हें अपनी स्त्रीसे भी बहुत सहायता मिलती है। वे यह जाननेके लिए सदा उत्सुक रहते हैं कि अपनी संस्थाके विषयमें कौन क्या कहता है। इससे संस्थाके दोष मालूम हो जाते हैं और सुधार करनेका मौका मिलता है। आपका अपनी सफलताका रहस्य इस प्रकार बतलाते हैं:—

१. ईश्वरके राज्यमें किसी व्यक्ति या जातिकी सफलताकी एक ही कसौटी है। वह यह कि प्रत्येक प्रयत्न सत्कार्य करनेकी प्रेरणासे प्रेरित होकर करना चाहिए।

२. जिस स्थानमें हम रहें उस स्थानके निवासियोंकी शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आर्थिक उन्नति करनेका यत्न करना ही सबसे बड़ी बात है।

३. सत्कार्यप्रेरणाके अनुसार प्रयत्न करते समय किसी व्यक्ति, समाज या जातिकी निन्दा, द्वेष और मत्सर न करना चाहिए। जो काम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भ्रातृभाव, बन्धुप्रेम और आत्मीयतासे किया जाता है, वही सफल और सर्वोपयोगी होता है।

४. किसी कार्यका यत्न करनेमें आत्मविश्वास और स्वाधीनभावको न भूल जाना चाहिए। यदि एक या दो प्रयत्न निष्फल हो जायँ तो भी हताश न होना चाहिए। अपनी भूलोंकी ओर ध्यान देकर विचार-पूर्वक बार बार यत्न करते रहना चाहिए।

वाशिंगटनका यह विश्वास है कि योग्यता अथवा श्रेष्ठता किसी भी वर्ण, रंग और जातिके मनुष्यमें हो, वह छिप नहीं सकती। गुणोंकी परीक्षा और चाह हुए बिना नहीं रहती। अमेरिका निवासियोंने बुकर टी० वाशिंगटन जैसे सद्गुणी और परोपकारी कार्यकर्ताका उचित आदर करनेमें कोई बात उठा नहीं रक्खी। हारवार्ड–विश्वविद्यालयने आपको 'मास्टर आफ आर्ट्स' की सन्मानसूचक पदवी दी है। अमेरिकाके प्रेसीडेंटने आपकी संस्थामें पधारकर कहा था–"यह संस्था अनुकरणीय है। इसकी कीर्ति यहीं नहीं, किन्तु विदेशोंमें भी बढ़ रही है। इस संस्थाके विषयमें कुछ कहते समय मि० वाशिंगटनके उद्योग, साहस, प्रयत्न और बुद्धिसामर्थ्यके सम्बन्धमें कुछ कहे बिना रहा नहीं जाता। आप उत्तम अध्यापक हैं, उत्तम वक्ता हैं और सच्चे परोपकारी हैं। इन्हीं सद्गुणोंके कारण हम लोग आपका सम्मान करते हैं।"

सोचनेकी बात है कि जिस आदमीका जन्म दासत्वमें हुआ, जिसको अपने पिता या और पूर्वजोंका कुछ भी हाल मालूम नहीं, जिसको अपनी बाल्यावस्थामें स्वयं मजदूरी करके पेट भरना पड़ा, वही इस समय अपने आत्मविश्वास और आत्मबलके आधारपर कितने ऊँचे पद पर पहुँच गया है। वाशिंगटनका जीवनचरित पढकर कहना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पड़ता है कि "नर जो पै करनी करे तो नारायण ह्वै जाय।" प्रतिकूल दशामें भी मनुष्य अपनी जाति, समाज और देशकी कैसी और कितनी सेवा कर सकता है, यह बात इस चरितसे सीखने योग्य है। यद्यपि हमारे देशमें अमेरिकाके समान दासत्व नहीं है तथापि, वर्तमान समयमें, अस्पृश्य जातिके पाँच करोड़से अधिक मनुष्य सामाजिक दासत्वका कठिन दुःख भोग रहे हैं। क्या हमारे यहाँ, वाशिंगटनके समान, इन लोगोंका उद्धार करनेके लिए कभी कोई महात्मा उत्पन्न होगा? क्या इस देशकी शिक्षापद्धतिमें शारीरिक श्रमकी ओर ध्यान देकर कभी सुधार किया जायगा? जिन लोगोंने शिक्षाद्वारा अपने समाजकी सेवा करनेका निश्चय किया है क्या वे लोग उन तत्त्वोंपर उचित ध्यान देंगे जिनके आधारपर टस्केजीकी संस्था काम कर रही है?*

कन्या-निर्वाचन।

शायद ही कोई अभागा ऐसा हो, जिसे अपने जीवनमें कमसे कम एक बार किसी न किसीकी कन्याको देखनेके लिए न जाना पड़े। किन्तु वह क्या देखता है? कन्याका रंग गोरा है या काला, आँखे छोटी हैं या बड़ी, नाक ऊँची है या बैठी इत्यादि। अधिक हुआ तो कोई यह भी पूछ लेता है कि कन्या पढ़ना लिखना जानती है या नहीं? इसके उत्तरमें कन्याका पिता और कुछ नहीं तो यह अवश्य कह देता है कि लड़की घरका काम काज करना सीखी है। इसके बाद ही कन्या पसन्द हो जाने पर विवाहकी तैयारिया होने लगती हैं।

---

* फरवरीकी 'सरस्वती' के लेखका सार।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किन्तु वास्तवमें ही क्या कन्याका निर्वाचन करना इतना सहज है? हमें जानना चाहिए कि हिन्दूविवाहमें न तो छोड़छुट्टी या स्तीफेका रिवाज है और न कोर्टशिप है, इसी लिए पात्रीनिर्वाचन करते समय बहुत कुछ सोच विचार करनेकी जरूरत है। पहले देखना चाहिए कन्याका चरित्र, इसके बाद उसकी बुद्धि और अन्तमें उसका रूप। अब प्रश्न यह है कि एक छोटीसी अपरिचित बालिकाके चरित्र और बुद्धिका निर्णय कैसा किया जा सकता है? उत्तर यह है कि मनुष्यके चरित्रका और बुद्धिका निदर्शन उसके मुखकी आकृतिमें मौजूद रहता है। हमें चाहिए कि मुखकी आकृति देखकर लोगोंके स्वभावका निर्णय करना सीखें। किसीके उज्ज्वल नेत्रोंमे बुद्धिकी ज्योति दिखलाई देती है, किसीके नेत्रोंसे उसके स्नेहालु हृदयका पता लगता है, किसीकी चितवन और अधर देखते ही दुश्चरित्रताका सन्देह होता है और किसीकी उन्नत भौंहें, चौड़ा ललाट, तथा अधरोष्ठोंकी गठन देखते ही उसकी चिन्ताशीलता और दृढ़ प्रतिज्ञाका परिचय मिलता है। जो अपनी तीक्ष्ण बुद्धिकी सहायतासे मुख देखकर अन्तःकरणकी परीक्षा करनेमें सिद्धहस्त हैं, उन्हें ही कन्याको देखनेके लिए भेजना चाहिए—उन्हींसे कन्यानिर्वाचनका उद्देश्य सिद्ध हो सकता है।

एक उपाय और भी है, वह यह कि अपने सगे सम्बन्धियों या रिश्तेदारोंसे कन्याके सम्बन्धमें पूछताछ करना। यह ज़रूर है कि इस तरहकी पूछताछ करनेसे जो बातें मालूम होती हैं उनके झूठ और सच होनेका निर्णय सावधानीसे करना पड़ेगा। क्योंकि ऐसे बहुत लोग होते हैं जो निःस्वार्थ और निरपेक्ष भावसे ऐसी बातें नहीं बतलाते। परन्तु कन्याके पक्षी और विपक्षी दोनोंकी बातें मालूम करके बहुत कुछ निर्णय किया जा सकता है। एक बात और है,—अपरि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चिता कन्याकी अपेक्षा परिचिता कन्याका चुनाव करना बहुत सहज है। इस लिए पाठको, तुम्हें चाहिए कि अपने दरिद्र पड़ोसीकी जिस हँसमुख कन्याको तुम सुशीला और बुद्धिमती जानते हो, अन्यत्रकी अपरिचिता रूपवती और धनी कन्याका त्याग करके भी उसके साथ विवाह कर लो। ऐसा करनेसे तुम्हारा गृहस्थजीवन बहुत कुछ सुखमय हो जायगा।

तीसरा उपाय यह है कि कन्याके पिता, भाई, मामा आदिका स्वभाव जानकर उसके स्वभावका पता लगाना। कन्यामें बहुतसे गुण तो ऐसे होते हैं जो उसकी वंशपरम्परासे चले आये हैं और बहुतसे ऐसे होते हैं जो उसके पालनपोषण करनेवाले लोगोंके सहवास या प्रभावसे उत्पन्न हुए हैं। इसी कारण उसके कुटुम्बियोंका परिचय पाकर स्वयं उसका भी बहुत कुछ परिचय पाया जा सकता है। जिस घरके लोग मूर्ख और दुराचारी हैं उसे छोड़कर जिस घरके लोग सच्चरित्र और विद्वान् हैं उसी घरकी कन्या लाना चाहिए।

अब रूपके विषयमें विचार करना चाहिए। अँगरेजीमें एक कहावत है कि Health is beauty, अर्थात् स्वास्थ्य या निरोगता ही सौन्दर्य्य है। जहाँ नीरोगता नहीं वहाँ रूप नहीं। नीरोग शरीर और प्रफुल्ल मनके लिए अंगोंका लावण्य अवश्य ही प्रयोजनीय है, परन्तु उसका अधिक विचार करनेकी जरूरत नहीं है। यदि अधिक रूप हुआ तो अच्छा ही है और न हुआ तो कोई हानि भी नहीं है। हमें उस सौन्दर्यके समझनेका अभ्यास करना चाहिए जो मनकी अच्छी वृत्तियोंके प्रभावसे मुखकी आकृतिमें झलका करता है और जो केवल आँखोंकी विशालता और नाककी ऊँचाईपर अवलम्बित नहीं है। प्रसिद्ध लेखक बाबू बंकिमचन्द्रने अपने 'कुन्दनन्दिनी (विषवृक्ष)'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और 'कृष्णकान्तका बिल' नामक उपन्यासोंमें रूपज मोह और गुणज प्रेमका विश्लेषण करके दिखलाया है कि स्त्रीके रूपकी अपेक्षा गुणका मूल्य बहुत ही अधिक है।

इसके बाद कन्याकी शिक्षाके प्रबन्धमें विचार करना चाहिए। केवल पढ़ना जान लेनेसे शिक्षा नहीं होती। हमारी कन्यायें प्रायः ऐसे स्कूलोंमें शिक्षा पाती हैं जहाँ वे हमारी जातीय विशेषता और गौरवकी एक भी बात नहीं सीखतीं। जो अच्छी कन्यापाठशालायें या कन्याविद्यालय हैं वहाँ पढ़ाईका खर्च अधिक है इस लिए दरिद्रताके कारण लोग उनमें पढ़ानेका प्रबन्ध नहीं कर सकते। बहुत लोग यह सोच कर भी रह जाते हैं कि लड़कीके विवाहमें हज़ार दो हज़ार रुपये लगेंगे ही, तब उसको पढ़ानेके लिए ऊपरसे और अधिक खर्च क्यों करें? परन्तु अब उन्हें यह जाना लेना चाहिए कि आज कलके वर सुशिक्षित कन्याओंको बहुत पसन्द करते हैं इसलिए वे उन्हें मामूलीसे भी कम खर्च कराके खुशी खुशी लेनेके लिए राजी हो सकते हैं, और इस तरह केवल खर्चकी ओर नज़र रखकर भी विचार किया जाय तो कन्याकी शिक्षाके लिए खर्च करना फिजूल खर्च नहीं कहा जा सकता।

हमारी कन्याओंको किस प्रकारकी शिक्षा मिलनी चाहिए, इस विषयका विस्तारपूर्वक विवेचन करनेके लिए यहाँ स्थान नहीं है। तो भी संक्षेपतः यह कहा जा सकता सकता है कि स्कूलों और घरोंमें लड़कियोंको ऐसी शिक्षा मिलना चाहिए जिससे वे विवाह होनेके पश्चात् आदर्श गृहणियाँ बन सकें। एक ओर तो वे पति और दूसरे कुटुम्बी जनोंकी सेवा शुश्रूषा कर सकें और दूसरी ओर अपनी सन्तानको वैज्ञानिक प्रणालीके अनुसार लालित पालित और शिक्षित कर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सकें। इसके लिए उन्हें किसी चतुर स्त्रीसे घरके काम काज अच्छी तरहसे सीखना चाहिए, रक्षकोंके पास या पुस्तक समाचारपत्रोंके द्वारा यह जानना चाहिए कि आजकलके युवकोंका चिन्ताप्रवाह किस प्रणालीसे बह रहा है और किस ओर जा रहा है, आरोग्यविज्ञान और शिशु-शिक्षाविज्ञानकी सहज सरल पुस्तकें पढ़ना चाहिए और पुराणादि धर्मशास्त्रोंके स्वाध्याय और व्रतपालनके द्वारा धर्मनिष्ठ होना चाहिए। इस प्रकारकी सुशिक्षिता कन्याओंके साथ विवाह करनेके लिए किसी प्रकारके आर्थिक लाभकी अपेक्षा रक्खे बिना बहुतसे शिक्षित वर उत्सुक होंगे, इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं है। यह बड़े ही दुःखकी बात है कि हम लोगोंमें बहुत ही कम लोग ऐसे है जो स्त्रीशिक्षाके सम्बन्धमें विचार करते हैं और उसके लिए कुछ यत्न करते हैं। इस समय उपयोगी पुस्तकें रचने और आदर्श कन्याविद्यालय स्थापित करनेके लिए प्रत्येक देशहितैषी व्यक्तिको उद्योग करना चाहिए।

कन्याकी परीक्षा कर चुकनेपर उसके वंशका परिचय प्राप्त करना आवश्यक है। इस विषयमें प्राचीन विद्वानोंकी सम्मति सर्वथा आदरणीय है। जिस वंशमें उन्माद, मूर्च्छा आदि वंशानुक्रमिक रोग हैं, जो वंश मूर्ख और अधार्मिक है, उसमें धन होनेपर भी कभी विवाह-सम्बन्ध न करना चाहिए। जिस वंशमें अनेक पंडितों और धर्मात्माओंने जन्म लिया है, विवाहके लिए वही वंश अच्छा और कुलीन है।

अन्तमें कन्यानिर्वाचनमें जो एक बड़ा भारी असुभीता है, उसका उल्लेख कर देना हम यहाँपर बहुत आवश्यक समझते हैं। इस समय हमारे देशमें चारों वर्णोंके भीतर इतनी अधिक जातियाँ और उपजातियाँ बन गई हैं कि उनकी गणना करना कठिन हो गया है। हमारे जैन-समाजमें भी जातियों और उपजातियोंकी कमी नहीं है और इससे प्रत्येक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाति उपजातिकी संख्या बहुत ही कम हो गई है। एक उपजाति विवाहके लिए अपने ही भीतर सीमाबद्ध रहती है दूसरी उपजाति या जातिसे वह सम्बन्ध नहीं कर सकती और इससे बहुत स्थानोंमें न तो योग्य वर मिल सकते हैं और न योग्य कन्यायें ही मिल सकती हैं। लाचार बेजोड़ या अयोग्य विवाहोंसे गृहस्थजीवन अतिशय दुःख-पूर्ण बनाया जाता है। इसके सिवा बहुतसे वर-कन्याओंका रक्तसम्बन्ध अतिशय निकटका हो जाता है और इससे प्राचीन ऋषियोंकी आज्ञाका पालन नहीं हो सकता है। शरीरशास्त्रज्ञ विद्वानोंका सिद्धान्त है कि रक्तसम्बन्ध जितना ही दूरका होगा उतना ही अच्छा होगा। निकटका रक्तसम्बन्ध वंशवृद्धिका बहुत बड़ा घातक है। इस विपत्तिसे उद्धार पानेके लिए आवश्यक है कि उपजातियों और जातियोंका विवाहसम्बन्ध जारी कर दिया जाय। इसके द्वारा समाजका बहुत बड़ा उपकार होगा। *

आवरण।

मनुष्यके पदतल (तलुवे) ऐसी खूबीसे बनाये गये थे कि खड़े होकर पृथ्वीपर चलनेके लिए इससे अच्छी व्यवस्था और हो नहीं सकती थी। परन्तु जिस दिनसे जूतोंका पहनना शुरू हुआ उस दिनसे पदतलोंको धूल और मिट्टीसे बचानेकी चेष्टाने उनका प्रयोजन ही मिट्टी कर दिया। जिस गरजसे वे बनाये गये थे, उसे ही लोग भूल गये। इतने दिनोंतक पदतल सहज ही हमारा भार वहन करते थे, परन्तु अब पदतलोंका भार स्वयं हम ही वहन करने लगे हैं। क्योंकि इस समय यदि हमें खाली पैर बिना जूतोंके चलना पड़ता है

* एक बंगला लेखका परिवर्तित अनुवाद।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तो पदतल हमारे सहायक न बनकर उलटे पदपद पर दुःखके कारण हो जाते हैं। केवल इतना ही नहीं, उनके लिए हमें सर्वदा ही सतर्क और सावधान रहना पड़ता है। क्योंकि यदि हम मनको अपने पदतलोंकी सेवामें नियुक्त न रक्खें तो आपत्ति उठानी पड़े। यदि उनमें थोड़ीसी सर्दी लग जाय तो छींके आने लगें और पानी लग जाय तो ज्वर चढ़ने लगे। तब लाचार होकर मोजे, स्लीपर, जूते, बूट आदि नाना उपचारोंसे हम इस उपाङ्गकी पूजा करते हैं और इसे सारे कर्मोंसे विमुक्त-कर देते हैं अर्थात् पैरोंको किसी कामका नहीं रखते। ईश्वरने हमें यथेष्ट नहीं दिया, इसलिए मानो हम उसके प्रति यह एक प्रकारका उलहना देते हैं—यह बतलाते हैं कि तुम्हारे दिये हुए पदतल हमारी उक्त बाह्य पूजासामग्रीके बिना किसी कामके नहीं।

विश्वजगत्, और अपनी स्वाधीन शक्तिके बीच, सुविधाओंके प्रलोभनसे हमने इसी तरह न जाने कितनी 'चीनकी दीवालें' खड़ी कर दी हैं। इस तरह संस्कार और अभ्यासपरम्परासे हम उन कृत्रिम आश्रयोंको सुविधा और अपनी स्वाभाविक शक्तियोंको असुविधा समझने लगे हैं। कपड़े पहन पहन कर हमने उन्हें इस पदपर पहुँचा दिया है कि कपड़े हमारे चमड़ेसे भी बड़े हो गये हैं! अब हम विधाताके बनाये हुए इस आश्चर्यमय सुन्दर अनावृत्त (नग्न) शरीरकी अवज्ञा या अवहेलना करने लगे हैं।

किन्तु जब हम पुराने समयपर दृष्टि डालते हैं तो मालूम होता है कि कपड़ों और जूतोंको एक अन्धेकी मूठके समान पकड़ रखना हमारे इस गर्मदेशमें नहीं था। एक तो सहज ही हम बहुत कम कपड़ोंका उपयोग करते थे; और फिर बचपनमें हमारे बच्चे बहुत समय तक कपड़े जूते न पहनकर अपने नग्न शरीरके साथ नग्न जगतका योग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बिना संकोचके बहुत अच्छी तरह किया करते थे। परन्तु इस समय हमने अँगरेज़ोंकी नकल करके शिशुओंके शरीर देखकर भी लज्जित होना शुरू कर दिया है। केवल विलायतसे लौटे हुए ही नहीं, शहरोंके रहनेवाले साधारण गृहस्थ भी आजकल अपने बच्चोंको किसी पाहुनेके सामने नंगा उघाड़ा देखकर संकुचित होते हैं और इस तरह बच्चोंको भी निजकी देहके सम्बन्धमें संकुचित कर डालते हैं।

ऐसा करनेसे हमारे देशके शिक्षितोंमें एक प्रकारकी बनावटी लज्जाकी सृष्टि हो रही है। जिस उमरतक शरीरके सम्बन्धमें किसी प्रकारकी कुण्ठा या लज्जा नहीं होनी चाहिए, उस उमरको अब हम पार नहीं कर सकते हैं—अब हमारे लिए मनुष्य, जन्मसे लेकर मरणतक लज्जाका विषय बनता जाता है। यदि कुछ समय तक और भी हमारी यही दशा रही, तो एक दिन ऐसा आ जायगा कि हम चौकी टेबिलोंके पायोंको भी बिना ढका या नग्न देखकर लाल पीले होने लगेंगे!

यदि यह केवल लज्जाकी ही बात होती, तो मैं आक्षेप नहीं करता। किन्तु इससे पृथ्वीपर दुःखकी वृद्धि होती है। हमारी लज्जाके कारण बच्चे व्यर्थ ही कष्ट पाते हैं। इस समय वे प्रकृतिके ऋणी हैं, सभ्यताका ऋण लेना उन्हें पसन्द ही नहीं। परन्तु बेचारे क्या करें; रोनेके सिवा उनके पास और कोई बल नहीं। अपने पालनपोषण करनेवालोंकी लज्जा निवारण करनेके लिए और उनके गौरवको बढ़ानेके लिए उन्हें जरी और रेशमके कपड़ोंसे घिरकर वायुके करस्पर्श और प्रकाशके चुम्बनसे वंचित होना पड़ता है। इससे वे रोकर और चिल्लाकर बधिर विचारकके कानोंके समीप शिशुजीवनका अभियोग उपस्थित किया करते हैं। परन्तु बेचारे यह नहीं जानते कि पितामातामें एक्जिक्यूटिव् (कारगुज़ार) और जुडीशल् (अदालती) एकत्र हो जानेसे उनका सारा आन्दोलन और आवेदन व्यर्थ हो जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इससे पालनपोषण करनेवालोंको भी दुःख भोगना पडता है। क्यों कि अकाल लज्जाकी सृष्टि होनेसे अनावश्यक उपद्रव बढ़ जाते हैं। जो सभ्य जन नहीं हैं केवल सरल सीधे सादे बच्चे हैं उन पर भी निरर्थक सभ्यता लादकर धनका अपव्यय करना शुरू कर दिया जाता है। नग्नता या नंगेपनमें एक बड़ी भारी खूबी यह है कि उसमें प्रतियोगिता या बदाबदी नहीं है। किन्तु कपड़ोंमें यह बात नहीं है। उनसे इच्छाओंकी मात्रायें और आडम्बरोंके आयोजन तिल तिल करके बढ़ते ही चले जाते है। बच्चोंका नवनीत-कोमल, सुन्दर शरीर धनाभिमान प्रकाशित करनेका एक उपलक्ष्य बन जाता है और सभ्यताका बोझा निष्कारण अपरिमित और असह्य होता जाता है।

इस विषयमें अब हम डाक्टरी और अर्थनीतिकी युक्तियाँ और नहीं देना चाहते। क्योंकि यह लेख हम शिक्षाके सम्बन्धमें लिख रहे हैं। मिट्टी-जल-वायु-प्रकाशके साथ पूरा पूरा सम्बन्ध न होनेसे शरीरकी शिक्षा पूर्ण नहीं हो सकती। हमारा मुख जाड़ोंमें और गर्मियोंमें सर्वदा ही खुला रहता है, इसीसे हमारे मुखका चमड़ा अन्य सारे शरीरके चमड़ेकी अपेक्षा अधिक शिक्षित है—अर्थात् वह (मुख) इस बातको अच्छी तरहसे जानता है कि बाहरके साथ अपना सामञ्जस्य बनाये रखनेके लिए किस तरह चलना चाहिए। वह अपने आप ही सम्पूर्ण है—उसे कृत्रिम आश्रय लेनेकी आवश्यकता नहीं।

यहाँ हम यह कह देना आवश्यक समझते हैं कि हम मेंचेस्टरके व्यापारियोंको हानि पहुँचानेके लिए अँगरेजोंके राज्यमें नग्नताका प्रचार नहीं करना चाहते हैं। हमारा मतलब यह है कि शिक्षा देनेकी एक खास अवस्था है—और वह बाल्यकाल है। उस समय शरीर और मनको परिणत परिपक्व करनेके लिए प्रकृति देवीके साथ हमारा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बाधारहित–बेरोक संयोग होना चाहिए। वह ढँकने मूँदनेका समय नहीं है–उस समय सभ्यताकी ज़रा भी ज़रूरत नहीं। किन्तु उस उमरसे ही बच्चोंके साथ सभ्यताकी लड़ाई छिड़ी देखकर बड़ा ही दुःख होता है। बच्चा कपड़ा फेंक देना चाहता है; परन्तु हम उसे ढँके रखना चाहते हैं। वास्तवमें देखा जाय तो यह झगड़ा बच्चेके साथ नहीं किन्तु प्रकृतिजननीके साथ छिड़ा है। प्रकृतिमें एक बहुत पुराना ज्ञान मौजूद है। जिस समय कोई बच्चेको कपड़ा पहनाया जाता है उस समय प्रकृतिका वही ज्ञान उस बच्चेके रोनेके भीतरसे प्रतिवाद करने लगता है। हम सब उस प्रकृतिजननीके ही तो पुत्र हैं।

चाहे जैसे हो, सभ्यताके साथ थोड़ेसे अलगावकी ज़रूरत है। बच्चोंको कमसे कम सात वर्षकी अवस्थातक सभ्यताके इलाकेसे जुदा रखना ही चाहिए। ये सात वर्ष हमने बहुत ही कम करके कहे हैं। इस अवस्थातक बच्चोंको न सज्जा (साज शृंगार) की ज़रूरत है और न लज्जाकी। इस समय तक वर्बरता या जंगलीपनकी शिक्षा ही बहुत आवश्यक शिक्षा है–यह प्रत्येक बच्चेको मिलना ही चाहिए। प्रकृति देवीको यह शिक्षा बे-रोक टोक देने दो। इस समय भी यदि बच्चे पृथिवी माताकी गोदमें गिरकर धूल मिट्टीसे अपने शरीरको न रँगेंगे, तो उन बेचारोंको यह सौभाग्य और कब प्राप्त होगा? वे यदि इस उमरमें भी झाड़ोंपर चढ़कर फल न तोड़ सके, तो हतभागे सभ्यताकी लोकलज्जामें उलझकर झाड़ पेड़ों और फल फूलोंसे जीवन भर भी हार्दिक सख्य न जोड़ सकेंगे। इस समय वायु, आकाश, मैदान, वृक्ष, पत्र, फूल आदिकी ओर उनके शरीर और मनका जो एक स्वाभाविक खिंचाव हुआ करता है–सब ही स्थानोंसे उनके पास जो निमंत्रण आया करता है, उसके बीच यदि कपड़े लत्तोंकी, द्वार दीवालोंकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रुकावट डाल दी जाय तो बच्चोंका सारा उद्यम रुक जाय और सड़ने लगे। क्योंकि जो उत्साह खुला हुआ क्षेत्र पाकर स्वास्थ्यकर होता है, वही बद्ध होकर दूषित हो जाता है।

ज्यों ही बच्चेको कपड़े पहनाये जाते हैं त्यों ही उसे कपड़ोंके विषयमें सावधान रखना पड़ता है--समझा देना पड़ता है कि कपड़े मैले न होने पावें। बच्चेका भी कुछ मूल्य है या नहीं, यह बात तो हम अकसर भूल जाते हैं; परन्तु दर्जीका हिसाब मुश्किलसे भूलते हैं। यह कपड़ा फट गया, यह मैला हो गया, उस दिन इतने दाम देकर इस सुन्दर अँगरखेको बनवाया था, अभागा न जाने कहाँसे इसमें स्याहीके दाग लगा लाया, इस तरह बीसों बातें कहकर बच्चेको खूब चपतें लगाई जाती हैं और कान ऐंठे जाते हैं। इस तरहकी शास्ति या दंडसे उसे सिखाया जाता है कि शिशुजीवनके सारे खेलों और सारे आनन्दोंकी अपेक्षा कपड़ोंकी कितनी अधिक खातिर करनी चाहिए-खेल कूद और आनन्दसे कपड़ोंका मूल्य कितना अधिक है। हमारी समझमें नहीं आता कि जिन कपड़ोंकी बच्चोंको कुछ भी आवश्यकता नहीं, उन कपड़ोंके लिए बेचारे इस तरह उत्तरदाता क्यों बनाये जाते हैं? और ईश्वरने जिन बेचारोंके लिए बाहरसे अनेक अबाध सुखोंका आयोजन कर रक्खा है और भीतर मनमें अव्याहत सुखोंके भोगनेका सामर्थ्य दिया है, उनके जीवनारम्भके सरल आनन्दपूर्ण क्षेत्रको न कुछ-अतिशय अकिंचित्कर पोशाककी ममतासे इस तरह व्यर्थ ही विघ्नसङ्कुल बनानेकी क्या ज़रूरत है? क्या यह मनुष्य सब ही जगह अपनी क्षुद्रबुद्धि और तुच्छ प्रवृत्तिका शासन फैलाकर कहीं भी स्वाभाविक सुखशान्तिके लिए स्थान न रहने देगा? यह एक बड़ी भारी ज़बर्दस्तीकी युक्ति है कि जो हमें अच्छा लगता है वह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चाहे जिस तरह हो दूसरोंको भी अच्छा लगना चाहिए। मालूम होता है कि हमने इस ज़बर्दस्तीकी युक्तिसे चारों ओर केवल दुःख विस्तार करनेकी ही ठान ली है।

जो हो, प्रकृतिके द्वारा जो कुछ किया जाता है वह हमारे द्वारा किसी भी तरह नहीं हो सकता। इस लिए इस प्रकारका हट नहीं करके कि 'मनुष्यकी सारी भलाइयाँ केवल हम बुद्धिमान लोग ही करेंगे' हमें प्रकृतिदेवीके लिए भी थोड़ासा मार्ग छोड़ देना उचित है। प्रारंभमें ही ऐसा करनेसे अर्थात् बालकोंको प्रकृतिके स्वाधीन राज्यमें विचरण करने देनेसे सभ्यताके साथ कोई विरोध खड़ा नहीं होता और दीवाल भी पक्की हो जाती है। ऐसा न समझ लेना चाहिए कि इस प्राकृतिक शिक्षासे केवल बच्चोंको ही लाभ होता है। नहीं, इससे हमारा भी उपकार होता है। हम अपने ही हाथोंसे सब कुछ आच्छन्न कर डालते हैं और धीरे धीरे उसीसे अपने अभ्यासको इतना विकृत बना लेते हैं कि फिर स्वाभाविकको किसी प्रकार भी सहज दृष्टिसे नहीं देख सकते। हम यदि मनुष्यके सुन्दर शरीरको निर्मल बाल्यावस्थासे ही नग्न देखनेका निरन्तर अभ्यास न रक्खेंगे तो हमारी भी वही दशा होगी जो विलायतके लोगोंकी हो गई है। उनके मनमें शरीरके सम्बन्धमें एक विकृत संस्कार जड़ पकड़ गया है और वास्तवमें वह संस्कार ही बर्बर और लज्जाके योग्य है; बच्चोंको नग्न रखना बर्बरता या लज्जाका विषय नहीं है।

हम मानते हैं कि सभ्य समाजमें कपड़ेलत्तोंकी और जूते मोजोंकी भी आवश्यकता है और इसीसे इनकी सृष्टि हुई है— किन्तु यह याद रखना चाहिए कि इन सब कृत्रिम आश्रयों या उपकरणोंको अपना स्वामी बना डालना और उनके कारण आपको कुण्ठित या संकुचित कर रखना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कभी अच्छा नहीं हो सकता। इस विपरीत व्यापारसे कभी भलाई नहीं हो सकती। कमसे कम भारतवर्षका जल वायु तो ऐसा अच्छा है कि हमें इन सब उपकरणोंके चिर-दास बननेकी कोई ज़रूरत नहीं है। पहले भी कभी हम इनके दास नहीं थे; हम आवश्यकता पड़नेपर कभी इनको काममें भी लाते थे और कभी इन्हें खोल कर भी रख देते थे। हम जानते थे कि वेश भूषा (कपड़े लत्ते पहनना, साज शृंगार करना) एक नैमित्तिक वस्तु है—इससे अधिक इसमें और कोई महत्त्व नहीं है कि यह कभी कभी हमारे प्रयोजनको साध देता है, अर्थात् हमें शीतादिके कष्टसे बचा देता है। बस, इसका हम पर इतना ही स्वामित्व था। इसी कारण हम खुला शरीर रखनेमें लज्जित नहीं होते थे और दूसरोंका भी खुला शरीर देखकर अप्रसन्न न होते थे। इस विषयमें विधाताके प्रसादसे यूरोप निवासियोंकी अपेक्षा हमें विशेष सुविधा थी। हमने आवश्यकतानुसार लज्जाकी रक्षा भी की है और अनावश्यक अतिलज्जाके द्वारा अपनेको भारग्रस्त होनेसे भी बचाया है।

यह बात स्मरण रखना चाहिए कि अतिलज्जा लज्जाको नष्ट कर देती है। कारण, अतिलज्जा ही वास्तवमें लज्जाजनक है। इसके सिवा जब मनुष्य 'अति' का बन्धन बिलकुल ही छोड़ देता है अर्थात् प्रत्येक बातमें जियादती करने लगता है तब उसे और किसी तरहका विचार नहीं रहता। यह हम मानते हैं कि हमारे देशकी स्त्रियाँ अधिक कपड़ा नहीं पहनती हैं किन्तु वे (विलायती मेमोंके समान) जान बूझ-कर सचेष्ट भावसे छाती और पीठके आवरणका बारह आना हिस्सा खुला रखके पुरुषोंके सामने कभी नहीं जा सकतीं। अवश्य ही हम लज्जा नहीं करते हैं; परन्तु साथ ही लज्जापर इस तरहका आघात भी नहीं करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रबन्धमें लज्जातत्त्वकी मीमांसा करना हमारा उद्देश्य नहीं है, इस लिए इन बातोंको जाने दीजिए। हमने अभी तक जो कुछ कहा है उसका अभिप्राय केवल इतना ही है कि मनुष्यकी सभ्यताको कृत्रिमकी सहायता लेनी ही पड़ती है। इस लिए इस ओर हमें सर्वदा ही दृष्टि रखनी चाहिए कि कहीं अभ्यासदोषसे यह 'कृत्रिम' हमारा स्वामी न बन बैठे और हम अपनी गढ़ी या तैयार की हुई सामग्रीकी अपेक्षा अपने मस्तकको सर्वदा ही ऊँचा रख सकें। हमारे रुपये जब हमको ही खरीद बैठें, हमारी भाषा जब हमारे ही भावोंकी नाकमें नकेल डालकर उन्हें घुमा मारे, हमारा साज-शृंगार जब हमारे अंगोंको ही अनावश्यक करनेके लिए जोर लगावे, और हमारे 'नित्य' जब 'नैमित्तिकों' के सामने अपराधियोंके समान कुंठित हो रहें तब इस सभ्यताके सत्यानाशी अंकुशको ज़रा भी न मानकर हमें यह बात कहनी ही होगी कि यह ठीक नहीं हो रहा है। भारतवासियोंका खुला शरीर ज़रा भी लज्जाका कारण नहीं है; जिन सभ्यजनोंके नेत्रोंमें यह खटकता है उनके नेत्र ही स्वच्छ नहीं हैं—उनमें विकार हो गया है।

इस समय कपड़ों; जूतों और मोजोंका जैसा सम्बन्ध शरीरके साथ बढ़ गया है उसी तरह पुस्तकोंका सम्बन्ध हमारे मनके साथ बढ़ता जा रहा है। अब हम लोग इस बातको भूलते जा रहे हैं कि पुस्तक पढ़ना शिक्षाका केवल एक सुविधाजनक सहारा भर है और पुस्तक पढ़नेको ही शिक्षा या शिक्षाका एक मात्र उपाय समझने लगे हैं। इस विषयमें हमारे इस संस्कारको हटाना बहुत ही कठिन हो गया है।

यह ठीक है कि आजकल शिक्षासम्बन्धी जो उल्टी गंगा बह रही है उसके कारण हमें बचपनहीसे पुस्तकें रटना पड़ती हैं; परन्तु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वास्तवमें पुस्तकोंमेंसे ज्ञानसञ्चय करना हमारे मनका स्वाभाविक धर्म नहीं है। पदार्थको प्रत्यक्ष देख सुनकर, हिला डुलाकर, परीक्षा करके ही वास्तविक ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है और यही हमारे स्वभावका विधान है। दूसरोंका जाना हुआ या परीक्षा किया हुआ ज्ञान भी यदि हम उनके मुँहसे सुनते हैं (न कि पुस्तकोंमेंसे पढ़ते हैं) तो हमारा मन उसे सहज ही स्वीकार कर लेता है। क्योंकि मुँहकी बात केवल 'बात' ही नहीं है, वह 'मुँहकी बात' है। उसके साथ प्राण है; मुख और नेत्रोंकी भाव-भंगी है, कण्ठका तीव्र मन्द स्वर है और हाथोंके इशारे हैं। इन सबके द्वारा जो भाषा कानोंसे सुनी जाती है वह सङ्गीत और आकारमें परिणत होकर नेत्र और कान दोनोंकी ज्ञेय या ग्रहणसामग्री बन जाती है। केवल यही नहीं, यदि हमको मालूम हो जाय कि कोई मनुष्य अपने मनकी सामग्री हमें प्रसन्न और ताजा मनसे दे रहा है—वह सिर्फ़ एक पुस्तक ही नहीं पढ़ता जा रहा है, तो मनके साथ मनका एक प्रकारसे प्रत्यक्ष मिलन हो जाता है और इससे ज्ञानके बीच रसका संचार होने लगता है।

किन्तु दुर्भाग्यवश, हमारे मास्टर पुस्तक पढ़नेके केवल एक उपलक्ष्य हैं और हम पुस्तक पढ़नेके केवल एक उपसर्ग। अर्थात् हम जो पुस्तकें पढ़ते हैं उनमें मास्टर केवल थोड़ीसी सहायता देते हैं और पुस्तक पढ़नेमें हमारा अन्तःकरण केवल उतना ही काम करता है जितना उपसर्ग किसी शब्दके साथ मिलकर। इसका फल यह हुआ है कि जिस तरह हमारा शरीर कृत्रिम पदार्थोंकी ओटमें पड़कर पृथ्वीके साक्षात् संयोगसे वंचित हो बैठा है, और वंचित होकर इतना अभ्यस्त हो गया है कि उस संयोगको हम आज क्लेशकर और लज्जाकर समझने लगे हैं, उसी तरह हमारा मन, जगतके साथ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्यक्ष संयोग होनेसे जो स्वाद आता है उसकी शक्तिको एक तरहसे खो बैठा है। अर्थात् हमें सब पदार्थोंको पुस्तकके द्वारा जाननेका एक अतिशय अस्वाभाविक अभ्यास पड़ गया हैं। जो पदार्थ हमारे बिलकुल ही पास है उसे भी यदि हम जानना चाहते है तो पुस्तकके मुहँकी ओर ताकते हैं। एक नबाबसाहबके विषयमें सुनते हैं कि वे एक बार जूता पहना देनेके लिए नौकरके आनेकी राह देखने लगे और इतनेमें दुश्मनके हाथों कैद हो गये। पुस्तककी विद्याके फेरमें पड़कर हमारी मानसिक नबाबी भी इसी तरह बहुत ज़ियादा बढ़ गई है। तुच्छसे तुच्छ विषयके लिए भी यदि पुस्तक नहीं होती है तो हमारे मनको कोई आश्रय नहीं मिलता। और बड़े भारी आश्चर्यकी बात तो यह है कि इस विकृत संस्कारके दोषसे हममें जो यह नबाबी आ गई है उसे हम लज्जाकर नहीं किन्तु उलटी गौरवजनक समझते हैं—पुस्तकोंके द्वारा जानी हुई बातोंसे ही हम आपको पण्डित शिरोमणि मानकर गर्व करते हैं। इसका अर्थ यह है कि हम जगतको मनसे नहीं किन्तु पुस्तकोंसे टटोलते हैं!

इस बातको हम मानते हैं कि मनुष्यके ज्ञान और भावोंको सञ्चित कर रखनेके लिए पुस्तक जैसी सुभीतेकी चीज़ और कोई नहीं है। पुस्तकोंकी कृपासे ही आज हम मनुष्यजातिके हज़ारों वर्ष पहलेके ज्ञान और भावोंको हृदयस्थ कर सकते हैं। किन्तु यदि हम इस सुभीतेके द्वारा अपने मनकी स्वाभाविक शक्तिको बिलकुल ही ढँक डालें तो इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हमारी बुद्धि 'बाबू' बन जायगी। इस 'बाबू' नामक जीवसे पाठक अवश्य ही परिचित होगें। जो जीव नौकर चाकर, माल असबाब, चीज़ वस्तुके सुभीतेके अधीन रहता है उसे 'बाबू' कहते हैं। बाबू लोग यह नहीं समझते कि अपनी शक्ति या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चेष्टाका प्रयोग करनेमें जो कष्ट और जो कठिनाई भोगनी पड़ती है उसी-से ही हमें वास्तविक सुख होता है और उसीसे, हम जो कुछ प्राप्त करते हैं, वह कीमती हो जाता है। पुस्तकपाठी बाबूपनेमें भी, वह आनन्द और वह सार्थकता नहीं रहती जो ज्ञानको स्वयं अपनी चेष्टासे प्राप्त करनेमें या कठिन परिश्रमसे सत्यकी खोज करनेमें है। पुस्तकोंपर ही सारा दारोमदार रखनेसे धीरे धीरे मनकी स्वाधीन शक्ति नष्ट हो जाती है और उस शक्तिके संचालन करनेमें जो सुख है वह भी नहीं रहता, बल्कि यदि कभी उसको संचालन करनेकी आवश्यकता होती है तो उलटा कष्ट होता है।

इस तरह जब हमारा मन बचपनसे ही पुस्तक पढ़नेके आवरणसे ढँक जाता है तब हम मनुष्योंके साथ सहज भावसे मिलने जुड़नेकी शक्तिको खो बैठते हैं। जो दशा हमारे कपड़ोंसे ढँक हुए शरीरकी हुई है—वह उघड़ा होनेमें संकोच करने लगा है वही दशा हमारे पुस्तकावृत मनकी भी हो गई है—वह भी बाहर नहीं आना चाहता। इस बातको हम प्रतिदिन ही देखते हैं कि सर्व साधारणका सहज भावसे आदर सत्कार करना, उनके साथ आत्मभावसे मिल जुलकर बातचीत करना आजकलके शिक्षितोंके लिए दिनपर दिन कठिन होता जाता है। वे पुस्तकके लोगोंको पहचानते हैं परन्तु पृथिवीके लोगोंको नहीं पहचानते;—उनके लिए पुस्तकके लोग तो मनोहर हैं परन्तु पृथिवीके लोग श्रान्तिकर हैं। वे बड़ी बड़ी सभाओंमें व्याख्यान दे सकते हैं परन्तु सर्वसाधारणके साथ बातचीत नहीं कर सकते। बड़ी बड़ी पुस्तकोंकी आलोचना तो कर सकते हैं परन्तु उनके मुँहसे सहज बोलचाल—साधारण बातचीत भी अच्छी तरह बाहर नहीं निकलना चाहती। इन सब बातोंसे कहना पड़ता है कि दुर्भाग्यवश ये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लोग पण्डित तो हो गये हैं किन्तु सच्चे मनुष्यत्वको खो बैठे हैं। यदि मनुष्योंके साथ मनुष्यभावसे हमारी गतिविधि या मेलजोल होता रहे, तो घरद्वारकी वार्ता, सुखदुःखकी जानकारी, बालबच्चोंकी खबर, प्रतिदिनकी अलोचना आदि सब बातें हमारे लिए बहुत ही सहज और सुखकर मालूम हों। परन्तु हमारी दशा इससे उलटी है। हमारे लिए ये सब बातें कठिन और कष्टकर हैं। पुस्तकोंके मनुष्य गढ़ी–गढ़ाई बातें ही बोल सकते हैं और इसलिए वे जिन सब बातोंमें हँसते हैं वे सचमुच ही हास्यरसात्मक होती हैं और जिन बातोंमें रोते हैं वे अतिशय करुण होती हैं। किन्तु जो वास्तविक मनुष्य हैं उनका विशेष झुकाव रक्तमांसमय प्रत्यक्ष मनुष्योंकी ओर होता है और इसीलिए उनकी बातें, उनका हँसना–रोना पहले नम्बरका नहीं होता। और यह ठीक भी है। वास्तवमें उनका, वे स्वभावतः जो हैं उसकी अपेक्षा अधिक होनेका आयोजन न करना ही अच्छा है। मनुष्य यदि पुस्तक बननेकी चेष्टा करेगा, तो इससे मनुष्यका स्वाद नष्ट हो जायगा–उसमें मनुष्यत्व न रहेगा।

चाणक्य पण्डित कह गये हैं कि जो विद्याविहीन हैं वे "सभा-मध्ये न शोभन्ते" अर्थात् सभाके बीच शोभा नहीं पाते। किन्तु सभा तो सदा नहीं रहती--समय पूरा हो जानेपर सभापतिको धन्यवाद देकर उसे तो विसर्जन करना ही पड़ती है। कठिनाई यह है कि हमारे देशके आजकलके विद्वान् सभाके बाहर "न शोभन्ते" शोभा नहीं देते।—वे पुस्तकके मनुष्य हैं, इसीसे वास्तविक मनुष्योंमें उनकी कोई शोभा प्रतिष्ठा नहीं। (अपूर्ण।)

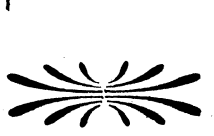

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुस्तक-परिचय ।

१. प्राचीन भारतवासियोंकी विदेशयात्रा और वैदेशिक व्यापार ।—लेखक, पं० उदयनारायण वाजपेयी । प्रकाशक हिन्दी-ग्रन्थप्रकाशकमंडली, औरैया (इटावा) । पृष्ठ संख्या ७२ । मूल्य आठ आना । यह पुस्तक बड़े ही महत्त्वकी है । इसमें दश अध्याय हैं:— १ विदेशयात्रा (संस्कृतग्रन्थोक्त प्रमाण), २ विदेशयात्रा (विदेशी-ग्रन्थोक्त प्रमाण), ३ प्राचीन भारतवासियोंके एशिया और मिश्रमें उप-निवेश, ४ भारतवर्षीय बौद्धोंका अमेरिकामें धर्मप्रचार, ५ पश्चिम एशियामें भारतवासियोंका राज्य, ७ भारत और फिनिशिया देशका व्यापार, ७ भारत और उसके निकटवर्ती पश्चिमी देशोंका व्यापार, ८ भारत और मिश्रका व्यापार, ९ भारत और रोमका व्यापार, १० भारत और अन्यान्य देशोंका व्यापार । इनके पढ़नेसे अच्छी तरह विश्वास हो जाता है कि भारतवासी प्राचीन समयमें एक संकीर्ण परिधिके भीतर रहनेवाले कूपमण्डूक न थे; वे दूरसे दूर तकके देशों और द्वीपोंमें जाते थे, दूर दूर जाकर बसते थे, राज्य स्थापित करते थे, अपने धर्मोंका और सभ्यताका प्रचार करते थे और इन सब कार्योंसे वे आपको सर्वशिरोमणि बनाये थे । इस प्रकारकी पुस्तकोंकी इस समय बड़ी आवश्यकता है । हमारा उक्त प्राचीन गौरव हममें यथेष्ट उत्साह और कार्यतत्परताकी वृद्धि करता है । पुस्तककी भाषा मार्जित और शुद्ध है । मूल्य बहुत ज़ियादह है । मण्डलीको इस बात पर ध्यान देना चाहिए । एक बात और भी है, वह यह कि जिस बंगला मूल पुस्तकका यह संक्षिप्त और कुछ परिवर्तित अनुवाद है उसके लेखकका नामोल्लेख भी इसमें नहीं किया गया है । बंगला पुस्तकका नाम है 'भारतवार्सी दिगेर समुद्रयात्रा औ वाणिज्यविस्तार' ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२. शिवाजीका आत्मदमन । लेखक पं० काशीनाथ शर्मा । प्रकाशक, पं० खुन्नूलाल रावत, फर्रुखाबाद । पृष्ठसंख्या ६६ । मूल्य ≡)॥ आना। यह 'सुभे कल्याण' नामक मराठी पुस्तकका हिन्दी अनुवाद है। इसमें वीरकेसरी शिवाजीके इन्द्रियनिग्रह सच्चरित्र और औदार्यका एक उपन्यास रूपमें प्रभावशाली चित्र खींचा गया है। इस प्रकारके ऐतिहासिक और शिक्षाप्रद उपन्यास हिन्दीमें बहुत थोड़े हैं। यद्यपि इसकी भाषा जितनी चाहिए उतनी अच्छी नहीं लिखी गई; उसमें मराठीपन बहुत अधिक रह गया है, तो भी भाव और शिक्षाके लिहाजसे इसकी गणना अच्छी पुस्तकोंमें करनी चाहिए। अनुवाद जिस भाषासे किया जाय, यदि अनुवादक उसका केवल भाव समझकर अपने शब्दोंमें उसे प्रकाशित करें—शब्दशः अनुवाद न करें, तो वे इस प्रकारके भाषादोषोंसे बच सकते हैं।

३. स्वर्गमाला—बनारससे इस नामकी एक ग्रन्थमाला अभी कुछ ही महीनोंसे प्रकाशित होने लगी है। इसके लेखक और प्रकाशक बाबू महावीरप्रसादजी गहमरी हैं। एक वर्षमें डबल क्राउन १६ पेजी साइजके १००० पृष्ठ निकलेंगे और उनका मूल्य सिर्फ़ दो रुपया होगा। अब तक इसके तीन खण्ड प्रकाशित हुए हैं और उनमें 'स्वर्गके रत्न' नामकी पुस्तक निकल रही है। संभवतः चौथे खण्डमें यह पुस्तक समाप्त हो जायगी। बड़ी ही अच्छी पुस्तक है। इसमें लगभग १०० उपदेश हैं और प्रत्येक उपदेश विस्तारके साथ तरह तरहके दृष्टान्तोंसे समझाया गया है। भाषा भी सरल और सबकी समझमें आने योग्य है। इसका प्रत्येक उपदेश सचमुच ही स्वर्गीय रत्न है। ग्रन्थकर्त्ताके बड़े ही ऊँचे उदार और धर्ममय भाव हैं। प्रत्येक धर्म और सम्प्रदायका पुरुष इनसे लाभ उठा सकता है। इस समय भार-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तवर्ष पाश्चात्य सभ्यताकी नकल करके अपने आदर्शसे गिरता जाता है। उसका सहज सादा और सुखद जीवन, विलास वैभव और बाहरी आडम्बरोंसे दुरूह, पंकिल और क्लेशमय बनता जाता है। ऐसे समयमें इस प्रकारके उपदेशोंकी बहुत बड़ी ज़रूरत है। प्रकाशक महाशय हिन्दी साहित्यके एक बहुत आवश्यक भागकी पूर्ति करनेके लिए उद्यत हुए हैं। हमें उनका उपकार मानना चाहिए और ग्रन्थमालाके ग्राहक बनकर उनके उत्साहको बढ़ाना चाहिए। ग्रन्थमालामें आगे स्वर्गका खजाना, स्वर्गकी कुंजी, स्वर्गका विमान, आदि और इसी तरहकी कई पुस्तकें निकलनेवाली हैं। अपने जैन भाइयोंसे हम खास तौरसे सिफारिश करते हैं कि वे इस मालाको मँगाकर अवश्य ही पढ़ें।

४. **शुश्रूषा**—लेखक, पं० श्रीगिरिधरशर्मा, झालरापाटन। प्रकाशक, एस० पी० ब्रदर्स एण्ड कम्पनी, झालरापाटण। पृष्ठसंख्या २८२। मूल्य १) रु०। इन्दौर के सुप्रसिद्ध अनुभवी डाक्टर ताँबके मराठी ग्रन्थका यह हिन्दी अनुवाद है। रोगियोंको आरोग्य करनेके लिए जितनी आवश्यकता अच्छे डाक्टरोंकी चिकित्साकी है उतनी ही बल्कि उससे भी अधिक आवश्यकता रोगीकी सेवा या शुश्रूषाकी है। शुश्रूषा किस तरह करना चाहिए इसका ज्ञान न होनेसे हज़ारों रोगी औषधोपचार करते हुए भी जीवन खो बैठते हैं। यदि औषधिका भी प्रबन्ध न हो और रोगीकी अच्छी शुश्रूषा होती रहे, तो इससे उसके प्राण बच सकते हैं। इससे शुश्रूषाका महत्त्व मालूम होता है। साधारण लोग भी शुश्रूषा सम्बन्धी बातोंको समझ जावें, इसके लिए यह पुस्तक लिखी गई है। रोगीकी सेवा करनेका प्रसंग कभी न कभी सभी लोगोंपर आ जाता है, इसलिए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्येक गृहस्थके यहाँ ऐसा पुस्तकका रहना आवश्यक है। पुस्तकका प्रूफ अच्छी तरहसे नहीं देखा गया इस लिए भाषासम्बन्धिनी अशुद्धियाँ बहुत रह गई हैं। कागज भी हलका लगाया गया है। परन्तु पुस्तककी उपयोगिता देखते हुए ये दोष सर्वथा क्षम्य हैं। पं० श्री गिरधरशर्माको पुस्तकप्रणयनमें प्रवृत्त देखकर हमें बहुत प्रसन्नता हुई है। आशा है कि आपकी कलमसे हिन्दी साहित्यमें और भी अनेक ग्रन्थोंकी वृद्धि होगी।

नवजीवन बुकडिपो, बनारससे हमें निम्नलिखित चार पुस्तकें प्राप्त हुई हैं—

५–६. **धर्मशिक्षा** प्रथम भाग और द्वितीय भाग—मूल्य चार आना और छह आना। कविराज पं० केशवदेव शास्त्री काशीके एक जोशीले विद्वान् हैं। हिन्दुओंमें नवीन जीवन डालनेके लिए आप बहुत प्रयत्न कर रहे हैं। वैदिक धर्मपर आपकी विशेष आस्था है। वैदिक सिद्धान्तोंका प्रचार करनेके लिए इस समय आप अमेरिकामें घूम रहे हैं। ये दोनों पुस्तकें आपहीकी लिखी हुई हैं। दयानन्द हाईस्कूल काशीके विद्यार्थियोंकी ये पाठ्य पुस्तकें है। पहले भागमें मनुजीके बतलाये हुए धर्मके दशलक्षणों (धृति, क्षमा, दमन, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य और अक्रोध)की व्याख्या है और वह बहुत अच्छे ढँगसे अनेक उदाहरण देते हुए की है। हमारी समझमें धर्मके उक्त लक्षण ऐसे हैं कि इनसे सब ही लोग लाभ उठा सकते हैं। दूसरे भागमें सदाचार निर्माणके मैत्री, करुणा, मुदता (प्रमोद) और उपेक्षा (माध्यस्थ) इन चार साधनोंका विस्तारपूर्वक व्याख्यान है। जैनधर्ममें ये ही चार साधन चार भावनाओंके नामसे प्रसिद्ध हैं। इनसे विद्यार्थियोंके चरित्र पर सचमुच ही अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७. उपदेशमाला प्रथम भाग—यह पुस्तक भी उक्त शास्त्रीजी-की ही लिखी हुई है। मूल्य चार आना। इसमें सत्य, आत्मविश्वास, उद्यम, जीवनसाफल्य, पुरुषार्थ, मधुर भाषण, शील, आदि विषयोंपर अच्छे अच्छे उपदेश हैं और साथ ही प्रत्येक विषयके कण्ठ करने योग्य संस्कृत श्लोक भी हैं।

८. महाराष्ट्रोदय—लेखक, पं० रामप्रसाद त्रिपाठी, बी. ए.। मूल्य डेढ़ आना। इस छोटेसे २३ पेजके निबन्धमें—महाराष्ट्र राज्यके उत्थानका, शिवाजी महाराजके चरितका और उनकी कार्यकुशलता वीरता आदिका वर्णन है। पढ़ने योग्य है।

९. धर्मवीर गाँधी—लेखक, श्रीयुत सम्पूर्णानन्द बी. एस सी.। प्रकाशक, ग्रन्थप्रकाशक समिति, काशी। पृष्ठसंख्या ९०। मूल्य चार आने। पाठकोंको दक्षिण आफ्रिकाके भारतवासियोंकी लज्जा रखनेवाले और भारतका मुख उज्ज्वल करनेवाले कर्मवीर गांधीका परिचय देनेकी आवश्यकता नहीं। इस पुस्तकमें उक्त महात्माका ही आदर्श चरित लिखा गया है। प्रत्येक भारतवासीको यह चरित पढ़ना चाहिए और जानना चाहिए कि देशसेवा करनेके लिए कैसे दृढ विश्वास, अध्यवसाय और पवित्र भावोंकी आवश्यकता है। इस पुस्तकसे जो कुछ लाभ होगा उसे समिति दक्षिण आफ्रिकाप्रवासियोंकी सहा-यतामें अर्पण करना चाहती है।

१०. अनुभवानन्द—लेखक, श्रीयुत शीतलप्रशादजी ब्रह्मचारी और प्रकाशक, जैनमित्र कार्यालय बम्बई। पृष्ठ संख्या १२८। मूल्य आठ आने। इस पुस्तकका विशेष परिचय देनेकी आवश्यकता नहीं, क्योंकि इसके सब लेख दो तीन वर्ष पहले जैनमित्रमें निकल चुके हैं। इसमें आध्यात्मिक विचार रूपकके रूपमें प्रगट किये गये हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनसाहित्यमें अपने ढँगकी यह एक अच्छी पुस्तक है। इसकी समालोचना करनेके हम अधिकारी नहीं; परन्तु यह कह सकते हैं कि जैसी सरल और सुगम भाषामें यह लिखी जानी चाहिए था वैसीमें नहीं लिखी गई। वाक्यरचना और शब्द प्रयोगोंमें भी असावधानी हुई है। अनुभव और आनन्दकी एक स्वतंत्र लेख द्वारा विस्तृत व्याख्या कर दी जाती तो इसके पाठकोंको बहुत लाभ होता।

११. **नवनीत**-प्रकाशक, ग्रन्थप्रकाशक समिति, काशी। वार्षिक मूल्य दो रुपया। यह भी हिन्दीका एक मासिक पत्र है। इसके अबतक ७ अंक निकल चुके हैं। ७ वाँ अंक हमारे सामने है। यह रामनवमीका अंक है, इस लिए इसमें अधिकांश लेख और कवितायें श्रीरामके सम्बन्धमें हैं। लेख प्रायः सभी अच्छे और पढने योग्य हैं। इसके कई लेखक दाक्षिणत्य हैं और वे अच्छी हिन्दी लिख सकते हैं। 'युधिष्ठिरकी कालगणना' नामक लेखमें विष्णुपुराणके प्रमाणसे कृष्ण और युधिष्ठिरका समय निश्चित किया गया है। श्रीकृष्णजी इस संसारमें १२५ वर्ष रहे। कलिसंवत् १२००के लगभग महाभारतके युद्धके ३६ वर्ष बाद उनका तिरोधान हुआ। भारतके बाद १००० वर्ष तक जरासन्धके वंशमें, १३८ वर्ष प्रद्योत अमात्यके वंशमें, ३६२ वर्ष शिशुनागवंशमें, और १०० वर्ष नवनन्दोंके वंशमें भारतका राज्य रहा। इसके बाद मौर्य चन्द्रगुप्त राजा हुआ। चन्द्रगुप्त ईसाके ३१५ वर्ष पहले हुआ। इससे सिद्ध हुआ कि आजसे १९१३+३१५+१००×१०००+३८+३६२-३६=३७९२ वर्ष पहले श्रीकृष्णका देहान्त हुआ था। एक लेखमें यह सिद्ध करनेका प्रयत्न किया गया है कि रामायणसे महाभारत पीछेका ग्रन्थ है। परन्तु इस लेखकी केवल उत्थानिका ही इस अंकमें है। ऐसे लेख जहाँ तक हो अधूरे प्रकाशित न किये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जावें तो अच्छा हो। रामचरितसे क्या क्या शिक्षायें मिल सकती हैं और रामचरितमें क्या महत्त्व है यह कई लेखोंमें समझाया गया है। हम आशा करते हैं कि हिन्दीप्रेमी इस पत्रका आदर करेंगे।

१२. **आरोग्यसिन्धु**—सम्पादक, राधावल्लभ वैद्यराज और प्रकाशक पं० व्रजवल्लभ मिश्र, अलीगढ़। वार्षिक मूल्य १॥)। यह खुशीकी बात है कि हिन्दीमें अब वैद्यकसम्बन्धी भी कई पत्र निकलने लगे हैं। इसके अब तक ६-७ अंक निकल चुके हैं। चौथा पाँचवाँ सयुक्त अंक हमारे पास समालोचनाके लिए आया है। इसमें क्षयरोग, रसायन औषधियोंसे आयुवृद्धि, आयुर्वेदका ऐतिहासिक महत्त्व, वेदोंमें औषधि-प्रार्थना, आयुर्वेदमें भूतविद्या आदि कई उपयोगी लेख हैं। जो लोग वैद्यकसम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं इस पत्रको उन्हें आश्रय देना चाहिए। पत्रकी भाषामें कुछ संशोधनकी आवश्यकता है।

१३. **मनोरंजनका विशेष अङ्क**—सम्पादक और प्रकाशक पं० ईश्वरीप्रसाद शर्मा, आरा। मूल्य १)। यह बड़ी ही प्रसन्नताकी बात है कि हिन्दीका मासिक साहित्य दिनों दिन उन्नति कर रहा है। इस विषयमें वह मराठी और गुजरातीका भी नम्बर ले रहा है। इस समय हिन्दीमें कई अच्छे मासिक पत्र निकल रहे हैं। आराका मनोरंजन भी उनमेंसे एक है। इसने अब दूसरे वर्षमें पैर रक्खा है और बड़े उत्साहसे अपना यह विशेष अंक प्रकाशित किया है। इस अंकमें ६-७ चित्र और ३५ लेख तथा कविताये हैं। हिन्दीके नामी नामी लेखकों और कवियोंकी रचनासे यह विभूषित है। कवरपेज कई रंगोंमें सचित्र छपा है। खर्च खूब किया गया है। हिन्दी प्रेमियोंको इसे अपनाना चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४. **जैनहितेच्छु** अंक १, २—प्रकाशक, शकराभाई मोतीलाल शाह, सारंगपुर, अहमदाबाद। यह गुजराती भाषाका मासिक पत्र है। हिन्दीके भी एक दो लेख इसमें रहते हैं। नये वर्षसे इसकी पृष्ठसंख्या लगभग दूनी कर दी गई है। मूल्य मय उपहारकी पुस्तकके दो रुपया वार्षिक है। इसके मुख्य लेखक श्रीयुत वाडीलालजी बड़े ही उदार और मार्मिक लेखक हैं। इस अंकके प्रत्येक पृष्ठसे उनकी उदारता, समदृष्टिता और मार्मिकता प्रगट होती है। जैनधर्मके तीनों सम्प्रदायोंकी भलाई, उन्नति और प्रगतिका इसमें संदेशा है। इसका 'जूनुं अने नवुं' नामका पहला लेख बड़ा ही हृदयद्रावक है। प्रासंगिक नोट बड़ी ही निष्पक्ष दृष्टिसे लिखे गये हैं। इसके 'जैन बनवा थी उभी थती मुश्केलीओ' शीर्षक लेखका अनुवाद हम पिछले अंकमें प्रकाशित कर चुके हैं। जो सज्जन गुजराती समझ सकते हैं उन्हें इस पत्रके अवश्य ही ग्राहक होना चाहिए। क्या ही अच्छा हो, यदि इस पत्रका एक हिन्दी संस्करण भी निकलने लगे।

१५. **जैनांतील पोटजाति**—दक्षिण महाराष्ट्र जैनसभाकी ओरसे एक ट्रैक्ट-माला प्रकाशित होती है। उसका यह ५ वाँ ट्रैक्ट है। इसके लेखक हैं प्रसिद्ध जैनकवि दत्तात्रय भीमाजी रणदिवे। इसमें सुधारक और रूढिभक्त ऐसे दो जैन बन्धुओंका मराठी पद्यरूपमें वार्तालाप है और उसमें यह सिद्ध करनेकी चेष्टा की गई है कि जैनोंमें सैकड़ों अन्तर्जातियाँ हैं और उनमें पारस्परिक सेटीबेटी-व्यवहार नहीं होता है। इससे जैनसमाजकी बहुत हानि हो रही है। यह भेद एकता, समता, पारस्परिक सहानुभूति, परदुःखकातरता, वात्सल्य आदि गुणोंका घातक है। इससे व्यर्थ अभिमान, घृणा, द्वेष आदि दुर्गुणोंकी सृष्टि होती है। यह भेदभाव पहले नहीं था।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्राचीन ग्रन्थोंमें इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। पिछले अशान्तिप्रद और कष्टकर समयमें इसकी उत्पत्ति हुई है। इत्यादि। रचना प्रभावशालिनी है। जोशमें आकर कवि महाशय कहीं कहीं बहुत आगे बढ़ गये हैं। इस तरहके समाजसुधार सम्बन्धी ट्रेक्टोंकी हिन्दीमें भी बहुत ज़रूरत है।

नीचे लिखी पुस्तकें भी प्राप्त हो चुकी हैं:—

१ माधवी और २ श्रीदेवी—लेखक, रूपकिशोर जैन। प्रकाशक, फ्रेंड एंड कम्पनी, मथुरा। ३ विद्योन्नति संवाद और ४ पद्यकुसुमावली (मराठी)—प्रकाशक, हीराचन्द मलूकचन्द काका, शोलापुर। ५ प्रार्थनाविधि—प्रकाशक, कविराज पं० केशवदेवशास्त्री, काशी। ६ हस्तिनापुर तीर्थकी रिपोर्ट। ७ चतुर्विध दानशाला शोलापुरकी रिपोर्ट। ८ जैन पाठशाला मुड़वाराकी रिपोर्ट। ९ अभिनन्दन पाठशाला ललितपुरकी रिपोर्ट। १० श्रीसामायिक सूत्र।

तेरापंथियोंका सौभाग्य और गुरुओंकी दुर्दशा।

पाठक महाशय, मैं दिगम्बर जैनधर्मका अनुयायी हूँ और आम्नाय मेरी तेरापंथी है। आप जानते हैं कि तेरापंथियोंमें इस समय गुरुपरम्परा नहीं है। महावीर भगवानने जिस प्रकारके साधुओं या गुरुओंको पूज्य बतलाया है उस प्रकारके गुरु इस कालमें नहीं हैं, इस कारण तेरापंथी किसीको अपना गुरु नहीं मानते। जिस समय मेरे विचार बहुत ही अपरिपक्व थे, उस समय मैं यह जानकर बहुत ही दुखी होता था कि हम लोगोंमें गुरुओंका अभाव है और इस कारण हमसे लोग 'निगुरिया' कहते हैं। मैं समझता था कि हमारा धर्म बहुत ही श्रेष्ठ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है—उसके सिद्धान्त बहुत ही उच्चश्रेणीके हैं, परन्तु गुरुओंके अभावसे उनका प्रचार नहीं हो सकता है। गृहस्थ लोग जैनधर्मका थोड़ा बहुत प्रचार बढ़ा सकते हैं परन्तु जिसको सच्चा या पूरा प्रचार कहते हैं वह बिना गुरुओंके नहीं हो सकता। इसके बाद जब मैं कुछ अधिक समझने लगा;—जैनधर्मके दूसरे संप्रदायोंका हाल समाचारपत्रोंके द्वारा जानने लगा, तब मैं गुरुओंकी आवश्यकताको और भी अधिक अनुभव करने लगा। अब मुझे धार्मिक कार्योंके समान सामाजिक कार्योंके लिए भी गुरु आवश्यक जान पड़े। इस समय मुझे लेख लिखनेका शाक होगया था—दो चार छोटे मोटे लेख मैं प्रकाशित भी करा चुका था। मेरा साहस बढ़ गया था, इसलिए मैंने इस विषयमें भी एक लेख लिख डाला और एक जैनपत्रमें उसको प्रकाशित भी करा दिया। उसमें सबसे अधिक जोर इस बातपर दिया था कि जैसे बने तैसे गुरुपरम्पराको फिरसे जारी करना चाहिए। हमारी जो धार्मिक और सामाजिक अधोगति हुई है उसका कारण गुरुओंका ही अभाव है। गुरुओंका शासन न होनेसे हमारे आचारविचार उच्छृंखल होगये हैं, धर्मके उपदेशोंसे हम वंचित रहते हैं और सामाजिक कामोंमें निडर होकर मनमाना वर्ताव करते हैं। हमारी पंचायतियाँ अन्तःसारशून्य हो गई हैं। उनमें न्याय नहीं होता, क्योंकि स्वयं न्याय करनेवाले ही अन्यायाचरण करते हैं। इसके कुछ दिनों बाद मुझे मालूम हुआ कि दक्षिण तथा गुजरातमें भट्टारक लोग हैं और वे दिगम्बर सम्प्रदायके गुरु समझे जाते हैं। मैं जहाँका रहनेवाला हूँ, वहाँ केवल एक तेरापंथ आम्नायके ही माननेवाले हैं, इसलिए उस समय मेरा भट्टारकोंसे अपरिचित होना कोई आश्चर्यकी बात नहीं। भट्टारकोंके माहात्म्यकी कुछ कल्पित और सच्ची किंवदन्तियाँ मैंने उसी समय सुनीं। फिर क्या था,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मुझे भट्टारकोंपर श्रद्धा होने लगी। यद्यपि मैं यह जानता था कि परिग्रहके धारण करनेवाले साधु दिगम्बर सम्प्रदायके गुरु नहीं हो सकते हैं; परन्तु गुरुओंकी आवश्यकता मुझे इतनी अधिक प्रतीत होती थी उनके बिना मैं अपने धर्म और समाजकी इतनी अधिक हानि समझ रहा था कि भट्टारकोंके अस्तित्वकी अवहेलना मुझसे न हो सकी। मैंने अपने दिगम्बरानुरक्त मनको इस युक्तिसे सन्तुष्ट किया कि भट्टारक हमारे गुरु अवश्य हैं परन्तु वे निर्ग्रन्थाचार्य नहीं किन्तु गृहस्थाचार्य हैं और एक प्रकारके गृहस्थ होकर भी वे हमारे गुरुओंके अभावको थोड़ा बहुत पूर्ण कर सकते हैं। इस विश्वाससे मैं भट्टारकश्रद्धा बढ़ाने और उसके प्रचार करनेका प्रयत्न करने लगा।

इसी समय मुझे दो चार श्वेताम्बर साधुओंके कार्योंका पता लगा। उनके प्रयत्नसे तथा उपदेशसे अनेक धनी श्रावकोंने विद्याप्रचार, पुस्तकप्रचार आदिकी कई संस्थायें खोली थीं और उनमें लाखों रुपया खर्च किया था। यह उस समयकी बात है जब कि दिगम्बरसमाज बिलकुल निश्चेष्ट था। महाविद्यालयादि एक दो छोटी छोटी संस्थाओंको छोड़कर उसकी और कोई संस्था नहीं थी। ऐसी अवस्थामें गुरुओंके अभावको अतिशय दुःखमय अनुभव करना मेरे लिए बिलकुल स्वाभाविक था। मैं निरन्तर इसी विचारमें निमग्न रहने लगा। कई बार मेरी इच्छा हुई कि भट्टारकोंके विषयमें कुछ लिखनेका प्रयत्न करूँ; परन्तु विचारसहिष्णुताकी एक तिनकेके भी बराबर कदर न करनेवाले कट्टर तेरापंथियोंके डरके मारे मुझे साहस न हुआ। अपने विचारोंको अपने ही मनमें मसोसकर मैं संसारकी प्रगतिको चुपचाप देखने लगा।

तबसे अब तक कई वर्ष बीत गये। इस बीचमें मुझे कई भट्टारकोंसे, कई श्वेताम्बर साधुओंसे, कई स्थानकवासी मुनियोंसे, कई क्षु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक ऐलकोंसे, कई गुसाईयोंसे, और कई वैष्णव, रामानुजी आदि साधुओंसे मिलनेका तथा परिचय प्राप्त करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। विचार सदा एकसे नहीं रहते, उनमें कुछ न कुछ परिवर्तन निरन्तर ही हुआ करता है। इस लिए यह नहीं कहा जा सकता कि मैं अपने वर्तमान विचारोंपर आगे भी स्थिर रहूँगा; परन्तु इस समय उक्त सब साधुओंको देखकर मेरे जो विचार बने हैं उनका प्रकट कर देना मैं आवश्यक समझता हूँ और उनसे कमसे कम उन लोगोंको लाभ पहुँचनेकी आशा करता हूँ जो कि मेरे ही जैसे अपरिणतबुद्धि हैं।

पाठक, अब मुझे गुरुओंकी उतनी अधिक आवश्यकता नहीं मालूम होती जितनी कि पहले मालूम होती थी। मुझे इस बातसे अब दुःख नहीं होता बल्कि प्रसन्नता होती है कि हमारे यहाँ गुरु नहीं है। दिगम्बर सम्प्रदायके एक बड़े भारी हिस्सेका मैं यह बड़ा भारी सौभाग्य समझता हूँ कि वह गुरुओंके दुःशासनकी पीड़ासे द्रोपदीके समान दुःख और लज्जासे म्रियमाण होनेके लिए लाचार नहीं हुआ है। क्यों कि इस समय इनके नाम बड़े और दर्शन छोटे हैं। साधु, मुनि, यति, भट्टारक, महात्मा आदि नामोंको ये बदनाम कर रहे हैं। यह इन्हीं महात्माओंके चरित्रोंका प्रभाव है जो विदेशी लोग हमारे भारतके धर्मोंको घोर कुसंस्काराच्छन्न और गिरा हुआ समझते हैं और उनपर तरह तरहकी वाग्वाणवर्षा किया करते हैं। वे समझते हैं कि वर्तमान साधु सन्यासी ही भारत धर्मोंके प्रतिपादित साधु हैं। यहाँके धर्मोंमें साधुओंके चरित्रकी परिभाषा यही है।

भारतका साधुसम्प्रदाय नीचताकी चरम सीमापर आपहुँचा है। इससे अधिक इसकी और क्या दुर्दशा होगी कि आज यहाँके जितने भिखमँगे हैं वे प्रायः अपनेको साधु ही बतलाते हैं! अर्थात् साधुका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ अब भिखमंगा हो गया है और इस समय दरिद्र भारतवासियोंके सिरपर इस प्रकारके ५२ लाख साधुओंके पालनपोषणका असह्य भार पड रहा है।

हाय! जिन साधुओं और स्वार्थत्यागियोंकी कृपासे भारतवर्ष सदाचारकी मूर्ति, नीतिमत्ताका उदाहरण, विद्याका भण्डार, धार्मिक भावोंका आदर्श, धनी, मानी, वीर और जगद्गुरु समझा जाता था, उन्हींके भारसे अब यह इतना पीडित है कि देखकर दया आती है। इनेगिने थोडेसे महात्माओंको छोड़कर जितने साधु नामधारी हैं वे सब इसकी जर्जर देहको और भी जर्जरित कर रहे हैं। कोई हमें धर्मका भयंकर रूप दिखलाकर जडकाष्ठवत् बनकर पड़े रहनेका उपदेश रहा है, कोई अंधश्रद्धाके गहरे गढ़ेमें ढकेल रहा है, कोई कुसंस्कारोंकी पट्टीसे हमारी आँखें बन्द कर रहा है, कोई आपको ईश्वरका अवतार बतलाकर हमसे अपना सर्वस्व अर्पण करा रहा है, कोई तरह तरहके ढोंगोंसे अपनी दैवीशक्तियोंका परिचय देता हुआ हमारा धन लूट रहा है, कोई व्यर्थ कार्योंमें हमारे करोड़ों रुपया बरबाद करा रहा है, कोई गृहस्थोंको धर्मशास्त्रोंके पढ़नेके अधिकारसे वंचित कर रहा है, कोई अपनी प्रतिष्ठाके लिए हमारे समाजोंको कलहक्षेत्र बना रहा है, कोई गाँजा, भाँग, तमाखूको योगका साधक बतला रहा है और कोई अपने पतित चरित्रसे दूसरोंको पतित करनेका मार्ग साफ कर रहा है। शिक्षित समाजका अधिकांश तो इनकी चुंगलमें नहीं फँसता है परन्तु हमारे अशिक्षित भाइयोंको तो ये रसातलमें पहुँचा रहे हैं। ऐसी दशामें मैं सोचता हूँ कि यदि तेरापंथी लोग गुरुरहित हैं, तो इसको उनके बड़े भारी पुण्यका ही उदय समझना चाहिए।

इस विषयमें तो तेरापंथी ही क्यों एक तरहसे समग्र जैन धर्मानुयायी ही भाग्यशाली हैं कि उनके यहाँ उक्त ५२ लाखकी श्रेणीवाले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साधु ऊर्फ भिखमंगोंकी गति नहीं है—इस श्रेणीके साधुओंका भार उनके सिरपर नहीं है। अभी तक जैनधर्मके 'साधु' नामकी बहुत कुछ प्रतिष्ठा बनी हुई है।

किन्तु जैनधर्मके साधुओंका जो अतिशय उच्च आदर्श है, उससे तो हमारे वर्तमान साधु भी कुछ कम पतित नहीं हुए हैं—इस खयालसे तो उन्हें औरोंसे भी अधिक गिरा हुआ कहना पड़ता है। जैनसिद्धान्तके अनुसार साधु, मुनि या यति वह कहला सकता है जिसने सांसारिक विषयवासनाओंसे सर्वथा मुँह मोड़ लिया है, किसी भी प्रकारका परिग्रह जिसके पास नहीं है, संसारके कोलाहलसे ऊब कर जो निर्जन स्थानोंमें रहकर मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियोंको बढ़ाता है, संसारके लोगोंसे जिसका केवल इतना ही सम्बन्ध है कि उनके कल्याणकी वह इच्छा रखता है और अवसर मिलनेपर उन्हें धर्मामृतका पान कराता है, सारी इन्द्रियाँ जिसकी दासी हैं, धनमान प्रतिष्ठाको जो तुच्छ समझता है, बुराई करनेवालोंका भी जो कल्याण चाहता है, करुणा और क्षमाका जो अवतार है, किसी भी धर्म, मत या सम्प्रदायसे जिसे द्वेष नहीं, जो सत्यका परम उपासक है, हठ या आग्रह जिसके पास नहीं और सम्यग्दर्शन, ज्ञान, चारित्रकी एकतासे जो मोक्ष मार्ग मानता है। देखिए, यह कितना ऊँचा आदर्श है और फिर अपने साधु महात्माओंकी ओर भी एक नजर डालिए कि वे इस आदर्शसे कितने नीचे गिरे हुए हैं।

पहले भट्टारकोंको ही लीजिए। उनके पास लाखोंकी दौलत है, गाड़ी, घोड़ा, पालकी, नोंकर, चाकर, आदि राजसी ठाटबाट हैं, जो भोगोपभोगकी सामग्रियाँ गृहस्थोंको भी दुर्लभ हैं वे उनके सामने हर वक्त उपस्थित हैं। दयामया इतनी है कि श्रावकोंके द्वारपर धरना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देकर रुपया अदा करते हैं। ज्ञान इतना है कि स्वयं ही आपकों कुन्दकुन्द महर्षिके प्रतिरूप समझते हैं। श्रद्धान इतना दृढ है कि हमारी पादपूजा किये बिना श्रावकोंका कल्याण ही नहीं हो सकता और चारित्र—चारित्रके विषयमें तो कुछ न कहना ही अच्छा है। यह दशा होनेपर भी ये समझते हैं कि श्रावकोंपर शासन करनेका हमको स्वाभाविक स्वत्व है—हम भगवान्के यहाँसे इनके साथ मनमाना वर्ताव करनेका पट्टा ही लिखा कर ले आये हैं।

अब जरा श्वेताम्बर सम्प्रदायके साधुओंकी ओर भी एक दृष्टि डाल जाइए। इनमें यति महाशय तो इतने अधिक गिर गये हैं कि उनपरसे स्वयं श्वेताम्बरी श्रावकोंकी ही श्रद्धा हट गई है! सुनते हैं कि अधिकांश यति लोग साधारण श्रावकोंके समान परिग्रह रखते और रोजगार आदि करते हैं। वैद्यक, ज्योतिष, मंत्र, यंत्र, तंत्रादि इनके प्रधान व्यवसाय हैं। दूसरे प्रकारके संवेगी आदि साधुओंमें बहुतसे सज्जन विद्वान् और धर्मोन्नति करनेवाले हैं और उनका आचरण भी प्रशंसनीय है। परन्तु औरोंके विषयमें यह बात नहीं है; वे अपने पदसे बहुत ही नीचे गिरे हुए हैं।*

* श्वेताम्बर और स्थानकवासी सम्प्रदायमें मुनि आर्यिकाओंकी संख्या बहुत अधिक है—प्रतिवर्ष ही अनेक नये साधु और आर्यिकायें बनती हैं। इन नये दीक्षितोंमें अधिक लोग ऐसे ही होते हैं जिनकी उमर बहुत कम होती है और इसका फल यह होता है कि युवावस्थामें जब उनकी इन्द्रियोंका वेग बढ़ता है तब वर्तमान देशकालकी परिस्थितियाँ कुछ ऐसी बन रही हैं कि वे आपको नहीं सँभाल सकते और बहुत ही नीचे गिर जाते हैं। अपरिपक्वावस्थाका उनका क्षणिक वैराग्य और संयम इस समय उनकी रक्षा नहीं कर सकता। दीक्षाकी इस प्रणालीको संशोधन करनेकी बहुत ज़रूरत है; परन्तु अपने शिष्यपरिवारको बढ़ानेकी धुनमें लगे हुए साधु इस प्रकारके संशोधनका घोर विरोध करते हैं और बहुतसे अन्धाश्रद्धालु श्रावक भी उनकी हाँमें हाँ मिला रहे हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्वेताम्बर सम्प्रदायके कुछ साधुओंके विषयमें मेरे अभिप्राय बहुत ऊँचे थे-मैं उन्हें बहुत ही श्रद्धाकी दृष्टिसे देखता था; परन्तु दो तीन वर्षसे श्वेताम्बर सम्प्रदायमें जो एक तुमुल संग्राम मच रहा है और जिसका नेतृत्व इन साधु महाराजाओंके ही हाथमें है--उसका भीतरी हाल सुनकर मेरे हृदयपर बड़ी गहरी चोट लगी है और इसी लिए मेरा यह विचार बना है कि तेरापंथी लोग इस विषयमें बड़े ही भाग्यशाली हैं। पं० लालन और शिवजी भाईके सम्बन्धको लेकर इन महात्माओंके जो लेख निकले थे और अभी हालमें अहमदाबादके एडवोकेट और भावनगरके जैन शासनमें जो कषायविषसे बुझे हुए वाग्बाणोंकी वर्षा हो रही है उन्हें पढ़कर हृदयमें बड़ी ही ग्लानि उत्पन्न होती है। क्या ये ही हमारे मैत्री–प्रमोद–कारुण्य–माध्यस्थ–भावनाओंका चिन्तवन करनेवाले, समिति और गुप्तियोंके पालन करनेवाले, सांसारिक भोगों और मान बड़ाईकी इच्छा न रखनेवाले मुनिराज हैं, जिनके घृणित चरित्र सुनकर कानोंमें उँगली देनी पड़ती हैं, कटु और निन्द्यवचन सुनकर लज्जासे नीचा सिर कर लेना पड़ता है और एक दूसरेको नीचा दिखानेकी कोशिशमें लगे देखकर दयासे द्रवित होना पड़ता हैं। एक महाशय लोभी पण्डितोंसे ऊँची पदवी प्राप्त करनेकी कोशिश कर रहे हैं। दूसरे यद्यपि स्वयं इसी युक्तिसे पदवी लेकर जगद्गुरु बन बैठे हैं परन्तु पहलेकी कोशिशका भंडा फोड़ कर रहे हैं। तीसरे अपनी कीर्त्तिका शङ्खरव करनेके लिए शिष्योंद्वारा तरह तरहके प्रयत्न कर रहे हैं। चोथे गौराङ्गों द्वारा अपना गुणगान कराके आसमानपर चढ़ जा रहे हैं। पाँचवें एक स्वाधीन विचारके सम्पादकको जेलकी हवा खिलानेके शुक्ल ध्यानमें मस्त हैं। छठे अपने विरुद्धमें कुछ कहनेवालोंपर कलम--कुठार चला रहे हैं और साथ ही नरकमें जानेकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धमकी दे रहे हैं। सातवें रुपयोंके दो चार गुलामोंको फुसलाकर उनसे जैनधर्मकी प्रशंसा कराके आपको कृतकृत्य मान रहे हैं और आठवें दिगम्बर स्थानकवासी आदि सम्प्रदायोंको बुरा भला कह कर कलहका बीज बो रहे हैं। इस तरह कितने गिनाये जावें, एकसे एक बढ़कर काम कर रहे हैं और अपने मुनि साधु आदि नामोंको अन्वर्थ सिद्ध कर रहे हैं। अब पाठक सोच सकते हैं कि जैनधर्मके ऊँचे आदर्शसे हमारे साधु कितने नीचे आ पड़े हैं।

तेरापंथी दिगम्बरी भाइयोंके कन्धोंपर साधुओंका यह कष्टप्रद जूआँ नहीं है, इसलिए मेरे समान उन्हें भी प्रसन्न होना चाहिए था; परन्तु देखता हूँ कि उनका ऐसा ख़याल नहीं है और इसलिए वे एक दूसरी तरहके जूएँको कन्धोंपर धरनेका प्रारंभ कर चुके हैं। कई प्रतिष्ठा करानेवाले और कई अपनी प्रतिष्ठा बढ़ानेवाले पंडितोंने तो उनकी नकेल बहुत दिनोंसे अपने हाथमें ले ही रक्खी है और अब कई क्षुल्लक ऐलक ब्रह्मचारी आदि नामधारी महात्मा उनपर शासन करनेके लिए तैयार हो रहे हैं। तेरापंथी भाइयो, क्षुल्लक, ऐलक, ब्रह्मचारी बुरे नहीं--इनकी इस समय बहुत आवश्यकता है; परन्तु सावधान! केवल नामसे ही मोहित होकर इन्हें अपने सिर न चढ़ा लेना; नहीं तो पीछे पिण्ड छुड़ाना मुश्किल हो जायगा।

यहाँ पर यह कह देना मैं बहुत आवश्यक समझता हूँ कि वर्तमान साधुओंसे मेरी जो अरुचि है वह इसलिए नहीं है कि मैं साधु-सम्प्रदायको ही बुरा समझता हूँ। नहीं, मैं धर्म, समाज और देशके कल्याणके लिए साधुसंघका होना बहुत ही आवश्यक समझता हूँ। मेरी समझमें जिस समाजमें ऐसे लोगोंका अस्तित्व नहीं-है कि जिनका जीवन स्वयं उनके लिए नहीं है--दूसरोंके पारमार्थिक और ऐहिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कल्याणके लिए है, वह समाज कभी उन्नत और सुखी नहीं हो सकता और जो जो समाज अब तक ऊँचे चढ़े हैं वे सब ऐसे ही स्वार्थ-त्यागी महात्माओंकी कृपासे चढ़े हैं। इस लिए इसप्रकारके लोगोंकी परम्परा बढ़ानेकी बहुत आवश्यकता है। परन्तु यदि ऐसे लोग न हों, तो उनके स्थानमें अपूज्योंको पूज्योंके पद पर बिठा देना और उनके चरणों पर अपनी स्वाधीनताको भी चढ़ा देना, इसे मैं बुद्धिमानीका कार्य नहीं समझता। इससे तो यही अच्छा है कि हम बिना साधुओंके ही रहें और इसी लिए मैंने तेरापंथियोंको भाग्यशाली बतलाया है। नीतिकारने स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि 'वरं शून्या शाला न च खलु वरो दुष्टवृषभः।' अर्थात् शाला सूनी पड़ी रहे सो अच्छा, परन्तु उसमें दुष्ट बैलका रहना अच्छा नहीं।

बहुतसे लोगोंका ख़याल है कि यह समय ही कुछ ऐसा निकृष्ट है कि इसमें उत्तम साधुओं और त्यागियोंके उत्पन्न होनेकी आशा नहीं; उत्कृष्ट साधुओंका आचार भी इस समय नहीं पल सकता। इस लिए उनके अभावमें निम्नश्रेणीके साधुओंकी भी पूजा करना बुरा नहीं। परन्तु मेरी समझमें यह विचार ठीक नहीं। आदर्श सदा ऊँचा ही रखना चाहिए--नीचे आदर्शको सामने रखकर कोई ऊँचा नहीं हो सकता, यह हमें सदा स्मरण रखना चाहिए। और इस समय उत्कृष्ट साधुओंका आचार नहीं पल सकता है, इसका मतलब यह नहीं है कि आजकल क्षमा, दया आदि गुणोंके धारण करनेवाले, निस्पृह, मन्दकषाय, सहनशील, दृढ ब्रह्मचारी, परोपकारी, विद्वान्, धर्मप्रचारक साधु भी नहीं हो सकते हैं। अनगारोंमें तो क्या सागार गृहस्थोंमें भी इस प्रकारके महात्मा हो सकते हैं और दूसरे समाजोंमें अब भी हैं। यदि इस समय प्रतिकूलता है तो वह यह कि साधुओंकी जो भोजनपानकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्कष्ट विधि है, नाग्न्यादि कठिन परीषह हैं, कठिन तप आदि हैं, वे वर्तमानमें शास्त्रोक्त मार्गसे पालनेमें बहुत कठिनाई होती है और परिणामोंकी उच्चता पहले जैसी नहीं हो सकती है। परन्तु इससे यह न समझ लेना चाहिए कि आजकल साधु हो ही नहीं सकते। यदि नग्नमुद्रा धारण कर सकनेवाले नहीं हो सकते, तो खण्डवस्त्र धारण करनेवाले ग्यारह प्रतिमाधारी, उनसे भी कम नीचेकी प्रतिमाओंका धारण करनेवाले, गृहत्यागी, ब्रह्मचारी आदि ही सही। ये भी तो एक तरहके साधु हैं—इनसे भी तो हमारा बहुत कल्याण हो सकता है--इनमें भी तो उपर्युक्त पूज्य गुण हो सकते हैं। भले ही आप इन्हें निर्ग्रन्थ गुरु मत मानो, पर उत्कष्ट श्रावक भी तो हमारे यहाँ पूज्य हैं। ये यदि हमें उपदेश दें—हमें मार्ग बतलावें, तो इन्हें भी तो गुरु कहनेमें कुछ हानि नहीं है। फिर केवल स्वांगधारियोंको सिरपर चढ़ानेकी क्या ज़रूरत है?

लेख बहुत बड़ा हो गया है, इसलिए अब मैं केवल इतना ही और कहकर इसे समाप्त करूँगा कि हमारे साधुमार्गकी जो दुर्दशा हुई है, उसके प्रधान कारण हम गृहस्थ लोग ही हैं। इस बातको हमें न भूलना चाहिए कि जिस तरह गृहस्थोंका सुधारना बिगाडना साधुओंके हाथ है उसी तरह साधुओंका सुधारना बिगाड़ना भी गृहस्थोंके हाथ है। दोनोंके जुदा जुदा अधिकार हैं। अपने अपने अधिकारोंको दोनोंको ही काममें लाना चाहिए। गृहस्थका यह अधिकार है कि वह पात्रदान करे, पात्रसेवा करे और पात्रभक्ति करे। यदि इसे हम काममें लाते रहते, तो आज हमारे साधु हमें इतने भारी न होते। अन्धश्रद्धाके वश होकर हमने अपनी बुद्धिको ताकमें रख दी और इनके केवल बाहरी वेषमें भूल कर इनके दोषोंकी उपेक्षा करके हमने जो अपात्रपूजाका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाप किया, उसीका फल आज हमारे सामने है। यदि अब भी हम न चेते, तो इस अपात्रपूजाके और भी बुरे बुरे फल देखनेके लिए हमें तयार रहना चाहिए।

—तेरापन्थी।

जैनी क्या सबसे जुदा रहेंगे?

"हे वृद्ध! हे चिन्तातुर! हे उदासीन! तुम उठो, राजनीतिक आन्दोलनमें शामिल होओ या दिव्य सेजपर पड़े पड़े अपनी जवानीकी बड़ाई बखान बखान कर पुरानी हड्डियोंको पटको, देखो तो उससे तुह्मारी लज्जा दूर होती है या नहीं।"

—रवीन्द्रनाथ।

यह बड़े ही सन्तोषकी बात है कि जैन समाज उन्नतिके मार्गपर कदम बढ़ाने लगा है; शिक्षाप्रचार, समाजसुधार, धर्मविस्तार आदि उन्नतिके कार्योंमें वह लग चुका है। परन्तु जब हम देखते हैं कि उसकी चाल सबसे निराली है; वह आपहीको अपने पथका पथिक समझ रहा है दूसरोंका अस्तित्व ही मानो उसकी दृष्टिमे नहीं है, तब प्रश्न उत्पन्न होता है कि हिन्दु, मुसलमान, पारसी, सिख, ईसाई आदि सारे भारतवासियोंसे जैनी क्या जुदा ही रहेंगे?

उनके सभा सुसाइटियोंके जल्सोंमें, समाचारपत्रोंके लेखोंमें, नेताओं और उपदेशकोंके व्याख्यानोंमें, पाठशालाओं विद्यालयोंकी पाठ्य पुस्तकोंमें, धनवानोंके दानकार्योंमें, समाजसेवकोंके कामोंमें इस तरह जहाँ देखिए वहीं ऐसा माल्म होता है कि जैन समाजने अपनी एक संकीर्ण परिधि बना रक्खी है; उससे बाहर मानो उसके लिए कुछ कर्तव्य ही नहीं है। देशकी प्रगतिसे वह सर्वथा अज्ञान है और देश राष्ट्र

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

या राष्ट्रीयतासे मानो उनका कुछ सम्बन्ध ही नहीं है। यही सब देखकर पूछनेकी इच्छा होती है कि जैनी क्या सबसे जुदा रहेंगे?

भारतवर्ष एक बहुत बड़ा देश है। यहाँ सैकड़ों धर्मों पन्थों और मतोंके माननेवाले रहते हैं। एक समय था जब इन धर्मानुयायियोंके परस्पर लड़ते झगड़ते रहनेपर भी समूचे देशको कुछ हानि लाभ न उठाना पड़ता था। क्योंकि उस समयके भारतका गठन ही कुछ और ही प्रकारका था। देशकी रक्षा या हानिलाभसे उस समयकी साधारण प्रजाका कोई सम्बन्ध नहीं था; शासक या राजा लोगों पर ही इसका दायित्व था। इसी कारण उस समय यह एक सर्व साधारण कहावत थी कि "कोउ नृप होंहु हमें का हानी, चेरी छोड़ न हो-उब रानी।" और लोग अपनी या अपने समूहकी ही बढ़तीकी ओर दृष्टि रखते थे। परन्तु वह समय अब नहीं रहा। इस समय भारत पराधीन है। एक विदेशी जाति इसका शासन कर रही है और वह उन जातियोंमें से एक है जो किसी एक राजाके एक-हत्थी शासनको बहुत बुरा समझती है और उसमें सर्व साधारणकी सम्मतिकी आवश्यकता स्वीकार करती है। वह स्वयं इस बातको 'डंकेकी चोट' प्रचार करती है कि हम भारतका शासन भारतवासियोंकी सम्मतिसे करेंगे। गरज यह कि इस समयकी परिस्थितिने यह बात बहुत ही आवश्यक कर दी है कि यहाँकी सर्व साधारण प्रजा भी देशकी भलाई बुराईका विचार करे और आपको उसकी उत्तरदात्री समझे। और यह है भी ठीक। क्योंकि जब तक शासकोंको हमारे सुखदुखोंका ज्ञान न होगा, हमारी आवश्यकताओंको और हिताहितको वे न समझेंगे तब तक उनका शासन हमारे लिए कभी अच्छा नहीं हो सकता। हमारे शासक विदेशी हैं, वे हमारे सामाजिक धार्मिक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रहस्योंसे अपरिचित हैं। इस लिए उनके शासनचक्रको सुव्यस्थित पद्धतिसे चलानेके लिए यहाँकी सर्वसाधारण प्रजाके हाथोंकी भी आवश्यकता है।

ऐसी अवस्थामें यहाँकी साधारण जनताके लिए यह आवश्यक है कि वह आपसमें मेलजोल रक्खे, एक दुसरेके सुखदुःखोंको अपना सुख दुख समझे, परस्पर सहायता करना सीखे और समूहके हितके लिए अपने व्यक्तिगत स्वार्थोंको भूल जावे। परन्तु ये सब बातें तब हो सकती हैं जब कि हम अपने अपने पारमार्थिक धर्मोंके समान देशभक्ति या राष्ट्रप्रेम नामक एक और नवीन धर्मकी उपासनामें दत्तचित्त हों और जिस तरह एक शरीरमें अनेक अंग होते हैं और अनेक अंगोंके समूहको शरीर कहते हैं उसी तरह हम समझें कि हमारे जुदा जुदा धर्म राष्ट्रप्रेम या देशभक्तिरूप धर्मके जुदा जुदा अंग हैं। यह नवीन धर्म ऐसा नहीं है कि इसके लिए प्रजाको अपने जुदा जुदा धर्म छोड़ देने पड़ें या अपने धर्मविश्वासमें कछ शिथिल हो जाना पड़े। नहीं, यह धर्म इतना उदार है कि सब ही धर्मोंके अनुयायी इसकी उपासना कर सकते हैं।

आजकल कुछ लोगोंने इस धर्मको बदनाम कर रक्खा है। और इस कारण जहाँ सुना कि अमुक पुरुष देशभक्त है कि लोग विश्वास कर लेते हैं कि वह राजद्रोही है। परन्तु यह कहना बड़ी भारी भूल है। वास्तविक विचार किया जाय तो राजभक्त वही हो सकता हैं जो देशभक्त हो। अथवा यों कहिए कि देशभक्तिका ही दूसरा नाम राजभक्ति है। क्योंकि जब तक हम देशसे प्रेम नहीं करते हैं और उस देशप्रेमके कारण अपने शासकोंको सुशासक नहीं बना सकते हैं तब तक राजभक्त कभी नहीं सकते। इस लिए इस बातकी बड़ी भारी ज़रूरत है कि प्रत्येक भारतवासी देशभक्त बननेका प्रयत्न करे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यों तो देशभक्तिकी भारतवर्षकी सब ही जातियों और समाजोंमें कमी है; परन्तु जैनसमाज इससे बिलकुल ही खाली है-वह जानता ही नहीं कि देशभक्ति किसे कहते हैं। बल्कि अपनी झूठी राजभक्ति प्रकट करनेकी धुनमें देशभक्तिको वह एक तरहका पागलपन समझता है। जैन समाजमें एक तो कोई नेता ही नहीं हैं और जो नेता कहलानेका दम भरते हैं—शिक्षा प्रचारादि कामोंमें जिनका थोड़ा बहुत हाथ है, वे इतने संकीर्ण हृदयके हैं--उनके विचारोंका क्षेत्र इतना संकुचित है कि उसके भीतर इस देशभक्तिरूप उदार धर्मको स्थान ही नहीं मिल सकता है। यही कारण है कि एक सम्पन्न साक्षर और प्रतिष्ठित समाज होनेपर भी राष्ट्रीयताकी दृष्टिसे जैनसमाज किसी गिनतीमें नहीं।

देशकी भिन्न भिन्न जातियोंमें तथा सम्प्रदायोंमें इस समय देशभक्ति और राष्ट्रीयताके भाव बढ़ रहे है--लोग समझने लगे हैं कि अपने अपने धर्मों और विचारोंकी रक्षा करते हुए इस सार्वजनिक धर्मकी-या राष्ट्रीयताकी उपासना करना भी हमारा कर्तव्य है और यह समझकर हजारों लोग कमर कसकर कार्यक्षेत्रमें भी उतर पड़े हैं। अभी अभी देखते देखते भारतमाताके हजारों सपूत अपनी अपनी संकीर्ण परिधियोंका उल्लंघन करके स्वार्थसे मुख मोड़कर देशकी या भारतवासी मात्रकी सेवा करनेमें तत्पर हो गये हैं। प्रत्येक धर्म या सम्प्रदायके माननेवालेको, प्रत्येक ऊँच या नीच कुलमें उत्पन्न हुए मनुष्यको और प्रत्येक अमीर या गरीबको वे अपना भाई समझते हैं, उसके दुःख दूर करनेका प्रयत्न करते हैं उसको ऊँचा उठानेके लिए शिक्षा आदिका प्रबन्ध करते हैं और भारतवासी मात्रके अधिकारोंकी रक्षा करनेके लिए कष्टोंकी परवा न करके निरन्तर आन्दोलन करनेमें दत्तचित्त रहते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। यह सब करके भी वे अपने अपने धर्मोंको नहीं भूले हैं—राष्ट्रीय भावोंकी रक्षा करते हुए अपने धर्म या सम्प्रदायोंकी उन्नतिमें भी वे सब तरहसे दत्तचित्त रहते हैं। देशके राष्ट्रीय अगुओंमेंसे इस तरहके बीसों सज्जनोंके नाम गिनाये जा सकते हैं।

परन्तु जैनी इस विषयमें सबसे जुदा हैं। देशाहितके सैकड़ों कार्य-क्षेत्र हमारे सामने पड़े हैं परन्तु उनमेंसे एकमें भी हम अपने भाइयोंको नहीं देखते। इंडियन नेशनल कांग्रेसमें, प्रादेशिक समितियोंमें, औद्यो-गिक कॉन्फरेंसमें, सोशल कॉन्फरेंसमें, साहित्यपरिषदोंमें, गोखलेकी भारतसेवकसमितिमें, सरकारी कौंसिलोंमें और सार्वजनिक हितका आन्दोलन करनेवाली अन्यान्य संस्थाओंमें हम किसी जैनीका नाम नहीं सुनते। सार्वजनिक कल्याणकी घोषणा करनेवाले दोचार समाचारपत्र भी जैनी नहीं निकालते। ऐसे पत्रोंमें लेख भी वे नहीं लिखते। इस विषयकी कोई पुस्तक भी किसी जैनीकी कलमसे नहीं निकली। कहीं किसी जैनीको देशहितका व्याख्यान देते हुए या आन्दोलन करते हुए भी नहीं सुना। सार्वजनिक साहित्यक्षेत्रमें भी उनका दर्शन दुर्लभ है। इस समय एक भी जैनी किसी भाषाके वर्तमान साहित्यका ख्यातनामा लेखक या कवि नहीं है। शिक्षाप्रचारका काम जैनी करते हैं। वे चाहें तो अपने बच्चोंके साथ साथ दूसरोंके बच्चोंको भी ज्ञानदान कर सकते हैं, परन्तु इतनी उदारता भी उनमें नहीं। उनकी शिक्षासंस्था-ओंके द्वार दूसरोंके लिए एक तरहसे बन्द ही हैं। सार्वजनिक शिक्षासं-स्थाओंमें भी जैनी आर्थिक सहायता नहीं देते। अवश्य ही स्वर्गीय सेठ प्रेमचन्द्र रायचन्द्रने कलकत्ता यूनीवर्सिटीको और सेठ वसनजी त्रिकमजी जे. पी. ने बम्बईके साइन्स इन्स्टिट्यूटको दो बड़ी बड़ी रकमें देकर जैनि-योंकी लज्जा रख ली है। इस तरह और कहाँ तक गिनाये जावें किसी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भी सार्वजनिक लाभके काममें जैनियोंका हाथ नहीं दिखता। और तो क्या हमारे नैतिक, धार्मिक और समाजसुधारसम्बन्धी उपदेश आदि भी केवल जैनियोंके लिए ही होते हैं। पारस्परिक सहानुभूति और सहायताबुद्धिकी तो हममें इतनी कमी है कि हम अपने घरहीमें बारहों महीने लड़ा करते हैं; हमारे श्वेताम्बरियों और दिगम्बरियोंके तीर्थ-क्षेत्रसम्बन्धी मुक़द्दमे इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। गतवर्ष पालीताणाके जलप्रलयके समय जैनियोंकी सहायता करनेके लिए कई आर्यसमाजी भाई पालीताणा दौड़े गये थे; परन्तु अभी दक्षिण आफ्रिकाके भाइयोंपर जब विपत्ति आई और सारे देशके लोगोंने उनके प्रति सहानुभूति प्रकट की तथा विपुल धनसे सहायता की, तब बतलाइए हमारे जैनी भाइयोंने क्या किया? कितना धन दिया? हमारे दयाधर्मने क्या काम किया? जिस समय सम्मेदशिखरतीर्थपर घोर उपसर्ग उपस्थित हुआ था--उसपर सरकारी बंगले बननेवाले थे उस समय हमारे कुछ भाई एक देशभक्त लीडरसे इस लिए जाकर मिले थे कि वे इस विपत्तिके समय हमें कुछ सहायता दें और आन्दोलन करके हमारे पर्वतकी रक्षा करें। उस समय उक्त देशभक्त महाशयने उत्तर दिया था कि "जैनी हमारी और हमारे देशकी क्या सहायता करते हैं जो हम उनकी सहायता करें।" यद्यपि एक देशभक्तके मुँहसे ऐसे शब्द न निकलना चाहिए थे, परन्तु इसमें उन्होंने झूठ ही क्या कहा था? यदि जैनी बुद्धिमान् हैं तो वे इस उत्तरसे बहुत कुछ सीख सकते हैं और अपने भविष्यका मार्ग निश्चित कर सकते हैं।

यह कहा जा सकता है कि जैनसमाज अभी अभी जागृत हुआ है। अभी उसमें स्वयं अपनी ही आवश्यकताओंके पूर्ण करनेकी शक्ति उत्पन्न नहीं हुई है, इसलिए दूसरोंकी ओर ध्यान देनेका उसे अव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

काश नहीं। इसका कारण यदि अवकाशाभाव ही होता तो कुछ आक्षेपकी बात नहीं थी। पर यह एक बहाना भर है। वास्तवमें हममें अभी तक इस प्रकारके भाव ही उत्पन्न नहीं हुए हैं। बीचमें हमारी जो सर्वतोगामिनी सहानुभूति, दया, परार्थपरता नष्ट हो गई है—वह अभी तक जीवित ही नहीं हुई है। यदि हममें राष्ट्रीयभाव, प्रेम या देशभक्ति होती, तो भले ही हम प्रत्यक्षरूपसे सार्वजनिक सेवाके कार्य न कर सकते—अपने कामोंके मारे उनमें योग न दे सकते; परन्तु हमारे निजके ही कामोंमें वह जहाँ तहाँ प्रस्फुटित हुए बिना न रहती। और यह बात भी तो सर्वांशोंमें सत्य नहीं मालूम होती कि हमें अपने कामोंसे अवकाश नहीं है। ऐसे बहुतसे कार्य हैं जिन्हें हम अपने कार्य करते हुए भी सहज ही कर सकते हैं। और हमारे समाजके सभी लोग तो काम नहीं करते हैं—यदि कुछ लोग अपनी योग्यताके अनुसार सार्वजनिक काम भी करने लगें तो अच्छी तरहसे कर सकते हैं; होना चाहिए इन कामोंसे प्रेम और सहानुभूति।

अन्तमें हम अपने भाइयोंको सचेत कर देना चाहते हैं कि तुम्हारी संख्या औरोंकी अपेक्षा बहुत ही कम है, दार्शनिक सिद्धान्तोंके ख़यालसे तुम्हारा धर्म देशके सारे धर्मोंसे अतिशय भिन्नता रखता है—यहाँ तक कि जब सारा देश ईश्वरवादी है तब तुम किसी एक ईश्वरके अस्तित्वको ही स्वीकार नहीं करते। ऐसी अवस्थामें अपने अस्तित्वकी रक्षाका प्रश्न तुम्हारे सम्मुख सबसे अधिक कठिन है। इसका तुम्हें बहुत ही सावधानीसे विचार करना चाहिए। हमारी समझमें जबतक हम देशके प्रत्येक कार्यमें शामिल न होंगे, दूसरोंके समान अपनी भी शक्तियोंको बढ़ाकर देशके कार्यभारमें बराबरीसे अपने कन्धे न लगावेंगे, प्रत्येक देशवासीके सुखमें सुखी, दुखमें दुखी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

न होंगे, सबकी सहानुभूति और प्रीति सम्पादन न करेंगे—संक्षेपमें जब तक हम अपना अपने परमार्थिक धर्मके समान 'राष्ट्रप्रेम' नामक एक और दूसरा धर्म न बनावेंगे तब तक अपनी रक्षा कदापि न कर सकेंगे। यदि हम अब भी न चेते—अब भी हमने भारतको अपना देश न समझा, तो याद रखिए कि इस चढ़ाबढ़ीके कठिन समयमें—'निर्बलोंको जीते रहनेका अधिकार नहीं है' इस सिद्धान्तको माननेवाले समयमें—हमारी वही दशा होगी जो भारतकी अन्त्यज जातियोंकी हो रही है। यदि जागना हो तो अभी जागो, नहीं तो सदाके लिए सोते रहो।

समाज-सम्बोधन।

(१)

दुर्भाग्य जैनसमाज, तेरी क्या दशा यह होगई!
कुछ भी नहीं अवशेष, गुण[1]—गरिमा सभी तो खो गई!
शिक्षा उठी, दीक्षा उठी, विद्याभिरुचि जाती रही!
अज्ञान दुर्व्यसनादिसे मरणोन्मुख[2] काया हुई!

(२)

वह सत्यता, समुदारता तुझमें नज़र पड़ती नहीं!
दृढ़ता नहीं, क्षमता नहीं, कृतविज्ञता[3] कुछ भी नहीं!
सब धर्मनिष्ठा उठ गई, कुछ स्वाभिमान रहा नहीं!
भुजबल नहीं, तपबल नहीं, पौरुष नहीं, साहस नहीं!

(३)

क्या पूर्वजोंका रक्त अब तेरी नसोंमें है कहीं?
सब लुप्त होता देख गौरव जोश जो खाता नहीं।

---

१ गुणोंकी गुरुता-उत्कृष्टता। २ मरणके सन्मुख। ३ कृतज्ञता।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ठंडा हुआ उत्साह सारा, आत्म-बल जाता रहा।
उत्थानकी चर्चा नहीं, अब पतन ही भाता हहा!!

(४)

पूर्वज हमारे कौन थे? वे कृत्य क्या क्या कर गये?
किन किन उपायोंसे कठिन भवसिन्धुको भी तर गये?
रखते थे कितना प्रेम वे निजधर्म-देश-समाजसे?
परहितमें क्यों संलग्न थे, मतलब न था कुछ स्वार्थसे?

(५)

क्या तत्त्व खोजा था उन्होंने आत्म-जीवनके लिए?
किस मार्गपर चलते थे वे अपनी समुन्नतिके लिए?
इत्यादि बातोंका नहीं तेव[1] व्यक्तियोंको ध्यान है।
वे मोहनिद्रामें पड़े, उनको न अपना ज्ञान है॥

(६)

सर्वस्व यों खोकर हुआ तू दीन, हीन, अनाथ है!
कैसा पतन तेरा हुआ, तू रूढ़ियोंका दास है!!
ये[2] प्राणहारि पिशाचिनी, क्यों जालमें इनके फँसा।
ले पिण्ड तू इनसे छुड़ा, यदि चाहता अब भी जियो[3]।

(७)

जिस आत्म-बलको तू भुला बैठा उसे रख ज्ञानमें।
क्या शक्तिशाली ऐक्य[4] है, यह भी सदा रख ध्यानमें।
निज पूर्वजोंका स्मरण कर कर्तव्यपर आरूढ़ हो।
बन स्वावलम्बी, गुण-ग्राहक; कष्टमें न अधीर हो॥

---

१ तेरे व्यक्तियोंको अर्थात् जैनियोंको।

२ ये रूढ़ियाँ प्राणोंको हरनेवाली पिशाचिनी हैं। ३ जीवित रहना। ४ एकता, इत्तफ़ाक़।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(८)

सद्दृष्टि-ज्ञान-चरित्रका सुप्रचार हो जगमें सदा ।
यह धर्म है, उद्देश है; इससे न विचलित हो कदा ॥
'युग-वीर' बन यदि स्वपरहितमें लीन तू हो जायगा ।
तो याद रख, सब दुःख संकट शीघ्र ही मिट जायगा ॥

समाजसेवक—

जुगलकिशोर मुख्तार ।

डाक्टर सतीशचन्द्रकी स्पीच ।

श्रीयुत मान्यवर महामहोपाध्याय डाक्टर सतीशचंद्र विद्याभूषण[1] एम. ए., पी. एच. डी., एफ़. आई, आर. एस., सिद्धान्तमहोदधिने, २७ दिसम्बर सन् १९१३ को स्याद्वादमहाविद्यालय काशीके महोत्सवपर जो स्पीच अँगरेज़ीमें दी है उसका हिन्दी भावानुवाद इस प्रकार है:—

सज्जनो, मुझे इस शुभ अवसरपर सभापतिका आसन देकर आप लोगोंने जो मेरा सन्मान किया है उसका हार्दिक धन्यवाद दिये बिना मैं आजकी मीटिंगकी कार्रवाईको शुरू नहीं कर सकता । औरोंकी अपेक्षा मेरा दृढ़ विश्वास है कि आप अनुभवी विद्वानों और जीवन-पर्यंत जैनधर्मका अभ्यास करनेवालोंके इस दीप्तिमान समूहमेंसे मुझसे कोई अच्छा और योग्य सभापति चुन सकते थे । परन्तु चूँकि आपने प्रसन्न होकर मुझे यह असाधारण मान दिया है इसलिए मुझे आपकी आज्ञाका पालन करना चाहिए और मैं एक ओर आपके अनुग्रह और

---

१ सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्रका ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूसरी ओर आपकी सहकारितापर भरोसा रखते हुए आसन ग्रहण करता हूँ।

जैनधर्मपर कोई लम्बा चौड़ा विवेचन करनेका न यह समय है और न यह स्थान। साथ ही मैं आपको यह भी विश्वास दिलाता हूँ कि मैं इस प्रसिद्ध जैनसमाजको उसके ही मत और सिद्धान्तकी कोई बात सिखलानेका साहस नहीं करता हूँ। ऐसा करना, सज्जनो, उलटे बाँस बरेली ले जानेके समान होगा। परन्तु एक ऐसे व्यक्तिके मुखसे जो, यद्यपि सम्प्रदायसे जैनी नहीं है तथापि, जैनधर्मका अभ्यासी रह चुका है, एक दो शब्दोंका निकलना कुछ अनुचित भी न होगा।

मालूम होता है कि ईसामसीहसे लगभग छह सौ वर्ष पहले इस सारे भूमंडलपर मानसिक जागृति और कर्त्तव्यपरायणता उत्पन्न हुई थी। उस समय एक नई परिपाटीका जन्म होना पाया जाता है, पूर्वीय और पश्चिमीय दोनों ही देशोंमें एक नया युग प्रवर्त्तित हुआ था।

योरुपमें, पैथेगोरस नामके प्रसिद्ध यूनानी फ़िलासोफ़रने संसार-को एकताका सिद्धान्त सिखलाया। एशियामें, चीनके कनफ्यूशस और ईरानके जोरोस्टरने इस जागृतिमें हिस्सा लिया। प्रथमने अपनी उन शिक्षाओंके द्वारा जिन्हें 'गोल्डनरूल' (Golden rule) कहते हैं और दूसरेने अपने उस सिद्धान्तके द्वारा जो आरमुज्ड (Armugd) और अहिरिमन (Ahiriman) अर्थात् प्रकाश और अंधकारकी शक्तियोंके विसम्वादके सम्बन्धमें है, यह कार्य किया। हिदुस्तानमें महावीरने, जिन्हें वर्धमान भी कहते हैं और जो इस वर्त-मान कालमें जैनियोंके अन्तिम तीर्थंकर हुए हैं, अपने आत्म-संयमके सिद्धान्तको प्रकाशित किया और बौद्धधर्मके प्रवर्त्तक बुद्धदेवने अंधकार और दुःखमें पड़े हुए जगतको ज्ञानोद्दीपनके संदेशसे उद्घोषित किया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुछ कालतक महावीर और बुद्धके सिद्धान्त और धर्म एक दूसरेके बराबर बराबर (समानान्तर रेखाओंमें) चलते रहे। यह भले प्रकार निर्द्धारित किया जा सकता है कि महावीरका साक्षात् शिष्य और उनकी शिक्षाओंको संग्रह करनेवाला इन्द्रभूति गौतम, बुद्धधर्मके प्रसिद्ध संस्थापक बुद्धगौतम तथा न्यायसूत्रके कर्त्ता ब्राह्मण अक्षपाद गौतमका समकालीन था। हम देखते हैं कि बौद्धोंके 'त्रिपटिक' जैसे धर्मग्रंथोंमें जैनधर्मके सिद्धान्तोंका उल्लेख मिलता है और जैनियोंके धर्मग्रंथोंमें, जिन्हें 'सिद्धान्त' कहते हैं बौद्धोंके सिद्धान्तोंका विवेचन (गुणदोष-विचार) पाया जाता है।

सर्वसाधारणतक पहुँचने तथा अपने उच्च सिद्धान्तोंका मनुष्यसमूहमें प्रसार करनेके लिए इन दोनों महान् शिक्षकोंने, अपनी शिक्षाके द्वारस्वरूप, उस समयकी दो अत्यन्त लोकप्रिय और प्रचलित भाषाओंको पसंद किया था—बुद्धने पालीभाषाको और महावीरने प्राकृत भाषाको। इस प्रतिवादके विषयमें कि पाली और प्राकृत भाषायें इतनी प्राचीन नहीं हो सकती हैं कि उनका अस्तित्व सन् ईसवीसे ६०० वर्ष पहले माना जाय, इतना कहा जा सकता है कि ये भाषायें या स्पष्टतया इनकी वे खास शकलें (आकृतियाँ), जिनमें महावीर और बुद्धने शिक्षा दी, उस पाली और प्राकृत ग्रंथोंकी भाषासे जो हम तक पहुँची है ज़रूर ही बहुत भिन्न थीं। और यह बात इस मामलेसे आसानीके साथ स्पष्ट की जा सकती है कि उनकी शिक्षाकी भाषायें, जो हम तक लिखित रूपसे नहीं किन्तु मौखिक रूपसे पहुँची हैं दोनों भाषाओंके साधारण परिवर्तनोंके साथ साथ परिवर्तित होती रही हैं।

सन् ईसवीकी पहली शताब्दीमें बौद्धधर्म दो शाखाओंमें विभक्त हो गया, जिनको 'महायान' और 'हीनयान,' अर्थात् बड़ा वाहन और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छोटा वाहन कहते हैं। जैनधर्मके भी दो बड़े टुकड़े होगये यथा 'श्वेताम्बर' सफ़ेद वस्त्र धारण करनेवाले और 'दिगम्बर' जिनका वस्त्र आकाश है।

जैनसाधु, जो सर्व प्रकारके 'बन्धनों' से मुक्त होनेके अभिप्रायसे दीक्षित होता है, अपने लिये सर्व प्रकारके विषयसुखोंको अस्वीकार करता हुआ, सिर्फ़ इतना भोजन जो जीवन धारण करनेके लिये काफ़ी हो, जिसे किसी व्यक्तिने खास उसके लिए न बनाया हो और जो धार्मिक भक्तिके साथ श्रावकों या गृहस्थोंद्वारा दिया जाय, ग्रहण करता हुआ और लौकिक जन तथा स्त्री संसर्गसे अलग रहकर एक प्रशंसनीय जीवन व्यतीत करनेके द्वारा पूर्ण रीतिसे व्रत, नियम और इन्द्रियसंयमका पालन करता हुआ, जगतके सन्मुख आत्मसंयमका एक बड़ा ही उत्तम आदर्श प्रस्तुत करता है।

यद्यपि इन दोनों धर्मोंने ब्राह्मणोंके जातिभेद या अन्य विधि विधानोंके साथ कोई बड़ी भारी लड़ाई नहीं लड़ी, तथापि इनका उद्देश ऐसे आदर्श पुरुष उत्पन्न करना था जो, बौद्धशास्त्रोंमें 'भिक्षु' और जैन शास्त्रोंमें 'यति' या 'साधु' कहलाते हैं। यह आदर्श पुरुष समस्त ही श्रेष्ठ और उत्तम गुणोंकी मूर्तिरूपसे देखा जासकता है। क्योंकि उसका शरीर उसके वंशमें है, वचनपर उसने अधिकार जमा लिया है और मनको भले प्रकार अपने आधीन कर लिया है। वह जगतको जीतनेवाला है क्योंकि उसने अपने आपको जीत लिया है। वह अपना सारा दिन अध्ययन और शिक्षणमें, सांसारिक विषयवासनाओंके समुद्रमें गोते खाते और बहते हुए मनुष्योंको सुखशांतिकी दृढ़ भूमिपर लानेके द्वारा उनका उद्धार करनेमें और भटकते हुए संसारी मुसाफ़िरोंको मोक्षका मार्ग दिखलानेमें व्यतीत करता है। यों तो ऐसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्य प्रतिदिन ही शास्त्रस्वाध्याय और ध्यानसे अपने हृदयको पवित्र करते हैं; परन्तु महीनेके खास दिनोंमें वे परस्पर अपने पापोंकी आलोचना करनेके लिए एकत्र होते हैं जो उनके धर्मका एक मुख्य चिह्न है।

यह आदर्श पुरुषकी बात है। परन्तु एक गृहस्थका जीवन भी जो जैनत्वको लिये हुए है इतना अधिक निर्दोष है कि हिन्दुस्तानको उसका अभिमान होना चाहिए। गृहस्थके लिए 'अहिंसा' को अपने जीवनका आदर्श (Motto) बनाना होता है। सिर्फ़ जीवधारियोंको उनके मांसके लिए वध करनेका ही उसके त्याग नहीं होता, बल्कि उसका यह कर्त्तव्य है कि वह किसी छोटे जन्तुको भी किसी प्रकारका कोई नुकसान न पहुँचावे, और उसे अपना भोजन बिलकुल निरामिष सर्वप्रकारके मांसाहारसे रहित—रखना होता है। सज्जनो, मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि मैं उनके भोजन और जीवनरीतियोंके सम्बन्धमें बहुतसे उत्तमोत्तम नियमोंका विस्तारके साथ वर्णन करूँ; मैं इतना ही कहना काफ़ी समझता हूँ कि वे खानेपीनेके सम्बन्धमें सातिशय संयमशील हैं और उनका भोजन बड़ी ही सूक्ष्मदृष्टिसे शुद्ध तथा असाधारण रीतिसे सादा होता है। ये भोले भाले और किसीको हानि न पहुँचानेवाले जैनी, यद्यपि पंद्रह लाखसे अधिक नहीं हैं, तथापि बहुतसी बातोंमें प्रत्येक मानवजातिके एक भूषण हैं, चाहे वह कैसी ही सभ्य क्यों न हो।

जैनियोंके साहित्यमें एक विशेषता है। यूनानियोंको छोड़कर जिन्होंने अपने धार्मिक और लौकिक साहित्यको प्रारंभसे ही एक दूसरेसे अलग रक्खा है अन्य समस्त देशोंका वही आदिम साहित्य है जो कि उनका धार्मिक साहित्य है। ब्राह्मणोंके वेद, यहूदियोंकी बाइबिल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

Old Testament और बौद्धोंके 'त्रिपटिक' की यही हालत है। जैनसाहित्य-प्रारंभमें केवल धार्मिक प्रकृतिको लिए हुए था; परन्तु समयके हेरफेरसे उसने न सिर्फ़ धार्मिक विभागमें किन्तु दूसरे विभागोंमें भी आश्चर्यजनक उन्नति प्राप्त की। न्याय और अध्यात्मविद्या-के विभागोंमें इस साहित्यने बड़े ही ऊँचे विकास और क्रमको धारण किया। सन् ईसवीकी पहली शताब्दीमें प्रसिद्ध होनेवाले **उमास्वामि**-के जोड़के अध्यात्मविद्याविशारद, या छठी शताब्दीके **सिद्धसेन दिवाकर** और आठवीं शताब्दीके **अकलंकदेवकी** बराबरके नैय्या-यिक इस भारत भूमिपर अधिक नहीं हुए हैं। सिद्धसेनदिवाकरके न्यायावतार नामक ग्रंथमें कुल न्यायविद्या केवल ३२ श्लोकोंके भीतर भरी हुई है। न्यायदर्शन जिसे ब्राह्मण ऋषि गौतमने चलाया है, न्याय अध्यात्मविद्याके रूपमें असंभव होजाता यदि जैनी और बौद्ध अनुमान चौथी शताब्दीसे न्यायका यथार्थ और सत्याकृतिमें अध्ययन न करते। जिस समय मैं जैनियोंके 'न्यायावतार', 'परीक्षामुख', न्यायदीपिका', आदि कुछ न्यायग्रंथोंका सम्पादन और अनुवाद कर रहा था उस समय जैनियोंकी विचारपद्धतिकी यथार्थता, सूक्ष्मता, सुनिश्चितता और संक्षि-प्तताको देखकर मुझे आश्चर्य हुआ था और मैंने धन्यवादके साथ इस बातको नोट किया है कि किस प्रकारसे प्राचीन न्यायपद्धतिने जैन नैय्यायिकों द्वारा क्रमशः उन्नतिलाभ कर वर्तमानरूप धारण किया है। इन जैन नैय्यायिकोंमेंसे बहुतोंने न्यायपर टीका ग्रंथोंकी भी रचना की है, और मध्यमयुगमें न्यायपद्धतिपर यह एक बड़ा ही बहुमूल्य काम हुआ है। जो 'मध्यमकालीन न्यायदर्शन' के नामसे प्रसिद्ध है वह सब केवल जैन और बौद्ध नैय्यायिकोंका कर्तव्य है। और ब्राह्मणोंके न्यायकी आधुनिक पद्धति जिसे "नव्य न्याय" कहते हैं और जिसे गणेश उपाध्यायने ईस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की १४ वीं शताब्दीमें जारी किया है, वह जैन और बौद्धोंके इस मध्यम कालीन न्यायकी तलछटसे उत्पन्न हुई है। व्याकरण और कोशरचना-विभागमें शाकटायन पद्मनंदि और हेमचंद्रादिके ग्रंथ अपनी उपयोगिता और विद्वत्तापूर्ण संक्षिप्ततामें अद्वितीय हैं। छंदशास्त्रकी उन्नतिमें भी इनका स्थान बहुत ऊँचा है। प्राकृत भाषा अपने सम्पूर्ण मधुमय सौन्दर्यको लिये हुए जैनियोंकी रचनामें ही प्रगट की गई है; और यह बिलकुल सत्य है कि ब्राह्मण नाटकोंमें जो प्राकृत भाषाका व्यवहार किया गया है उसके मूलकारण जैनी ही हैं जिन्होंने सबसे पहले अपने शास्त्रोंमें इस भाषाका प्रयोग किया है। और ऐतिहासिक संसारमें तो जैनसाहित्य शायद जगतके लिए सबसे अधिक कामकी वस्तु है। यह इतिहास लेखकों और पुरावृत्त विशारदोंके लिए अनुसन्धानकी विपुल सामग्री प्रदान करनेवाला है जैसा कि इसने पहले प्रदान की है और अब भी प्रदान कर रहा है। जैनियोंके बहुतसे प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रंथ भी हैं जैसा कि 'कुमारपालचरित'। ये ग्रंथ और वे उपाख्यान, जिन्हें भिन्न भिन्न सम्प्रदाय या 'गच्छों'के जैनियोंने उन समयोंके बाबत जिनमें कि अनेक तीर्थंकर और शिक्षक 'धर्मके आसन' या 'पट्ट' पर विराजमान थे और उनकी समकालीन घटनाओंके बाबत सुरक्षित रक्खा है, भारतीय इतिहासकी पुरानी बातोंको निश्चित करनेके लिए उसी प्रकारसे बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं, जिस प्रकार कि यूनानका पुराना इतिहास तय्यार करनेमें वहाँके मीनार कार्यकारी हुए थे। और भी अधिक, इन समयोंकी जाँच शिला आदिपर उत्कीर्ण लेखोंकी साक्षीसे हो चुकी है और ये उनके अनुरूप पाये गये हैं जैसा कि मथुरासे मिला हुआ ईसाकी पहली शताब्दीका जैनशिलालेख और रुद्रदमनका जूनागढ़वाला शिलालेख जो दूसरी शताब्दीका है, इत्यादि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यदि भारत देश संसारभरमें अपनी आध्यात्मिक और दार्शनिक उन्नतिके लिए अद्वितीय है तो इससे किसीको भी इनकार न होगा कि इसमें जैनियोंको ब्राह्मणों और बौद्धोंकी अपेक्षा कुछ कम गौरवकी प्राप्ति नहीं है।

अनुवादक—

जुगलकिशोर मुख्तार।

नोट—यह विद्याभूषण महाशयके व्याख्यानका पूर्व भाग है। इसके आगे उन्होंने जैनसंस्थाओं और वर्तमान जैनकार्यकर्त्ताओंकी प्रशंसा की है। वह बहुधा अतिशयोक्ति पूर्ण है; इस लिए उसका प्रकाशित करना हम उचित नहीं समझते।—सम्पादक।

ऐतिहासिक लेखोंका परिचय।

(गताङ्कसे आगे।)

३. विषय।

इन लेखोंमें अन्य भेदोंके साथ विषयकी भी भिन्नता है। अधिकांश लेख दानके विषयमें हैं। दान भी धर्मसम्बन्धी और राज्य सम्बन्धी दो प्रकारके हैं।

कई लेखोंमें श्रीजिनेन्द्रभगवानके मंदिरोंके निमित्त ग्रामोंके दानका उल्लेख है। चालुक्यवंशीय राजा अम्म द्वितीयका एक लेख यह सूचित करता है कि जिनमंदिरकी एक खैराती भोजनशालाके लिए उन्होंने एक ग्राम दान दिया था। गयामें बराबर पर्वतपर महाराज

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अशोकके कई लेखोंमें आजीवक साधुओंको गुफाओंके दान देनेका उल्लेख है।

कई लेखोंमें बौद्ध साधुओंको गुफाओंके दानदेनेका उल्लेख है। महाराज स्कन्दगुप्तके एक स्तंभ लेखमें विष्णु भगवानके निमित्त एक ग्राम दान देनेका उल्लेख है। राष्ट्रकूटवंशीय जैनधर्मानुयायी महाराज अमोघवर्षके एक लेखमें यह लिखा है कि उन्होंने घीके महसूलको राज्यकोशमें जमा न करके राज्यप्रबंधके सुभीतेके लिए ग्रामोंके मुखियों और महाजनोंके नाम कर दिया कि वे ही राज्यकी ओरसे उस रुपयेसे उचित कार्य किया करें। पालववंशीय राजा शिवस्कंन्दके एक लेखमें ब्राह्मणोंको ग्राम दान देनेका उल्लेख है। ईसवी सन् ७५४ के एक स्तंभ लेखमें एक ब्राह्मणको एक ग्रामके अर्धभाग दिये जानेका उल्लेख है और इसमें विशेषता यह है कि यह बात नागरी, और कनड़ी दोनों लिपियोंमें अलग अलग लिखी हुई है। कदम्बवंशीय[२] राजा काकुत्स्थवर्मनका एक लेख हलसीमें है जिससे मालूम होता है कि उन्होंने अपने श्रुतिकीर्ति नामक सेनापतिको, जिसने एक अवसर पर उनके प्राण बचाये थे, कुछ भूमि दान दी। राजा प्रवरसेन द्वितीयका एक लेख यह सूचित करता है कि उन्होंने चम्मक नामक ग्रामको एक सहस्र ब्राह्मणोंको दान दिया। उनमेंसे ४९ ब्राम्हणोंके नाम इस लेखमें दिये हैं। इनके अतिरिक्त इन लेखोंमें और विषय भी

१ विन्सेंट स्मिथने लिखा है कि ये साधु बौद्धोंकी अपेक्षा जैनियोंसे अधिक सम्बन्ध रखते हैं। डाक्टर फ्लीटने भी इनकी जैनियोंसे समानता बतलाई है; इनको नग्न कहा है और मक्खलि गोशालको इनका संस्थापक लिखा है। २ इस वंशके कुछ राजा कदाचित् जैन थे। उन्होंने ईसाकी छठी शताब्दिमें पल्लवों और मैसूरके गंगराजा पर विजय पाई और दक्षिणी महाराष्ट्र पर अपना आधिकार जमा लिया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। यह किसीको अविदित नहीं है कि महाराजा अशोक कैसे प्रभावशाली सम्राट् हो गये हैं। पहले वर्णन हो चुका है कि शिलाओं और स्तंभोंपर उनके अनेक लेख मिलते हैं जिनसे बहुतसी बातें मालूम हुई हैं। जैसे, उनकी राजधानी पाटलीपुत्र थी, उन्होंने बौद्ध धर्मका खूब प्रचार किया, उन्होंने कलिंग देशपर विजय पाई और उसे अपने आधीन कर लिया, इत्यादि। इन लेखोंसे महाराजा अशोकके शासनका और कई विदेशी राजाओंका भी परिचय मिलता है। मैसूरमें महाराजा अशोकका एक शिलालेख है जिसमें उनकी धार्मिक शिक्षाओंका सार इस प्रकार लिखा है:—महाराजाधिराजकी यह आज्ञा है:—"पिता और माताकी आज्ञाका पालन अवश्य करना चाहिए; एवं सर्व जीवोंका आदर करना चाहिए; सत्य अवश्य बोलना चाहिए। धर्मके ये ही सुलक्षण हैं और ये अवश्य कार्यरूपमें परिणत होने चाहिए। इसी प्रकार शिष्यको गुरुका आदर अवश्य करना चाहिए और नातेदारोंका उचित सत्कार होना चाहिए यह धर्मका प्राचीन आदर्श है—इससे आयु की वृद्धि होती है और इसके अनुसार मनुष्योंको अवश्य चलना चाहिए।" श्रवणबेलगोलाका एक लेख यह सूचित करता है कि विजयानगराधिपति हिन्दू राजा बुक्करायने श्रवणबेलगोलानिवासी जैनियों और वैष्णवोंके पारस्परिक विरोधको शान्त किया और जैनियोंको वैष्णवोंके समान स्वतंत्रता और रक्षा प्रदान की। बरौत स्तूपके एक लेखमें लिखा है कि उसके द्वारको एक शुङ्गवंशीय राजाने बनवाया। विरंचीपुरमके एक लेखसे यह मालूम होता है कि वहाँके राजाने ब्राह्मणोंके लिए विवाहका यह नियम बनाया कि वे अपने यहाँके विवाहोंमें केवल कन्यादान ही किया करें और यदि कोई ब्राह्मण अपनी पुत्रीके बदलेमें रुपया स्वीकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करेगा तो उसको राज्यदंड मिलेगा और वह बिरादरीसे च्युत कर दिया जायगा। कई चीनीप्रवासी भारतवर्षमें यात्रा करने आये थे। क्यों कि चीनीलोग बौद्धधर्मानुयायी हैं और भारतवर्ष उनके पूज्यदेव शाक्यमुनि गौतमबुद्धका जन्मस्थान है। उन्होंने बौद्ध स्तूपोंपर अपने भ्रमण और कालसम्बन्धी अनेक लेख लिखवाये थे जो बड़े महत्त्वके हैं। गौतम बुद्धके जन्मस्थान पर महाराजा अशोकका एक लेख है जो यह सूचित करता है कि बुद्धदेवकी जन्मभूमि वही है।

कुछ लेख सर्वथा ऐतिहासिक दृष्टिसे लिखे हुए मालूम होते है। जैनधर्मानुयायी महाराजा खारवेलका हाथीगुम्फा नामक गुफापर एक लेख है जिसमें उक्त महाराजके राजत्व कालके प्रथम १३ वर्षकी घटनाओंका संक्षिप्त वर्णन है। यह लेख इतिहासके लिए बड़े महत्त्वका है। इलाहाबादके अशोक-स्तंभ पर महाराज समुद्रगुप्तका भी एक लेख है जिससे उनके राज्यका अच्छा ज्ञान प्राप्त हो गया है। जूनागढ़के दो लेखोंमें सुदर्शन नामक झीलके दो बार मरम्मत होनेका उल्लेख है। मन्दार पर्वतके एक लेखमें एक तालके बननेका उल्लेख है। मैसूरमें बेलतूरके एक लेखमें एक स्त्रीके सती होनेका उल्लेख है। यहीं पर एक और लेख है जिसमें गंगदेश पर चोलवंशीय राजेन्द्र प्रथमकी विजयका वर्णन है। कांचीके लेखोंसे ज्ञान होता है कि चोलाराज्य अंतमें विजयनगरके राज्यमें मिल गया। अमरावती स्तूपके लेखोंसे आंध्रवंशका पता चलता है। तक्षशिलामें डॉ० मारशलको ५०० से आधिक सिक्के मिले हैं जिनसे कई राजाओंके कालनिर्णय होनेकी संभावना है।

४. उपयोगिता।

उपर्युक्त लेख केवल उदाहरणार्थ दिये गये हैं; इनकी संख्या तो हज़ारों पर है। यह जान कर कि उनमें क्या लिखा है यह आसानीसे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समझमें आसकता हैं कि उनमें कितनी ऐतिहासिक सामग्री मौजूद है। भारतवर्षमें प्राचीन इतिहासकी पुस्तकोंका अभाव होनेसे इन लेखोंसे बड़ी सहायता मिली है। इतना ही नहीं किन्तु बहुत सी बातें तो हमें केवल इन्हींके द्वारा मालूम हुई हैं। प्राचीन इतिहासका कालक्रम अधिकतर इन्हींके द्वारा निर्णय हुआ है क्योंकि इनमें राजाओंके नाम और संवत् लिखे हैं। पुराणोंमें बहुतसी अशुद्धियाँ और मतभेद होनेके अतिरिक्त कालक्रम भी नहीं है और कहीं कहीं है भी, तो उसमें बड़ी भारी अशुद्धियाँ रह गई हैं। डाक्टर फ्लीटने ऐसी अशुद्धिका एक बड़ा अच्छा उदाहरण दिया है। वे लिखते है कि पुराणोंके कर्ताओंने समकालीन वंशों और राजाओंको एक दूसरेके बाद मान कर उनके कालमें बड़ी गड़बड़ी कर दी है। पुराणोंमें मौर्यवंशके आरंभसे यवनोंके अंत तकका मध्यवर्ती काल २५०० वर्षसे अधिक दिया है। यह मालूम है कि मौर्यवंशका आरंभ ईसवी सन्से ३२० वर्ष पूर्व हुआ। इसमें यदि पुराणोंके २५०० वर्ष जोड़ दिये जावें तो यवनोंके राज्यका अंत लगभग २२०० ईसवी सन्में अर्थात् आजसे लगभग तीन शताब्दिके पश्चात् निकलता है! पुनः पुराणोंमें यह भी लिखा है कि यवनोंके बाद गुप्तवंशीय राजा और कई अन्य राजा हुए; यदि उपर्युक्त सन्में इन सबका भी राजत्वकाल जोड़ दिया जाय तो वर्तमानकालसे कई शताब्दि आगे निकल जायगा!! जब तक इतिहासमें कालक्रम न हो तब तक उसे इतिहास नहीं कह सकते। इन लेखोंके द्वारा हज़ारों ही ऐतिहासिक बातें मालूम हुई हैं। यहाँ पर उनका वर्णन नहीं हो सकता। नीचे केवल दो उदाहरण दिये जाते हैं; एकसे एक पौराणिक त्रुटि दूर हुई है और दूसरेसे एक सर्वसाधारणमें प्रसिद्ध बात भ्रांतिजनक सिद्ध हुई है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बौद्धपुराण महावंशमें गौतमबुद्धका निर्वाणकाल ईसासे ५४३ वर्ष पूर्व दिया है। दीपवंश पुराणमें बुद्धदेवके निर्वाण कालसे अशोकके सिंहासनारूढ़ होनेतकका समय २१८ वर्ष दिया है; इसकी पुष्टि अशोकके मैसूर और अन्य स्थानोंके लेखोंसे भी होती है। अशोकके एक लेखसे यह भी मालूम हो गया है कि वे ईसासे लगभग २७० वर्ष पहले सिंहासनारुढ़ हुए थे। अब २७० में २१८ जोड़नेसे बुद्धदेवका निर्वाण काल ईसासे ४८८ वर्ष पूर्व निश्चित होता है। इसका समर्थन और भी कई प्रबल प्रमाणों द्वारा हुआ है। अतएव महावंशमें दिया हुआ समय अशुद्ध है।

लार्ड एलिनबरा जब अफ़ग़ान-युद्ध पर गये थे, तब सुलतान महमूदके मक़बरेमेंसे सन् १८८२ ई० में किवाड़ोंकी एक जोड़ी यहाँ लाये। उन्हें किसी तरह यह मालूम हुआ कि ये किवाड़ सोमनाथ (गुजरात) के सुप्रसिद्ध मंदिरोंके हैं। लोगोंने कहा कि जब सुलतान महमूदने सोमनाथ पर आक्रमण किया था तब वह इन किवाड़ोंको अपने साथ गज़नी नगरमें ले गया था। उक्त लार्ड इन किवाड़ोंको प्राचीन और ऐसे महत्त्वकी चीज़ समझकर भारतवर्षमें ले आये। ये किवाड़ सर्वसाधारणको दिखानेके लिए बाज़ारमें घुमाकर आगरेके किलेमें रख दिये गये। किवाड़ देवदारके हैं और अब भी सर्व साधारणके अवलोकनार्थ आगरेके किलेमें रक्खे हुए हैं। बहुत कालतक इनके विषयमें यही बात मशहूर रही कि ये सोमनाथके किवाड़ हैं। परन्तु कुछ समय हुआ इन पर सुलतान महमूदका एक लेख देखा गया और उससे यह मालूम हुआ कि ये सोमनाथके किवाड़ नहीं हैं।

ऐसी ही बहुतसी बातें लिखी जा सकती हैं। इन लेखोंसे केवल ऐतिहासिक बातें ही नहीं किन्तु भूगोलसम्बन्धी बातें भी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मालूम हुई हैं। इसी उपयोगिताके कारण इन लेखोंका इतिहासमें बड़ा मान है। भारतवर्षका प्राचीन इतिहास आज कल अधिक तर इन्हींके आधारपर बनाया जा रहा है।

यद्यपि प्राप्त लेखोंकी एक बड़ी संख्या हो गई है तथापि अभी बहुतसे लेख गुप्त हैं। अभी भारतभूमिके गर्भमें बहुतसी सामग्री छिपी हुई है। जैसा पहले कहा जा चुका है ताम्रपत्रके लेख लोगोंके घरोंमें मिलते हैं। इनमेंसे बहुतसे सरकारने अपने कर्मचारियों द्वारा लोगोंके पाससे मँगवाकर विद्वानोंसे पढ़वाये हैं और बहुतसे अभी लोगोंके पास बाक़ी हैं। बहुतसे प्राप्त पाषाणलेख अभीतक पढ़े ही नहीं गये। अत एव अभी इस सम्बन्धमें बहुत काम शेष है। आगामी अन्वेषणोंमें जैनइतिहाससम्बन्धी भी बहुतसी बातोंका पता अवश्य लगेगा।

मोतीलाल जैन, आगरा।

सत्यपरीक्षक यन्त्र।

अब दुनियामें झूठ बोलनेवालोंकी गुज़र नहीं। सत्यको छुपा रखनेवाले अब छुप नहीं सकते। अदालतोंमें, मामले–मुक़द्दमोंमें मजिस्ट्रेटों और न्यायाधीशोंको अब गवाहोंके साथ जिरह करनेकी ज़रूरत नहीं रही। फिज़ूल ऊल–जलूल बातोंमें अब अदालतोंको अपना कीमती वक्त बरबाद न करना पड़ेगा। इस आश्चर्यजनक यन्त्रके आविष्कारसे अब कोई बात छुपा रखनेका उपाय नहीं रहा,– और मिथ्यावादी बातकी बातमें पकड़ लिया जायगा।

मत समझिए कि यह कोई कोरी कल्पना है या चंडू खानेका गप्प है। सचमुच ही सचझूठके पकड़नेका यन्त्र तैयार होगया है। मि०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साइरिल वार्ट नामक एक मनस्तत्त्वज्ञ विद्वानने इस यन्त्रका आविष्कार किया है।

किसी गवाहकी ज़बानबन्दी लेते समय मजिस्ट्रेटको या वकीलको पूछना पड़ता है कि तुमने अमुक घटना देखी है या नहीं? परन्तु अब यह पूछनेकी ज़रूरत नहीं रही। कल्पना कीजिए कि किसी आदमीका खून होगया और उसकी लाश रास्तेमें पड़ी हुई मिली। इस मुक़द्दमेमें गवाह देनेके लिए एक आदमी लाया गया। जिस समय रास्तेमें लाश डाली गई थी उस समय वह आदमी वहाँ उपस्थित था। अब उससे यह दरयाफ़्त करना है कि उसने यह घटना अपनी आँखों देखी है। इस समयके नियमानुसार वकील साहब पूछते हैं कि—"जिस समय रास्तेपर लाश डाली गई, उस समय तुम वहाँ उपस्थित थे?" परन्तु अब इसके बदले गवाहके सामने यंत्र रख दिया जायगा और सिर्फ़ 'रास्ता' इतना शब्द कहकर यंत्रमें चाबी भर दी जायगी। गवाहने यदि सचमुच ही घटना देखी होगी तो उसी समय उसके मनमें लाशकी बात आ जायगी और यदि वह सत्यवादी होगा तो तत्काल ही कह देगा 'लाश'। पर यदि वह इस बातको छुपाना चाहेगा तो 'लाश' नहीं कहेगा। इसका फल यह होगा कि वह विचार करेगा, अर्थात् उसके मनमें एक भावनाका उदय होगा। यह भावना उसके मस्तकका कार्य है; वह जब इस चिन्तामें पड़ेगा तब उसके मुख नेत्र आदिमें कुछ भावान्तर होगा। वह बातको छुपानेकी जितनी ही कोशिश करेगा, उतना ही उसके मुखके भावका परिवर्तन होगा और तब उसके सामने रक्खा हुआ यन्त्र उसके प्रत्येक परिवर्तनको अङ्कित कर लेगा। उसके हृदयमें जो आन्दोलन होगा—उस यंत्रसे ज़रा भी छुपा न रह सकेगा। अन्तमें या तो वह सच

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कह देगा या झूठ कह देगा, अथवा बिलकुल ही चुप रह जायगा। बस, मनस्तत्त्वज्ञ विचारक, यन्त्र देखते ही जान लेगें कि वह सच कहता है या झूठ।

मि० वार्टने इस यन्त्रके सिवा छुपी बातको जान लेनेके लिए एक और भी विलक्षण उपाय निकाला है। वे कहते हैं कि,—किसी व्यक्तिसे कोई बात पूछी जाय और वह यदि उसका ठीक उत्तर न देकर और बात कहे तो उसे कुछ न कुछ अवश्य सोचना पड़ेगा। सत्य बात तो प्रश्न करनेके साथ ही बाहर निकल पड़ती है परन्तु झूठ बातके कहनेमें, वह चाहे कैसा ही ज़बर्दस्त झूठ बोलनेवाला क्यों न हो उसे जो कुछ आयास या श्रम करना पड़ेगा उसका प्रमाण किसी तरह भी छुपा नहीं रह सकता। उसके शरीरके एक प्रत्यङ्गपर उसका प्रभाव पड़ेगा और उससे उसकी झूठ बात बातकी बातमें पकड़ ली जायगी। यह प्रत्यङ्ग मनुष्यके हाथकी हथेली है। किसी बातको छुपानेके लिए जो श्रम करना पड़ता है, उससे मनुष्यकी हथेली पसीज उठती है। यह अवश्य है कि किसीकी हथेली कम पसीजती है और किसीकी अधिक। यह जाननेके लिए गवाहकी दोनों हथेलियाँ एक पानीसे भरे हुए बर्तनमें डुबा देनी पड़ती हैं और उस जलमें टेम्परेचर या तापमान यन्त्र रख दिया जाता है। इसके बाद बात पूछने पर यदि गवाह सच कहेगा तो जलकी शीतलता या उत्तापमें कुछ भी परिवर्तन न होगा, केवल शरीरकी गर्मीसे जितना होना चाहिए उतना ही होगा, किन्तु यदि वह झूठ बोलनेकी चेष्टा करेगा तो उसकी हथेलियाँ थोड़ी बहुत अवश्य पसीज आयगीं तथा उनके प्रभावसे जलमें परिवर्तन हो जायगा और उस परिवर्तनकी साक्षी तापमान तत्काल ही दे देगा। तब न्यायधीशों और जूरियोंको सिरपच्ची न करना पड़ेगी, वे जान लेंगे कि गवाह सच कहता है या नहीं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभीतक इस यन्त्रका व्यवहार शुरू नहीं हुआ है। जब तक यहाँवालोंको इसके दर्शन न हों, तब तक आर्यसमाजी विद्वानोंको चाहिए कि वे किसी वेदमन्त्रको खोजकर सिद्ध करें कि हमारे वैदिक ऋषि हज़ारों वर्ष पहले इस यन्त्रका व्यवहार करते थे और जैन पण्डितोंको अपनी शास्त्रसभाओंमें यह कहकर ही श्रोताओंकी जिज्ञासा चरितार्थ कर देना चाहिए कि भाई, जो यह जानता है कि पुद्गलोंमें अनन्त शक्तियाँ हैं, उसे ऐसे आविष्कारोंसे जराभी आश्चर्य नहीं हो सकता।

विविध-प्रसङ्ग।

१ मनुष्यगणनाकी रिपोर्टमें जैनजातिकी संख्याका ह्रास।

पिछली १९११ की सेंससरिपोर्टके पृष्ठ १२६ में जैनोंके विषयमें जो कुछ लिखा है उसका सारांश यह है:—"भारतके धर्मोंमेंसे जैन-धर्मके माननेवाले लोगोंकी संख्या १२॥ लाख है। संख्याके लिहाज़से जैनसमाज बहुत ही कम महत्त्वका है। भारतको छोड़कर इतर देशोंमें जैनधर्मके माननेवाले बहुत नहीं दिखते। राजपूताना, अजमेर और मारवाड़ प्रान्तमें इनकी संख्या २ लाख ९३ हजार और दूसरी रियास-तों तथा अन्यान्य प्रान्तोंमें ८ लाख १९ हजार है। अजमेर, मारवाड़ और बम्बई अहातेकी रियासतोंमें उनका प्रमाण शेष जनसंख्याके साथ सैकड़ा पीछे ८, राजपूतानेमें ३, बड़ोदामें २ और बम्बईमें १ पड़ता है। दूसरे स्थानोंमें उनकी बस्ती बहुत विरल है। ये लोग अधिकतर व्यापारी हैं। पूर्वभारतमें प्रायः सभी जैन व्यापारके ही उद्देश्यसे जाकर बसे हैं। दक्षिणमें जैनोंकी संख्या थोड़ी है और उनमें प्रायः खेतीसे जीविका निर्वाह करनेवाले हैं। सन् १८९१ से जैनोंकी सख्या धीरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धीरे कम हो रही है। १९०१ में वह प्रति सैकड़े ५·८ कम हुई थी और अबकी मनुष्यगणनामें भी प्रति सैकड़ा ६.४ कम हो गई है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है जैन लोग हिन्दूसमाजव्यवस्थाके अनुयायी हैं। इसलिए उनका झुकाव अकसर अपनेको हिन्दू कहलानेकी ओर रहता है। अभी अभी उनमेंसे कुछ लोग आर्यसमाजमें जाकर मिल गये हैं। पंजाब, वायव्य प्रान्त और बम्बईके जैनोंका झुकाव हिन्दुओंके त्योहार तथा पर्व पालनेकी ओर विशेष है, इसलिए धीरे धीरे उनका हिन्दूधर्ममें मिल जाना संभव है। इन दश वर्षोंमें उनकी संख्या वायव्यप्रान्तमें प्रतिशत १०.५, पंजाबमें ६.४ और बम्बईमें ८.६ कम हुई है। बड़ोदाराज्यके अधिकारियोंका मत है कि बड़ोदाराज्यमें जो प्रतिशत १० की कमी हुई है वह लोगोंके दूसरे देशोंको चले जानेके कारण हुई होगी। इसीप्रकार अभी हाल ही जो मनुष्यगणना की गई है उससे मालूम होता है कि कुछ लोगोंने अपनेको हिन्दू बतला दिया होगा। परन्तु यह ठीक नहीं मालूम होता। मध्यप्रान्त और बरारमें भी फिरसे मनुष्यगणना की गई है, परन्तु उससे यही कहना पड़ता है कि कुछ लोग परधर्मानुयायी बन गये हैं। जैसे कि आकोला जिलेके कासार और कलार जातिके जैन हिन्दुओंमें मिल गये हैं। मध्यभारतमें जो प्रतिशत २२ की कमी हुई है उसके विषयमें भी यह कहना ठीक नहीं कि वह भी बड़ोदाके समान लोगोंके विदेश जानेके कारण हुई होगी। हमारी समझमें उनकी यह कमी प्लेगके कारण हुई है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं। क्योंकि जैन लोग शहरोंमें ही कसरतसे रहते हैं और उनकी सघन वस्तियाँ बारबार प्लेगके मुखमें पड़ जाया करती हैं।" रिपोर्टके इन मन्तव्योंपर जैनोंका विचार करना चाहिए।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२. पूजाप्रिय पण्डितोंकी पदवियाँ।

पदवियोंके विषयमें हम पिछले द्वितीय अंकमें एक नोट लिख चुके हैं। उससे पाठकोंने ख़याल किया होगा कि यह पदवियोंका रोग श्रावक या गृहस्थोंमें ही प्रविष्ट हुआ है; परन्तु सहयोगी जैनहितेच्छुसे मालूम हुआ कि अब जैनसाधुओं पर भी इसने आक्रमण किया है। अभी कुछ ही दिन पहले पैथापुर नामक एक ग्राममें श्रीबुद्धिसागर नामक श्वेताम्बर साधु 'शास्त्रविशारद जैनाचार्य' की पदवीसे विभूषित किये गये हैं। लगभग दो वर्ष पहले उक्त साधुमहाराज जब बम्बईमें थे, तब ही उन्हें यह पदवी दी जानेका प्रयत्न किया गया था; परन्तु सुनते हैं कि उस समय मुनिमहाराजने पदवी लेनेसे इंकार कर दिया था और इसका कारण यह था कि आपके संस्कृतशिक्षक पं० श्यामसुन्दराचार्यने काशीके पण्डितोंसे पदवी दिलानेके लिए जो यत्न किया था, किसीने उसकी पोल खोल दी थी। परन्तु अब उसे लोग भूल गये होंगे और कमसे कम एक ग्रामके लोग तो उससे अपरिचित ही होंगे, शायद इसी विश्वाससे महाराजने इस समय उक्त पदवी ग्रहण कर ली! इसमें सन्देह नहीं कि काशीके ब्राह्मण पण्डित पदवियोंके देनेमें बहुत ही उदार हैं और भक्ति तथा पूजासे इन देवताओंको प्रसन्न करना बहुत ही साधारण बात है; परन्तु जैनधर्मके अनुयायियोंके लिए यह विषय बहुत ही विचारणीय है कि वे इन पूजाप्रिय पण्डितोंकी दी हुई पदवियोंके भारसे नीचे गिरेंगे या ऊपर उठेंगे।

इस नोटके लिख चुकनेपर हमने सुना कि काशी स्याद्वादविद्यालयके अधिष्ठाता बाबू नन्दकिशोरजीको अभी थोड़े दिन पहले जो 'विद्यावारिधि' की पदवी प्राप्त हुई है वह भी काशीके पण्डितोंकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दी हुई है ! हम नहीं सोच सकते कि एक काम करनेवाले पुरुषने इस पदवीके पानेका प्रयत्न क्या समझकर किया होगा।

---

३ संस्थाओंके पाप और समाचारपत्र।

समाचारपत्रोंसे जितना अधिक लाभ होता है, उतनी ही अधिक उनसे हानि भी होती है यदि उनका सम्पादन निरपेक्ष दृष्टिसे सत्यका उपासक बनकर न किया जाता हो। इस समय समाचारपत्र हमारे नेत्रों और कानोंका अधिकार धीरे धीरे छीनते जा रहे हैं—नेत्रों और कानोंके होते हुए भी हम समाचारपत्रोंके नेत्रों और कानोंपर विश्वास करनेके लिए वाध्य होते जा रहे हैं। इस लिए आवश्यक है कि हम इन नये नेत्रों और कानोंको ऐसे बनावें जिससे हमें कभी धोखा न खाना पड़े—और जबतक ऐसा न हो तबतक केवल इन्हींके अवलम्बन पर न रहें। जैनसमाजकी तीन चार संस्थाओंके विषयमें हमें अभी अभी जो समाचार मिले हैं, उनसे हम यह बात कहनेके लिए लाचार हुए हैं कि हमारे समाचारपत्र सर्व साधारणको बड़ा भारी धोखा दे रहे हैं और उक्त संस्थाओंके भीतरी मालिन्य तथा पाशविक अत्याचारोंको छुपाकर उन्हें आदर्श संस्था बतला रहे हैं। जिस समय हमने एक संस्थाके कुछ बालकोंकी चिट्ठियाँ पढ़ीं, उस समय उनके ऊपर होते हुए घृणित अत्याचारोंकी पीड़ासे हमें रो आया ! हमें पहले विश्वास न था कि जैनसमाजमें ऐसे ऐसे नरपशु भी हैं जो संस्थाओंके संचालक बनकर छोटे छोटे अनाथ बच्चोंके साथ ऐसी नारकी लीला कर सकते हैं और इस पर भी कोई उनके पंजेसे संस्थाको छुड़ानेका साहस नहीं कर सकता है। थोड़े ही दिन पीछे जब हमने एक प्रतिष्ठित गिने जानेवाले पत्रमें इसी संस्था-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की और इसके संचालककी प्रशंसाके गीत पढ़े, तब हमें मालूम हुआ कि समाचारपत्रोंसे हमारी हानि भी कितनी हो रही है। एक दूसरी संस्थाके आनरेरी व्यवस्थापक महाशय भी कई विद्यार्थियोंके साथ अपनी राक्षसी वासनायें तृप्त किया करते थे और अपने पृष्ठपोषकोंकी सहायतासे लोगोंकी दृष्टिमें पुरुषोत्तम बन रहे थे। अभी कुछ ही दिन पहले एकाएक आपकी पैशाचिक लीला प्रगट हो गई और गहरी मार खाकर आप संस्थासे अलग हो गये। यह सब होनेपर भी आश्चर्य यह है कि समाचारपत्रोंने आप पर कलङ्कका एक भी छींटा न पड़ने दिया। एक दो संस्थायें और भी ऐसी हैं जिनके भीतर खूब ही घृणित कर्म होते हैं परन्तु बाहरसे वे बहुत ही उज्ज्वल और पवित्र बन रही हैं। कुछ महात्माओंकी उनपर इतनी गहरी कृपा है कि अभी उनका स्वरूप लोगोंपर प्रगट होनेकी आशा नहीं की जा सकती; परन्तु यह निश्चय है कि सोनेके चमकदार घड़ेमें भरा हुआ भी मैला एक न एक दिन अपनी भीतरी दुर्गन्धिसे प्रगट हुए बिना न रहेगा। अपनी संस्थाओंको इन पापोंसे बचानेके लिए हमें समाचारपत्रोंकी दशा सुधारना चाहिए, अपनी बुद्धि, नेत्र और कानोंको काममें लाना चाहिए और साथ साथ जहाँ संस्थायें हों वहाँके स्थानीय लोगोंका यह कर्तव्य होना चाहिए कि वे उनपर तीक्ष्ण दृष्टि रक्खें और उनकी भीतरी दशाओंसे सर्व साधारणको परिचित करते रहें। समाचारपत्रोंमें विश्वस्त समाचार प्रगट न होनेका एक कारण स्थानीय लोगोंकी उपेक्षा भी है।

---

४. संस्थाओंको योग्य संचालक नहीं मिलते।

हमारे यहाँ नई नई संस्थायें खुल रही हैं और खोलनेका उत्साह भी यथेष्ट दिखलाई देता है; परन्तु यह बड़ी ही चिन्ताकी बात है कि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उनके चलानेके लिए योग्य पुरुष नहीं मिलते। जिस संस्थाको देखिए उसीमें योग्य पुरुषोंकी कमी दिखलाई देती है। क्योंकि अभी तक उच्चशिक्षाप्राप्त अनुभवी सदाचारी और स्वार्थत्यागी पुरुषोंका ध्यान ही इस ओर नहीं गया है। हमको भय है कि यदि यही दशा और कुछ समय तक रही और उपर्युक्त अर्द्धदग्ध विषकुम्भपयोमुख चरित्रहीन महात्माओंके ही हाथमें संस्थाओंकी बागडोर बनी रही तो लोगोंके बढ़ते हुए उत्साह और औदार्यपर बड़ा भारी धक्का लगेगा और उन्नतिके मार्गमें हम फिरसे पिछल जावेंगे। क्या इस समय भी शिक्षित जनोंको हमारी इन संस्थाओंपर दया न आयगी?

---

५. जैनसिद्धांतभास्कर।

जैनसिद्धान्तभास्करके पहले अंकोंको और उसके कार्यकर्त्ताओंके उत्साहको देखकर हमने समझा था कि जैनसमाजमें अपने ढँगका यह एक निराला ही पत्र होगा; और ऐतिहासिक लेख प्रकाशित करके लुप्त जैन इतिहासका उद्धार करेगा; परन्तु देखते हैं कि हमारी यह आशा निराशामें परिणत हो रही है। त्रैमासिक होकर भी उसके वर्षों तक दर्शन नहीं होते हैं। लगभग ढाई वर्षमें उसकी केवल दो प्रतियाँ या तीन अंक प्रकाशित हुए हैं। चौथा अंक कब तक प्रकाशित होगा, इसका अभी तक कुछ ठिकाना नहीं है। हम आशा करते हैं कि जैन सिद्धान्तभवन, आराके संचालकगण इस ओर दृष्टि डालेंगे और जैन-समाजके इस अभिनवपत्रको समयपर निकालनेकी चेष्टा करेंगे। इस नोटके छप चुकनेपर जैनमित्रसे मालूम हुआ कि भास्करका चौथा अंक प्रेसमें जा चुका है। खुशीकी बात है।

---

६. जैनतत्त्व-प्रकाशक।

इटावाके जैनतत्त्वप्रकाशकके भी सात आठ महिनेसे दर्शन नहीं हुए हैं। बीचमें सुना था कि कई महिनोंका एक संयुक्त अंक निकलनेवाला

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है; परन्तु उसका भी अब तक पता नहीं है। यों तो जैनसमाजमें बहुत ही कम पत्र ऐसे हैं जो समयपर निकलते हों। सब ही कुछ न कुछ विलम्बसे निकलते हैं; परन्तु इन नवजात पत्रोंका विलम्ब बहुत ही खटकता है। शुरूमें ये बड़ा जोश-खरोश दिखलाते हुए दर्शन देते हैं और पीछे गहरी डुबकी ले जाते हैं। हमारी समझमें इसका कारण अनुभवकी कमी और उत्साहकी अधिकता है। काम जब सिरपर पड़ता है, तब मालूम होता है कि वह कठिन है। पर नये जोशवाले इस बातपर विचार नहीं करते और अन्तमें नाना असुविधाओंमें पड़कर डुबकी लेनेके लिए लाचार होते हैं। अच्छा हो, यदि कर्मक्षेत्रमें पैर रखनेके पहले ही आनेवाली असुविधाओंपर थोड़ासा विचार कर लिया जाय। इस नोटके लिखे जानेके बाद मालूम हुआ कि तत्त्वप्रकाशक बन्द कर दिया गया!

---

७. द्रव्यदाता और जीवनदाता।

किसी भी आन्दोलन या प्रयत्नका फल जल्दी दृष्टिगोचर नहीं होता; बहुत समय तक उसकी प्रतीक्षा करनी पड़ती है। विशेष कर ऐसे समाज या समूहके लिए किये हुए आन्दोलनका फल तो देरसे दृष्टिगोचर होना ही चाहिए जो मृतप्राय हो रहा हो, जिसकी हिलनेचलनेकी शक्ति नष्ट हो गई हो, जो किसी भी नई बातको शंकाकी दृष्टिसे देखता हो और अपनी पुरानी लकीरका फकीर बना हुआ हो। लगभग २० वर्षके लगातार आन्दोलनके बाद अभी अभी जैनसमाजके करवट बदलनेके लक्षण दिखलाई दिये हैं और अब आशा होने लगी है कि वह कुछ समयमें एक सजीव समाजके रूपमें खड़ा हो सकेगा। इसके पहले बहुतसे आन्दोलन करनेवालोंको कभी कभी बड़ी ही निराशा होती थी और वे समझते थे कि यह समाज सर्वथा ही निर्जीव हो गया है–इसमें चेतनता लानेका प्रयत्न करना निष्फल ही होगा। परन्तु सौभाग्यका विषय है कि अब हम उक्त निराशाकी सीमाको पार गये हैं और आशाके हरे भरे क्षेत्रको अपने सामने देख रहे हैं। अभी अभी जो हमारे यहाँ दो लाख और चार लाखके दो बड़े बड़े दान हुए हैं, उनके कारण निराशा हमारे हद्दसे निकल ही रही थी कि बाबू सूरजभानजी वकील और बाबू जुगलकिशोरजी मुख्तारके स्वार्थत्याग व्रत ग्रहण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करनेका समाचार मिला और आशा अपने दोनों हाथोंसे आश्वासन देती हुई दिखलाई दी। किसी भी समाजकी उन्नतिके लिए दो बातोंकी सबसे अधिक अवश्यकता है:—एक तो द्रव्यकी और दूसरे कार्य करनेवाले स्वार्थत्यागी मनुष्योंकी। यद्यपि हमें अपने अभीष्टकी प्राप्तिके लिए सेठ हुकमचन्दजी जैसे सैकड़ों धनिकोंकी और बाबू सूरजभानजी तथा जुगलकिशोरजी जैसे सैकड़ों हजारों स्वार्थत्यागियोंकी ज़रूरत होगी-दो चार धनिकों और त्यागियोंसे हमारा काम नहीं चल सकेगा, तो भी इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हम सफलताके मार्गपर जा रहे हैं; द्रव्यदाता और जीवनदाता दोनोंने ही हमें एक साथ दर्शन दिये हैं और हमारे हृदयमें एक नवीन ही उत्साह और बलका संचार कर दिया है। हमारा दृढ विश्वास होगया है कि अब जैनसमाज उठेगा, बलवान् होगा, उद्योगशील होगा और एक दिन सारे उन्नत समाजोंके मार्गका सहचर होगा। इन उदाहरणोंसे हमें जानना चाहिए कि हमारे प्रगति और उन्नतिसम्बन्धी कोई भी आन्दोलन व्यर्थ न जावेंगे—उनका अवश्य ही प्रभाव पड़ेगा। भले ही सफलता जल्दी न हो, पर होगी अवश्य। हमें निराश न होना चाहिए और कष्टसाध्यसे कष्टसाध्य विषयका भी आन्दोलन करनेसे न चूकना चाहिए। यह आन्दोलनका ही प्रसाद है जो आज केवल प्रतिष्ठाओंमें ही अपने धनको अंधाधुंध खर्च करनेवाली जातिमें विद्यासंस्थाओंके लिए भी लाखों रुपया देनेवाले उदार पुरुष दिखलाई देने लगे हैं और जीवनभर रुपया ढालनेकी मशीन बने रहनेवाले लोगोंमें भी जाति और धर्मसेवाके लिए जीवन उत्सर्ग करनेवालोंके दर्शन होने लगे हैं।

---

८. महाराष्ट्र जैनसभाके वार्षिकोत्सवमें धींगाधींगी।

महासभाके जल्सोंमें और इस ओरकी प्रान्तिकसभाओंके जल्सोंमें कई बार धींगाधींगीकी नौबत आ चुकी है; परन्तु दक्षिण प्रान्तकी सभायें इससे साफ़ बची हुई थीं। इससे हम सोचते थे कि दक्षिणके जैनी भाई बहुत ही शान्त और विचारशील हैं; चुपचाप अपना काम किये जा रहे हैं। किन्तु अभी ता० १०—११—१२ अप्रैलको दक्षिणमहाराष्ट्र जैनसभाका जो अधिवेशन हुआ उसकी रिपोर्टसे मालूम हुआ कि दक्षिणी भाई हम सबका भी नम्बर ले गये। कुछ महात्माओंने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस मौक़ेपर यहाँ तक सिर उठाया कि एक दिन सभाका काम बन्द रखना पड़ा, सभामंडप उखाड़के फेंक देना पड़ा और अन्तमें पुलिस तककी सहायता लेनी पड़ी, तब कहीं जाकर शान्ति हुई और सभाके अधिवेशन किये जा सके! पाठकोंको मालूम होगा कि श्रीयुक्त अण्णापा बाबाजी लट्ठे एम. ए. महाराष्ट्रसभाके प्रधान स्तम्भ हैं। उक्त सभाने अब तक जो कुछ सफलता प्राप्त की है उसमें आपका हाथ सबसे अधिक रहा है। कोल्हापुर बोर्डिंगके इस समय आप सेक्रेटरी हैं। आप एक स्वाधीन प्रकृतिके मनुष्य हैं, इसलिए कुछ लोगोंकी आँखोंमें आप शुरूसे ही खटक रहे हैं। ये लोग नहीं चाहते कि लट्ठे महाशय बोर्डिंगके सेक्रेटरी रहें। इसके लिए वे लगातार कई वर्षोंसे प्रयत्न कर रहे हैं; परन्तु सफलता नहीं होती। कई बार सभामें पेश करके भी उन्हें इस विषयमें निराश होना पड़ा है; क्योंकि सभाका बहुमत लट्ठे महाशयके ही पक्षमें होता था। इससे वे बहुत ही चिढ़ गये थे और जैसे बने तैसे अपना मनोरथ सिद्ध करनेका मौक़ा देख रहे थे। इसी समय सभाका वार्षिक अधिवेशन हुआ और उक्त मंडलीने जिसमें कि पंडित कल्लापा भरमापा निटवे और श्रीयुत बापू अण्णा पाटील मुख्य हैं—लगभग २०० गुंडोंको एकत्र करके बोर्डिंगको अपने हस्तगत करनेका और लट्ठे सा० को बोर्डिंगसे बलपूर्वक अलग करनेका प्रयत्न किया। जब ये लोग प्रत्यक्ष रूपसे बखेड़ा करनेके लिए तैयार हो गये, तब अधिवेशनके सभापति श्रीयुक्त जयकुमारजी चवरे, बी. ए., एल एल. बी. और दूसरे मुखियोंने इस झगड़ेको आपसमें ही मिटा डालनेका शक्तिभर प्रयत्न किया। कहा कि आप लोग सभामें यह प्रस्ताव पेश करें कि लट्ठे सा० बोर्डिंगके सैकेटरी न रक्खे जावें और सभा इसका जो फैसला करे उसे सबको मानना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चाहिए। परन्तु इसमें ज़रा भी सफलता न हुई। क्योंकि उक्त मण्डली जो कुछ करना चाहती थी वह सब अन्यायपूर्वक। उसने साफ़ कह दिया था कि सभाके बहुमतको हम कुछ नहीं समझते। यदि तुम लड्डेको बोर्डिंगसे अलग न करोगे तो हम सभामें दंगा करेंगे और लड्डेको घरसे निकालकर बाहर कर देंगे। इसी मौक़ेपर मंडलीकी ओरसे एक विज्ञापन प्रकाशित किया गया था। उसमें लिखा था कि "लड्डेने अपनी भतीजीका व्याह शास्त्रविरुद्ध, रूढ़िविरुद्ध और सभाके प्रस्तावके विरुद्ध किया, इस लिए उन्हें सभाके कामसे अलग कर देना चाहिए।" इसपर लड्डे सा० ने कहा कि "चतुर्थ और पंचम जातिमें परस्पर विवाहसम्बन्ध होना चाहिए। इसे मैं अच्छा समझता हूँ। इसी लिए मैंने अपनी भतीजीका विवाह चतुर्थ जातिके लड़केके साथ किया है और आगे भी मैं ऐसे विवाह करूँगा। सभा चाहे तो इस विषयमें अपनी प्रसन्नता या नाराजी प्रकट कर सकती है। इस कारणसे अथवा और किसी कारणसे यदि सभाको मेरी आवश्यकता न हो, तो मैं बोर्डिंगका ही क्यों सभाकी सभासदीका भी सम्बन्ध तोड़ देनेके लिये तैयार हूँ।" लड्डेने अपना यह विचार सभाके समक्ष भी प्रकट कर दिया। परन्तु सभाको यह मालूम हो चुका था कि इस बखेड़ेका कारण चतुर्थ-पंचम विवाह नहीं किन्तु दश बारहवर्षका पुराना वैर है और इस लिए विपक्षीगण लड्डे सा० को अलग करके उनकी जगह अपने एक मुखियाको—न कि सभाके चुनावके अनुसार किसी दूसरे योग्य पुरुषको—बिठाना चाहते हैं, इसलिए उसे लाचार होकर इस ओर दुर्लक्ष्य करना पड़ा और अन्तमें पुलिसके द्वारा शान्ति करानी पड़ी। इसके बाद सभाका कार्य कुशलतापूर्वक समाप्त हुआ। सभाने अबकी बार एक नया पाठ सीखा और ऐसे बखेड़ोंसे बचनेके लिए उसने अपनी नियमावलीका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बहुत कुछ संशोधन और परिवर्तन किया। इस वृत्तान्तसे इस वाक्यकी वास्तविक सार्थकता मालूम होती है कि "उन्नतिका मार्ग विरोधके दाँतोंमेंसे होकर है।" जब हम आगे बढ़े हैं, तब इस प्रकारके विघ्न और कष्ट आवेंगे ही। विघ्नोंसे घबड़ाना नहीं चाहिए। इस प्रकारके विरोधोंको हमें बुरा भी न समझना चाहिए। क्योंकि इनसे हमारी जीवनी शक्तिका पता लगता है और काम करनेकी शक्तिको उत्तेजन मिलता है।

---

९. अनन्त जीवन या दीर्घायुष्यकी प्राप्ति।

मथुराके पंचम वैद्य-सम्मेलनमें श्रीयुक्त वैद्य भोगीलाल त्रीकमलालका इस विषयपर एक पाण्डित्यपूर्ण लेख पढ़ा गया था। इस लेखमें वैद्यजीने कई विलक्षण और विचारणीय बातें कहीं हैं। आप कहते हैं कि मनुष्योंके लिए मृत्यु स्वाभाविक नहीं है। वैज्ञानिक विद्वानोंका मत है कि यह अभी तक किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं हो सका है कि मृत्यु स्वाभाविक है। ऐसा एक भी कारण शरीरविज्ञान शास्त्र नहीं बतला सकता, जिससे प्रकृतिके और स्वास्थ्यके नियमोंका अच्छी तरह पालन करनेपर भी मनुष्यको मृत्युके अधीन होना ही पड़े। विविध शारीरिक क्रियाओंके ऊपर योग्य उपायोंके द्वारा कमसे कम इतना अधिकार तो मनुष्य अवश्य प्राप्त कर सकता है कि जिससे अपने शरीरको दीर्घ काल तक जीवित रख सके। मनुष्यका शरीर ऐसे यंत्रके समान नहीं है जिसका निरन्तर घर्षण होते रहनेसे क्षय हो जाता है। क्योंकि वह निरन्तर ही अपने आपको नवीन बनाता रहता है। हमें प्रतिदिन नया शरीर मिलता रहता है। प्रतिदिन ही हमारी जन्मतिथि है। क्योंकि हमारे शरीरकी क्षय और नवीकरणकी क्रिया कभी नहीं रुकती। अर्थात् मलविसर्जन और नवीकरणकी क्रियाओंमें सामञ्जस्य रखनेसे शरीरका सर्वथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्षय होना रोका जा सकता है। आयुके क्षय करनेवाले कारणोंको हम नहीं जानते अथवा जाननेपर भी उन्मत्तइन्द्रियोंके अधीन होकर उनकी परवा नहीं करते, इसी लिए हम अमरत्वकी प्राप्ति नहीं कर सकते। इस देशमें पहले ऐसे अनेक महात्मा हो गये हैं जिन्होंने मृत्युपर विजय प्राप्त की थी। दीर्घायु प्राप्त करनेवालोंके तो सैकड़ों दृष्टान्त अब भी मिलते हैं। इसके बाद वैद्यजीने १०० वर्षसे लेकर २०७ वर्ष तककी आयुवाले देशी और विदेशी १५ स्त्री पुरुषोंके विश्वसनीय उदाहरण देकर दीर्घायुष्यकी आवश्यकता बतलाते हुए उसकी प्राप्तिके उपाय वर्णन किये हैं। वे उपाय संक्षेपमें ये हैं:—

१ **ब्रह्मचर्य**—दीर्घायुष्यसे इसका बहुत बड़ा सम्बन्ध है। अष्टांग ब्रह्मचर्य (दर्शन, स्पर्शन, भाषण, विषयकथा, चिन्तन और क्रीडा आदि) जितना ही अधिक कालतक पाला जायगा, जीवन उतना ही अधिक चिरस्थायी होगा। यदि जीवनपर्यंत ब्रह्मचर्य पालन न किया जासके, तो कमसे कम विवाहित जीवन धारण करके इन्द्रियनिग्रहका अभ्यास अवश्य करते रहना चाहिए। सुश्रुतके मतसे ४० वर्षकी अवस्थातक समस्त धातुओंकी पुष्टि होती रहती है तथा ४८ वर्षमें सांगोपाग शरीरकी समस्त धातुयें सम्पूर्णताको प्राप्त हो जातीं हैं। प्राणीविज्ञानशास्त्रने सिद्ध किया है कि दूध पीनेवाले (mammalia) प्राणियोंकी शरीररचनाका क्रम पूर्ण होनेमें जितना समय व्यतीत होता है उससे पाँचगुणी उनकी आयु होती है। इस नियमके अनुसार जो ४८ वर्ष तक अखण्ड ब्रह्मचर्य पालन करेगा और आरोग्यशास्त्रके नियमोंके अनुकूल चलेगा, वह अवश्य ही २४० वर्षकी आयु प्राप्त कर सकेगा। इसी तरह ४० वर्ष तक ब्रह्मचर्य पालन करनेवाला २०० वर्ष तक और २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य पालनेवाला १२५ वर्षकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवस्था तक जीवित रह सकता है। छान्दोग्य उपनिषत्में कहा है कि ४८ वर्षकी अवस्था तक ब्रह्मचर्य पालन करनेवाला पवित्रात्मा ४०० वर्ष तक जी सकता है। २ **मानासिक विश्वास**—सदा यह विश्वास रक्खो कि हम बहुत काल तक जीते रहेंगे। एक ऐसे काल्पनिक चित्रको अपने हृदयमें सदा ही अंकित किये रहो कि जो शतवर्षायुष्क, स्वस्थ और सुन्दर हो। इससे न्यून जीवनकी इच्छा कभी मत करो। अपनी शक्तिपर विश्वास रक्खो। ३ **उत्तमस्वभाव**—अपनी आदतोंको ऐसी बनाओ जिससे तुम्हारी मानसिक स्थिति सदैव आनन्दमय, उत्साहयुक्त, दृढ, साहसपूर्ण, उच्चभावनामय रहे और जीवनमें नये अणु पैदा होनेसे जीवनी शक्ति बढ़ा करे। जीवनक्रियाकी अन्तरायस्वरूप बुरी आदतोंको छोड़ दो। ४ **एकाग्रता**—प्रत्येक अच्छे विषयमें मनको एकाग्र करनेका अभ्यास करो। किसी भी कार्यको लापरवाहीसे या आफ़त टालनेके ढँगसे मत करो। ५ **व्यायाम**—शक्तिके अनुसार नियमित रूपसे व्यायाम या कसरत किया करो जिससे शरीर यौवनपूर्ण और सुदृढ बना रहे। ६ **निश्चित उद्देश्य**—अपने जीवनका एक निश्चित उद्देश्य रक्खो। लक्ष्यहीन मन बिना पतवारके जहाज़ समान है। ७ **श्वासोच्छ्वास क्रिया**—श्वास लेनेकी शक्तिको अच्छी तरहसे बढ़ाओ। खूब स्वच्छ और ताजी हवाका सेवन करो। जिस कमरेमें हवाका यथेच्छ विहार न होता हो, उसमें कभी मत सोओ। ८ **घूमना फिरना**—निरन्तर दूर दूर तक घूमनेको जाओ। उस समय अच्छी तरहसे श्वास प्रश्वास लो, शरीरको ढीला रक्खो और प्राकृतिक सौन्दर्यका अवलोकन करो जिससे नवीन उत्साह और उमंग पैदा होती रहे। ९ **स्नान**—शारीरिक और श्वासोच्छासक व्यायामके बाद प्रतिदिन ठंडे जलसे स्नान करो। सप्ताहमें दो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बार सोनेके पहले उष्ण जलसे स्नान करो और कभी कभी सारे शरीरको सूर्य किरणोंका स्नान भी कराया करो। **१० भोजन**—जल्दी पचनेवाला और शरीरको पुष्ट करनेवाला भोजन दो बार ग्रहण करो। भोजनको अच्छी तरह चबा कर गलेके नीचे उतारो। मांस, काफ़ी, चाह आदिको हाथसे भी मत छुओ। भोजनके साथ पानी या प्रवाही पदार्थ मत पियो। भोजनके बीचमें बहुत धीरे धीरे थोड़ा पानी पीना चाहिए। इससे वृद्धावस्था लानेवाले कारण दूर होते हैं और युवावस्था तथा सौन्दर्य प्राप्त होता है। मिताहारी बनो। सच्ची भूख लगने पर भोजन करो। यदि मिल सके तो प्रतिदिन एक सेव अवश्य खाओ। इस फलमें जीवनके नवीन तत्त्व उत्पन्न करनेका विशेष गुण है। **११ निद्रा**—७–८ घंटेकी निद्रा लो और शरीरको शिथिल करके आराम करो। चुस्त कपड़े कभी मत पहनो। सादे और स्वच्छ कपडे पहनो। **१२ फुटकर बातें**—अत्यावश्यक और अल्पावश्यक कामोंका बोझा अपने सिर पर मत लो। काम करनेकी पद्धति सीखो। जोखिमोंका ख़याल रखके चलो। शरीरमें जो नाश और नवीकरणकी क्रिया चला करती है उसे अच्छी तरह समझनेका प्रयत्न करते रहो। इस सिद्धान्त पर विश्वास रक्खो कि अपने जीवन और शरीरमें परिवर्तन करनेके लिए हम स्वयं शक्तिवान् हैं। बूढ़े होनेके विचारोंको कभी पास मत आने दो। जवानीके सशक्त विचार स्थिर रक्खो। दीर्घजीवनकी भावनाको दृढ बनाते रहो। सदैव प्रसन्न और आनन्दित रहो। धीरे बोलनेका अभ्यास करो। क्रोध, अभिमान, भय, लोभ, स्वार्थपरता, ठगाई, विश्वासघात, दुर्व्यसन, दुराचार, निन्दा, चुगली आदि दुर्गुणोंको छोड़ दो। सहनशीलता, उदारता, परोपकार, दया, प्रेम आदि गुणोंको अपनाओ। दीर्घजीवन, आरोग्य और सौन्दर्यके विषयमें

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अपने मनोबलको दृढ करो जिससे अनन्त जीवन, महान् पराक्रम और प्रभाव आदिसे तुम्हारी मित्रता हो।

---

७ जैन पत्रोंकी आर्थिक अवस्था।

जैनसमाजको इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए कि उसके साप्ताहिक पाक्षिक या मासिक किसी भी पत्रकी आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं है। ऐसा एक भी पत्र नहीं है जो मुनाफ़ेके लिए निकाला जाता हो अथवा जिसने कुछ मुनाफ़ा उठाया हो। आप चाहे जिस पत्रका वार्षिक हिसाब मँगाकर देख लीजिए वह बराबर घाटेमें ही उतरता हुआ मिलेगा। इसी घाटेके कारण अनेक पत्र बन्द हो जाते हैं और आगे उनसे जो लाभ होता उससे समाजको वंचित रहता पड़ता है। जो पत्र उनके संचालकोंके साहस अध्यवसाय और प्रयत्नसे घाटा सहकर भी किसी तरह चल रहे हैं उनकी अवस्थामें भी जितनी उन्नति होना चाहिए उतनी नहीं होती। हो भी नहीं सकती। क्योंकि अच्छे उपयागी लेखोंके लिखने और संग्रह करनेके लिए, पत्रका आकार सौन्दर्य बढ़ानेके लिए, चित्रादि प्रकाशित करनेके लिए, समयपर प्रकाशित करनेके लिए और उत्तम व्यवस्था रखनेके लिए रुपयोंकी ज़रूरत होती है और यथेष्ट रुपया तब हो जब ग्राहकोंकी संख्या अधिक हो। परन्तु ग्राहक मिलते नहीं और ऐसी दशामें ये पत्र किसी तरह रोते झींकते हुए चलाये जाते हैं। न उनमें ताजे और विश्वस्त समाचार रहते हैं, न उच्चश्रेणीके प्रगतिकारक लेख रहते हैं, न मनोरंजनके साथ साथ शिक्षाकी सामग्री रहती है, न धर्म और समाजकी अवस्थाकी गभीर आलोचना रहती है और न साहित्यकी चर्चा होती है। फल इसका यह हुआ है कि समाजमें ज्ञानकी वृद्धि और नये विचारोंकी बाढ़ बन्द हो रही है। उत्तेजन और कार्यक्षेत्रके अभावसे न तो लेखक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ही तैयार होते हैं और न अच्छे विचारोंका विस्तार तथा ज्ञानकी अभिरुचि बढ़ती है। वर्तमान समयमें समाचारपत्र और मासिकपत्र उन्नतिके सबसे बड़े साधन हैं। इस बातको सब ही स्वीकार करते हैं। इस लिए इनकी दशा सुधारना मानो अपनी ही दशा सुधारना है। हमारी कुछ परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि यदि हम इस बातको समयपर छोड़ दें—यह सोच लें कि धीरे धीरे ग्राहकसंख्या बढ़ेगी और उससे पत्रोंकी दशा अच्छी हो जायगी, तो ठीक न होगा। ग्राहकसंख्या थोड़ी बहुत अवश्य बढ़ती रहेगी, परन्तु वह इतनी नहीं बढ़ सकती जितनी कि दूसरोंके पत्रोंकी बढ़ सकती है। क्योंकि एक तो हमारी संख्या बहुत ही थोड़ी है और फिर उसमें भी कई सम्प्रदाय कई पंथ और कई भाषायें हैं। ऐसी अवस्थामें जबतक कोई खास प्रयत्न न किया जाय, तबतक हमारे पत्रोंकी दशा अच्छी नहीं हो सकती। या तो धनिक इन पत्रोंको इतनी सहायता दे देवें जिससे केवल ग्राहकोंके भरोसेपर इन्हें न रहना पड़े या धनिकोंकी संस्थाओंके ओरसे ही दो चार अच्छे पत्र निकाले जावें जिन्हें धनकी विशेष चिन्ता न रहे। यदि धनिकोंका लक्ष्य इस ओर न हो अथवा उनकी अधीनतामें विचारस्वाधीनताके नष्ट होनेकी संभावना हो, तो शिक्षित और मध्यम श्रेणीके लोगोंको ही इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए। ऐसे लोग यदि प्रतिवर्ष दो दो चार चार रुपया ही पत्रोंकी सहायताके लिए दे दिया करें अथवा दश दश पाँच पाँच ग्राहक ही बना दिया करें तो पत्रोंकी स्थिति बहुत कुछ सुधर सकती है। इसके सिवा यदि सम्पादक लोक साम्प्रदायिक झगड़ोंमें विशेषतासे न पड़ें और लोगोंमें विचारसहिष्णुता बढ़ाई जावे, तो भी ग्राहकसंख्या बढ़ सकती है। क्योंकि ऐसा होनेसे प्रत्येक जैनपत्रको तीनों सम्प्रदायके लोग पढ़ सकेंगे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

"कर भला होगा भला।"

(१)

आज हम अपने पाठकोंको उस समयकी एक आख्यायिका सुनावेंगे जब भारतवर्ष उन्नतिके शिखरपर चढ़ा हुआ स्वर्गीय सुखोंका अनुभव करता था; वह सब प्रकारसे स्वाधीन, सुखी, सदाचारी और शान्त था; धनी मानी उद्योगी और ज्ञानी था और इसके साथ ही दूसरे देशोंको क्षमा, दया, परोपकार आदि सद्गुणोंकी शिक्षा देता था। उस समय यहाँके व्यापारी दूरदूरके देशों और द्वीपोंमें जाया करते थे और हजारों विदेशी व्यापारी भारतके मुख्य मुख्य शहरोंमें दिखलाई देते थे। आजकालके कलकत्ता और बम्बई जैसे समृद्धशाली नगर भी उस समय अनेक थे और विपुल व्यापार होनेके कारण उनमें खूब चहलपहल रहती थी। छोटे नगरों, कसबों और गाँवोंकी अवस्था बहुत ही अच्छी थी। प्रजाका जीवन बहुत ही सुखशान्तिसे व्यतीत होता था।

बौद्धधर्मका वह मध्याह्नकाल था। जहाँ तहाँ बुद्धदेवकी शिक्षाका पवित्र, शान्त और दयामय संगीत सुन पड़ता था। बड़े बड़े राजा महाराजा और धनी बौद्धधर्मके प्रचारमें दत्तचित्त थे। हजारों बौद्ध श्रमण जहाँ तहाँ विहार करते हुए दिखलाई देते थे।

बनारसकी ओर जानेवाले सडक पर एक घोडा गाड़ी जा रही है। घोड़ा बहुत तेजीसे जा रहा है। गाड़ीपर सिर्फ़ दो आदमी हैं। एक गाड़ीका स्वामी और दूसरा नौकर। स्वामीके वेशभूषासे मालूम होता है कि वह कोई धनिक व्यापारी है। उसकी मुखचेष्टा बतली रही है कि उसे नियत स्थान पर जल्दी पहुँचना है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अभी अभी एक अच्छी वर्षा हो गई है, इससे ठंडी हवा चलने लगी है। बादलोंके हट जानेसे धूप निकल आई है और उससे दिन बहुत ही सुन्दर मालूम होता है। वृक्षोंके पत्ते पानीसे धुल गये हैं और हवाके झोके लगनेसे आनन्दमें थिरक रहे हैं। प्रकृतिदेवीने एक अपूर्व ही शोभा धारण की है।

आगे ऊँची चढ़ाई आजानेसे जब घोड़ोंने अपनी चाल धीमी कर दी, तब धनिकने देखा कि सड़ककी पटली परसे एक बौद्ध श्रमण नीचेकी ओर दृष्टि किये हुए जा रहा है। उसकी मुखमुद्रापर शान्तिता, पवित्रता और गभीरता झलक रही है। उसे देखते ही सेठके हृदयमें पूज्यभाव उत्पन्न हुआ। वह विचार करने लगा—अहा! चेष्टासे ही मालूम होता है कि यह कोई महात्मा है—पवित्रताकी मूर्ति है और धर्मका अवतार है। सज्जनोंके समागमको विद्वानोंने पारस-मणिकी उपमा दी है। जिस तरह पारसके संयोगसे लोहा सुवर्ण हो जाता है, उसी तरह सज्जनोंके समागमसे भाग्यहीन भी सौभाग्यशाली हो जाता है। यदि यह साधु भी बनारसको जाता हो और मेरे साथ गाड़ीमें बैठना स्वीकार करले, तो बहुत अच्छा हो। अवश्य ही इसके समागमसे मुझे लाभ होगा। यह सोचकर सेठने श्रमण महात्माको प्रणाम किया और गाड़ीपर बैठ जानेके लिए अनुरोध किया। श्रमणको काशी ही जाना था, इसलिए वे गाड़ीमें बैठ गये और बोले;—आपने मेरे साथ बड़ा भारी उपकार किया। इसके लिए मैं आपका कृतज्ञ हूँ। मैं बहुत समयसे पैदल चल रहा हूँ, इसलिए बहुत ही थक गया हूँ। यह तो आप जानते ही हैं कि श्रमण लोगोंके पास कोई ऐसी वस्तु नहीं रहती जिसे देकर मैं आपके इस ऋणसे उऋणसे हो सकूँ। तो भी मैं परमगुरु महात्मा बुद्धदेवके उपदेशरूप अक्षय कोशसे जो कुछ संग्रह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर सका हूँ उसमें से आप जो चाहेंगे वही देकर आपके बोझसे हलका हो सकूँगा।

सेठ बहुत प्रसन्न हुआ। उसका समय बड़े आनन्दसे कटने लगा। श्रमणके सुबोधरूप रत्नोंको वह बड़ी ही रुचिसे हृदयमें धारण करने लगा। गाड़ी बराबर चली जा रही थी। लगभग एक घंटेके बाद वह एक ऐसे ढालूस्थानमें पहुँचकर खडी हो गई कि जहाँ एक गाड़ी पड़ी थी और जिसके कारण मार्ग बंद हो रहा था।

यह गाड़ी 'देवल' नामक किसान की थी। वह उसमें चावल लादकर बनारस जा रहा था और दिन निकलनेके पहले ही वहाँ पहुँचना चाहता था। धुरीकी कील निकल जानेसे गाड़ीका एक पहिया निकलकर गिर पड़ा था। देवल अकेला था। इसलिए प्रयत्न करनेपर भी वह अपनी गाड़ीको सुधारकर ठीक न कर सकता था।

जब सेठने देखा कि किसानकी गाड़ीको रास्ता परसे हटाये विना मेरा आगे बढ़ना कठिन है, तब उसे बड़ा क्रोध आया। उसने अपने नौकरसे कहा कि गाड़ीपरसे चावलोंके थैले उठाकर नीचे फेंक दे और उसे एक ओर करके अपनी गाड़ी आगे बढ़ा।

किसानने दीनताके साथ कहा—" सेठजी, मैं एक गरीब किसान हूँ। पानी पड़ जानेसे सड़क पर कीचड़ हो रहा है। थैले यदि नीचे पड़ेंगे, तो चावल ख़राब हो जावेंगे। आप जरा ठहर जावें, मैं अपनी गाड़ी अभी ठीक किये लेता हूँ और उसे इस ढालू जगहसे कुछ दूर आगे ले जाकर आपको रास्ता दिये देता हूँ।" परन्तु उसकी प्रार्थना पर सेठने कुछ भी ध्यान न दिया। वह अपने नौकरसे कड़क कर बोला—क्या देख रहा है ? मेरी आज्ञाका शीघ्र पालन कर और गाड़ीको आगे बढ़ा ! नौकरने तत्काल ही आज्ञाका पालन किया।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उसने चावलके थैले फेंककर किसानकी गाड़ीको एक तरफ़ धकेल दिया और अपनी गाड़ी आगे बढ़ा दी।

हाय! इस संसारमें गरीबका सहायक कोई नहीं। अपने थोड़ेसे लाभके पीछे दूसरोंका सर्वस्व नष्ट कर देनेवाले धनोन्मत्तोंकी उस समय भी कमी न थी। गरीबोंके रक्षकके बदले भक्षक बननेवाले अमीरोंसे यह संसार कभी खाली नहीं रहा और शायद आगे भी न रहेगा। इतना अवश्य है कि उस समय बौद्ध धर्मके श्रमणोंका दयामय हस्त गरीबोंकी सहायताके लिए सदा सन्नद्ध रहता था। वे धार्मिक विवादोंसे जुदा रहकर निरन्तर मनुष्यमात्रके सामान्य हितकी चिन्तामें रहते थे। वे अपने मन वचन और शरीरका उपयोग मुख्यतः परोपकारके ही कामोंमें करते थे।

ज्यों ही सेठकी गाड़ी आगे चलनेको हुई त्यों ही श्रमण नारद उस परसे कूद पड़े और बोले:—"सेठजी, माफ़ कीजिए, अब मैं आपके साथ नहीं चल सकता। आपने विवेकबुद्धिसे मुझे एक घंटे तक गाड़ीमें बिठाया, इससे मेरी थकावट दूर हो गई। मैं आपके साथ और भी चलता; परन्तु वह किसान जिसकी कि गाड़ीको उलटा करके आप आगे बढ़ते हैं आपका बहुत ही निकटका सम्बन्धी है। मैं इसे आपके ही पूर्वजोंका अवतार समझता हूँ। इस लिए आपने मेरे साथ जो उपकार किया है उसका ऋण मैं आपके इस निकट बन्धुकी सहायता करके चुकाऊँगा। इसको जो लाभ होगा, वह एक तरहसे आपका ही लाभ है। इस किसानके भाग्यके साथ आपकी भलाईका बहुत गहरा सम्बन्ध है। आपने इसे कष्ट पहुँचाया है, मैं समझता हूँ कि इससे आपकी बहुत बड़ी हानि हुई है और इसलिए मेरा कर्तव्य है कि आपको इस हानिसे बचानेके लिए—आपका भला करनेके लिए मैं अपनी शक्तिभर इसकी सहायता करूँ।"

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेठने श्रमणकी इस मार्मिक उक्तिपर कुछ ध्यान न दिया। उसने सोचा कि श्रमण सीमासे अधिक भला है, इसी लिए इसकी भलाई करनेके लिए तत्पर होता है। इसके बाद उसकी गाड़ी आगे चल दी।

(२)

श्रमण नारद किसानको नमस्कार करके उसकी गाड़ीके ठीक करानेमें और भीगे हुए चावलोंको जुदा करके शेष चावलोंके एकट्ठे करनेमें सहायता देने लगे। दोनोंके परिश्रमसे काम बहुत शीघ्रतासे होने लगा। किसान सोचने लगा कि सचमुच ही यह श्रमण कोई बड़ा परोपकारी महात्मा है। क्या आश्चर्य है, जो मेरे भाग्यसे कोई अदृश्य देव ही श्रमणके वेषमें मेरी सहायताके लिए आया हो। मेरा काम इतनी जल्दी हो रहा है कि मुझे स्वयं ही आश्चर्य मालूम होता है। उसने डरते डरते पूछा—श्रमण महाराज, जहाँतक मुझे याद है मैं जानता हूँ कि इस सेठकी मैंने कभी कोई बुराई नहीं की, कोई इसे हानि भी नहीं पहुँचाई, तब आज इसने मुझपर यह अन्याय क्यों किया? इसका कारण क्या होगा?

श्रमण—भाई, इस समय जो कुछ तू भोग रहा है, सो सब तेरे किये हुए पूर्व कर्मोंका फल है। पहले जो बोया था उसे ही अब लुन रहा है।

किसान—कर्म क्या?

श्रमण—मोटी नजरसे देखा जाय तो मनुष्यके काम ही उसके कर्म हैं। वे (मनुष्यके कर्म) उसके इस जन्मके और पहले जन्मोंके किये हुए कामोंकी एक माला हैं। इस मालाके 'मनका' रूप जो विविध प्रकारके कर्म हैं, उनमें वर्तमानके कामोंसे और विचारोंसे फेरफार भी बहुत कुछ हो जाता है। हम सबने पहले जो भले बुरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कर्म किये हैं उनका फल हम इस समय चख रहे हैं और अब जो कर रहे हैं उनके फल आगे भोगना पड़ेंगे।

किसान—आपने जैसा कहा वैसा ही होगा। परन्तु ऐसे घमंडी और दुष्ट मनुष्य हम सरीखे ग़रीबोंको जो इस तरह बिना कुछ लिये दिये ही तंग किया करते हैं, इसके लिए हमें क्या करना चाहिए?

श्रमण—भाई, मेरी समझमें तो तेरे विचार भी लगभग उसी सेठ ही सरीखे हैं। जिस कर्मसे आज वह जौहरी और तू किसान हुआ है, यद्यपि ऊपरसे उस कर्ममें बहुत भिन्नता मालूम पड़ती है परन्तु भीतरी दृष्टिसे देखा जाय तो वह उतनी नहीं है। जहाँ तक मुझे मनुष्यके मानसिक विचारोंकी जाँच है उसके अनुसार मैं कह सकता हूँ कि आज यदि तू भी उस जौहरीकी जगह होता तथा तेरे पास भी उसके नौकरके जैसा बलवान् नौकर होता और जिस तरह तेरी गाड़ीसे उसका रास्ता रुक रहा था उसी तरह यदि उसकी गाड़ी तेरा रास्ता रोकती, तो तू भी उसका नम्बर लिये बिना न रहता। उसके चावलों का सत्यानाश हो जायगा, इसकी तुझे भी कुछ परवा न होती और इस बातको भी तू भूल जाता कि मैं किसीका बुरा करूँगा तो मेरा भी बुरा होगा।

किसान—महाराज, आप सच कहते हैं। मेरी चेल, तो मैं उससे कुछ कम न रहूँ। परन्तु आप तो अकारण बन्धु है; बिना स्वार्थके आपने मेरी सहायता की, मेरे मालको बिगड़नेसे बचाया और मेरा काम शीघ्रतासे पूरा करके मुझे रास्ते लगा दिया। यह देखकर मेरा जी चाहता है कि मैं भी अपने जातिभाइयोंके साथ अच्छा वर्ताव करूँ और अपनी शक्तिके अनुसार उनकी भलाई करनेमें तत्पर रहूँ।

किसानकी गाड़ी दुरुस्त होकर आगे चलने लगी। वह थोड़ी ही दूर आगे बढ़ी थी कि एकाएक उसके बैल चमक उठे। किसान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चिल्लाकर बोला—अरे बाप! सामने वह साँप सरीखा क्या पडा है? श्रमणने ध्यानसे देखा तो उन्हें एक बसनी जैसी चीज़ नज़र आई। वे पहले गाड़ीपरसे कूद पड़े और देखते हैं तो एक मुहरोंसे भरी हुई बसनी (लम्बी थैली) पड़ी है! उन्हे विश्वास हो गया कि यह बसनी और किसीकी नहीं, उसी सेठकी है। उन्होंने थैली उठा ली और उसे किसानके हाथमें देकर कहा कि जब तुम बनारसमें पहुँच जाओ तब उस सेठका पता लगाकर उसे यह बसनी दे देना। उसका नाम पाण्डु जौहरी और उसके नौकरका नाम महादत्त है। ऐसा करनेसे उसको अपने इस अन्याय कर्मका पश्चात्ताप होगा जो उसने तुम्हारे साथ अभी किया था। इसके साथ ही तुम यह भी कहना कि तुमने मेरे साथ जो कुछ किया है वह सब मैं क्षमा करता हूँ और चाहता हूँ कि तुम्हारे व्यापारमें खूब सफलता प्राप्त हो। मैं यह सब तुमसे इस लिए कहता हूँ कि तुम्हारा भाग्य उसके भाग्यकी बढ़तीपर निर्भर है—उसे ज्यों ज्यों व्यापारमें सफलता प्राप्त होगी त्यों त्यों तुम्हारा भी भाग्य खुलेगा।

इसके बाद परोपकारकी मूर्ति और दीर्घदृष्टि श्रमण महाशय यह सोचते हुए वहाँसे चल दिये कि यदि जौहरी मेरे पास आयगा तो मैं उसकी भलाई करनेके लिए शक्ति भर प्रयत्न करूँगा— उपदेश देकर उसे वास्तविक मनुष्य बना दूँगा।

(३)

बनारसमें मल्लिक नामका एक व्यापारी था। वह पाण्डु जौहरीका आढ़तिया था। जिस समय पाण्डु उससे जाकर मिला, उस समय वह रो पड़ा और बोला—मित्र मैं एक बड़े भारी संकटमें आ पड़ा हूँ। अब आशा नहीं कि मैं तुम्हारे साथ व्यापार कर सकूँ। मैंने राजाके खानेके लिए बढ़िया चावल देनेका बायदा किया था। उसके पूरा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करनेका दिन कल है। मुझे कल सबेरे चावल देना ही चाहिए। परन्तु क्या करूँ चावलका मेरे पास एक दाना भी नहीं—किसी और जगहसे भी मिलनेकी आशा नहीं। क्योंकि यहाँ मेरा प्रतिपक्षी एक ज़बर्दस्त व्यापारी है। उसको किसी तरहसे यह मालूम हो गया है कि मैंने राजाके कोठारीके साथ इस तरहका बायदेका व्यापार किया है। इससे उसने यहाँ सारी बस्तीमें जितना चावल था वह सबका सब मुँहमागा दाम देकर ख़रीद लिया है। कोठारीको उसने कुछ न कुछ घूँस(रिश्वत) भी ज़रूर दी होगी, इस लिए कल मेरी कुशल नहीं—मेरी इज्जत नहीं बच सकती। यदि विधाता ही मेरी सहायता करे और कहींसे एक गाड़ी अच्छे चावल मेरे पास पहुँचा दे, तो शायद मैं बच जाऊँ, नहीं तो मेरा मरना हो जायगा। मल्लिक यह कह ही रहा था कि इतनेमें पाण्डुको अपनी मुहरोंकी बसनीकी याद आई। वह घबड़ाकर उठा और उसकी खोज करने लगा। सन्दूकमें, गाड़ीमें, कपड़े लत्तोंमें उसने बहुत ढूँढ़ खोज की परन्तु बसनीका पता न लगा। उसे सन्देह हुआ कि मेरे नौकर महादत्तने ही बसनी उड़ा ली है। बस फिर क्या था, उसने महादत्तको पुलिसके हवाले कर दिया। यमदूतके समान पुलिसने चोरी स्वीकार करानेके लिए महादत्तको मार मारना शुरू की। असह्य मारके पड़नेसे वह बिलबिला उठा और रोता हुआ कहने लगा—मैं निरपराधी हूँ, मैंने बसनी नहीं चुराई। मुझे माफ़ करो, मुझसे यह मार नहीं सही जाती। हाय! हाय! मैं मरा, गरीब पर दया करो। मैंने बसनी नहीं ली है; परन्तु मेरे किसी पूर्व पापका उदय हुआ है जिससे मुझपर यह विपत्ति आई है। मैंने अपने सेठके कहनेसे उस बेचारे किसानको रास्तेमें हैरान किया था, अवश्य ही मुझे यह उसी पापका फल मिल रहा है। भाई किसान, मैंने तुझे बिनाकारण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सताया था—मुझे माफ़ कर। सचमुच ही मैं उसी अन्यायके फलसे सताया जा रहा हूँ।

महादत्तके इस पश्चात्तापपर पुलिसने जरा भी ध्यान न दिया; वह बराबर मार मारती रही। इतने ही में 'देवल' वहाँ आ पहुँचा और उसने सबको आश्चर्यमें डालते हुए वह मुहरोंकी बसनी पाण्डु जौहरीके आगे रख दी। इसके बाद उसने उसे क्षमा किया और उसकी मंगल कामना की।

महादत्त छोड़ दिया गया। उसे अपने सेठपर बड़ा ही क्रोध आया। वह उसके पास एक क्षण भी न ठहरा और न जाने कहाँ-को चल दिया।

उधर मल्लिकको खबर लगी कि देवलके पास एक गाड़ी अच्छे चावल हैं। इस लिए उसने उसी समय उसके पास पहुँचकर मुँहमाँगा दाम देकर वे चावल खरीद लिये और अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार राजा-के यहाँ भेज दिये। जितना मूल्य मिलनेकी देवलको स्वप्नमें भी आशा न थी, उतने मूल्यमें चावल बेचकर वह अपने गाँवको रवाना हो गया।

पाण्डु भी अपने आढ़तियेकी विपति टली देखकर और अपनी खोई हुई बसनी पाकर बहुत प्रसन्न हुआ। वह सोचने लगा कि वह किसान यहाँ न आता, तो न मल्लिकका ही उद्धार होता और न मैं ही अपनी खोई हुई रकम पा सकता। वह किसान बड़ा ही ईमानदार और भला आदमी निकला। जिसको मैंने सताया उसीने मेरे साथ ऐसी सज्जनताका व्यवहार किया! पर एक साधारण अपढ़ किसानमें इतनी सज्जनता और उदारता कहाँसे आई? उस श्रमण महा-त्माका ही यह प्रसाद समझना चाहिए। लोहेको सोना बनानेका प्रभाव पारसको छोड़कर और किस वस्तुमें हो सकता है? यह सब सोचकर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पाण्डुको श्रमण नारदसे मिलनेकी प्रबल उत्कंठा हुई। वह तत्काल ही उठा और बौद्धविहार या बौद्ध साधुओंके मठका पता लगाता हुआ उक्त श्रमण महात्मासे जा मिला।

कुशलप्रश्न हो चुकनेके बाद श्रमण नारदने कहा—"सेठजी, आपकी अभी इतनी शक्ति नहीं है कि कर्मरचनाको अच्छी तरहसे समझ सकें। यह बड़ा ही गहन और गंभीर विषय है। साधारण लोग इसका मर्म नहीं जान सकते। आगे जब आपकी इस ओर रुचि होगी और उससे जब उत्कण्ठा बढ़ेगी तब इसे आप सहज ही समझ लेंगे। तो भी इस समय आप मेरी यह छोटीसी बात ध्यानमें रख लें कि जिस समय आप दूसरोंको दुःख देनेके लिए तैयार हों उस समय अपने हृदयसे यह अवश्य पूँछ लें कि ऐसा ही दुःख यदि कोई मुझे भी दे, तो मुझे वह अच्छा लगेगा या नहीं? यदि इस प्रश्नका उत्तर यह मिले कि, नहीं मैं ऐसा दुःख कदापि सहन न कर सकूँगा, तो दुःख देनेकी इच्छा होनेपर भी आप उसे दबा दें। और जिस तरह कोई आपकी सेवा करता है तो वह आपको अच्छी लगती है उसी तरह आपकी सेवा भी दूसरोंके लिए रुचिकर होगी, यह विश्वास करके आप दूसरोंकी सेवा करनेके अवसरको कभी हाथसे न जानें दें। इस बातपर विश्वास रखिए कि हम आज जो सुकृतके बीज बोवेंगे, कालान्तरमें उनसे अच्छे फल अवश्य ही मिलेंगे।

पाण्डु—महाराज, मुझे कुछ और भी विस्तारसे समझानेकी कृपा कीजिए जिससे मैं आपके उपदेशके अनुसार वर्ताव करनेके लिए समर्थ हो सकूँ।

श्रमण—अच्छा तो सुनो मैं आपको कर्मभेदकी चाबी देता हूँ। मेरे और तुम्हारे बीचमें एक परदा पड़ा हुआ है। उसे माया कहते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसी कारण तुम मुझे अपनेसे जुदा और मैं तुम्हें अपनेसे जुदा समझता हूँ। इस परदेके कारण मनुष्य अच्छी तरह नहीं देख सकता और पापके गढ़ेमें जा पड़ता है। तुम्हारी आँखोंके आगे इसी मायाका परदा पड़ा है, इससे तुम नहीं देख सकते कि इन जातिभाइयों (मनुष्य जाति) के साथ तुम्हारा कितना निकटका सम्बन्ध है। वास्तवमें यह सम्बन्ध तुम्हारे शरीरके एक दूसरे अवयवके सम्बन्धकी अपेक्षा बहुत ही निकटका है। तुम्हारे जीवनका सम्बन्ध जैसा दूसरोंके जीवनके साथ है वैसा ही दूसरोंके जीवनका सम्बन्ध तुम्हारे जीवनके साथ है। यह सम्बन्ध बहुत ही गाढ़ा है। संसारमें बहुत थोड़े पुरुष हैं जो सत्यको जानते हैं। इस सत्यकी प्राप्ति करना ही मनुष्य जीवनका कर्तव्य है। इसको प्राप्त करनेके लिए मैं तुम्हें थोड़ेसे मंत्र बतलाता हूँ। इन्हें तुम अपने हृदयमें लिख रक्खोः—

१ जो दूसरोंको दुःख देता है वह मानो अपनेमें आपको दुःख-देनेवाले बीजोंको बोता है।

२ जो दूसरोंको सुख देता है वह अपने हृदयमें आपको सुखी करनेके बीजोंको बोता है।

३ यह बड़ा ही भ्रामक विचार है कि मैं अपने जातिभाइयोंसे जुदा हूँ।

इन तीन मंत्रोंकी आराधना करते रहनेसे तुम सत्यके मार्ग पर आ पहुँचोगे।

पाण्डु—महानुभाव श्रमणमहाराज, आपके वचनोंका मर्म बहुत ही गहरा है। मैं इन वचनोंको अपने हृदयमें लिख चुका। मैंने बनारस आते समय आप पर जो थोड़ीसी दया की थी और वह भी ऐसी कि जिसमें एक पैसाकी भी खर्च न था, उसका फल मुझे इतना बड़ा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मिला है कि मैं उसे देखकर आश्चर्यमें डूब रहा हूँ। महात्मन्, मैं आपके उपकारके बोझेसे दब गया हूँ। यदि मुझे वह मुहरोंकी बसनी न मिलती, तो न तो मैं यहाँ कुछ व्यापार ही कर सकता और न उस व्यापारसे जो मुझे बड़ा भारी लाभ हुआ है वह होता। आप दूरदर्शी भी कितने बड़े हैं। यदि आप उस किसानकी सहायता न करते और उसे इतनी जल्दी यहाँ पहुँचनेमें समर्थ न कर देते तो मेरे मित्र मल्लिक-की भी इज्जत न बचती। आपने उसे भी दुःखकूपसे गिरते हुए बचाया और मेरे नौकरकी भी रक्षा की। महाराज, जिस तरह आप 'सत्य' को देखते हैं, उसी तरह यदि सारे मनुष्य देखने लगें तो जगत् कितना सुखी हो जाय! अगणित पापके मार्ग बन्द हो जायँ और पुण्यके मार्ग खुल जायँ। मैंने निश्चय किया है कि मैं बुद्ध भगवानके इस दयामय धर्मका प्रचार करनेके लिए अपनी कोशाम्बी नगरीमें एक विहार बनवाऊँ और उसमें आप तथा और दूसरे श्रमण महात्मा आकर लोगोंको सन्मार्ग सुझावें।

(४)

कोशाम्बीमें पाण्डु जौहरीका 'विहार' बन चुका है। उसमें सैकड़ों विद्वान् और दयामूर्ति श्रमण रहते हैं। थोड़े ही समयमें वह एक सुप्र-सिद्ध विहार गिना जाने लगा है। दूर दूरके धर्म-पिपासु लोग वहाँ उपदेश सुननेके लिए आया करते हैं।

पाण्डु जौहरी भी अब एक सुप्रसिद्ध जौहरी हो गया है। उसकी यशोगाथायें दूर दूर तक सुन पड़ती हैं।

कोशाम्बीके समीप ही एक राजाकी राजधानी थी। राजाने अपने खजांचीको आज्ञा दी कि पाण्डु जौहरीकी मार्फ़त एक अच्छा सोनेका मुकुट बनवाया जावे और उसमें बहुमूल्यसे बहुमूल्य रत्न जड़वाये जावें।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खजाँचीने तत्काल ही आज्ञाका पालन किया और पाण्डुके पास मुकुट तैयार करवानेका संदेशा भेज दिया।

मुकुट तैयार हो गया। पाण्डु उसे लेकर और उसके साथ बहुतसे जवाहरात तथा सोने चाँदी आदिके आभूषण लेकर उक्त राजधानीकी ओर चला। उसने अपनी रक्षाके लिए २०–२५ सिपाही भी साथ ले लिये। सिपाही खूब मज़बूत और बहादुर थे। इसलिए उसे आशा थी कि मैं निर्विघ्नतासे अभीष्ट स्थानपर पहुँच जाऊँगा।

जिस समय पाण्डु अपने रसालेके सहित एक जंगलको पार कर रहा था, उसी सभय पासके दो पर्वतोंके बीचमेंसे ५०–६० आदमियोंकी एक अस्त्रशस्त्रोंसे सजी हुई टोली आई और उसने इसपर एक साथ आक्रमण किया। सिपाही बहुत बहादुरीके साथ लड़े परन्तु अन्तमें उन्हें हारना पड़ा और डकैत सारा माल लेकर चम्पत हो गये!

इस लूटसे पाण्डुका कारोबार मिट्टीमें मिल गया। उसे आशा थी कि मुकुटके साथ मेरा और भी बहुत सामान उक्त राजधानीमें कट जायगा, इसलिए उसने अपना सर्वस्व लगाकर दूसरी तरह-तरहकी चीजें तैयार कराई थीं। परन्तु वे सब हाथसे चली गईं और वह बिलकुल कंगाल हो गया।

पाण्डुके हृदयपर इसकी बड़ी चोट लगी; परन्तु वह चुपचाप यह सोचकर सब दुःख सहने लगा कि यह सब मेरे पूर्वकृत पापोंका फल है। मैंने अपनी जवानीके दिनोंमें क्या लोगोंको कुछ कम सताया था! अब यह समझना मेरे लिए कुछ काठिन नहीं कि जो बीज बोये थे उन्हींके ये फल हैं। अब पाण्डुके हृदयमें दयाका सोता बहने लगा। वह समझने लगा कि दुःख कैसे होते हैं और इससे उसकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवमात्रपर दया करनेकी भावना दृढ होने लगी। उसका हृदय पूर्व कर्मोंके पश्चात्तापसे दिनपर दिन पवित्र और उज्ज्वल होने लगा।

पाण्डुको अपनी निर्धनताका ज़रा भी दुःख नहीं होता। यदि उसे कोई बड़ा भारी दुःख है तो वह यही कि अब वह लोगोंकी भलाई करनेमें और श्रमणोंको बुलाकर उनके द्वारा धर्मप्रचार करनेमें असमर्थ हो गया है।

(५)

कोशाम्बी नगरीके पासके उसी जङ्गलमें जहाँ पाण्डु छूटा गया था एक बौद्ध साधु जा रहा है। वह अपने विचारोंमें मस्त है। उसके पास एक कमण्डलु और एक गठरीके सिवा और कुछ नहीं है। गठरीमें बहुतसी हस्तलिखित पुस्तकें हैं। जिस कपड़ेमें वे पुस्तके बँधी हैं वह कीमती है। जान पड़ता है किसी श्रद्धालु उपासकने पुस्तक-विनयसे प्रेरित होकर उक्त कपड़ा दिया होगा। यह कीमती कपड़ा साधुके लिए विपत्तिका कारण बन गया। लुटेरोंने उसे दूरहीसे देखकर साधुपर आक्रमण किया। उन्होंने समझा था कि गठरीके भीतर कीमती चीजें होंगीं परन्तु जब देखा कि वे उनके लिए सर्वथा निरुपयोगी पुस्तकें हैं, तब वे निराश होकर चल दिये। जाते समय अपने स्वभावके अनुसार साधुको नीचे डालकर एक एक दो दो लातें मारे बिना उनसे न रहा गया।

साधु मारकी वेदनाके मारे रातभर वहीं पड़ा रहा। दूसरे दिन सबेरे उठकर जब वह अपनी राह चलने लगा, तब उसे पासहीकी झाडीमेंसे हथियारोंकी झनझनाहट और मनुष्योंकी चीख चिल्लाहट सुनाई दी। उसने साहस करके झाड़ीके समीप जाकर देखा तो मालूम हुआ कि वे ही लुटेरे जिन्होंने उसकी दुर्दशा की थी अपने ही दलके एक लुटेरेपर आक्रमण कर रहे हैं। यह लुटेरा डीलडौलमें इन सबसे बलवान् और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बहादुर मालूम होता था। जिस तरह शिकारी कुत्तोंसे घिरा हुआ सिंह कुपित होकर उनपर टूटता है और उनका कचूमर बनाने लगता है, उसी तरह वह उनपर भर जोर प्रहार कर रहा है। किसीको गिराकर लातोंसे कुचलता है, किसीको तलवारसे यमलोकका रास्ता दिखलाता है और किसीका पीछा करके फिर लौट आता है। यद्यपि उसकी शक्ति असाधारण थी परंतु प्रतिपक्षियोंकी संख्या इतनी अधिक थी कि उनके सामने वह टिक न सका; उसकी देह बीसों घावोंसे जर्जर होगई और अन्तमें वह मरणोन्मुख होकर धराशायी हो गया। उसके गिरते ही दूसर लुटेरे वहाँसे चल दिये और थोड़ीही दरमें एक सघन झाड़ीके भीतर अदृश्य हो गये।

इस लड़ाईमें दश बारह लुटेरे काम आचुके थे। श्रमणने पास जाकर एक एकको अच्छी तरह देखा तो मालूम हुआ कि उस बहादुर लुटेरेके सिवा और सबके प्राण पखेरू उड़ गये हैं। साधुका हृदय भर आया। इस निरर्थक नरहत्यासे उसे बड़ा दुःख हुआ। अब वह इस बातकी चेष्टा करने लगा कि यह मुमूर्ष किसी तरह बच जाय। पास ही एक पानीका झरना बह रहा था। उसमेंसे कमंडलु भर ताजा पानी लाकर उसने एक चुल्लू पानी उसकी आँखोंपर छिड़का। लुटेरेने आँखें खोल दीं और इस तरह बड़बड़ाना शुरू किया, —वे कृतघ्नी कुत्ते कहाँ चले गये जिन्हें मैंने सैकड़ों बार अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर बचाया था। यदि मैं न होता तो न जाने कब किस शिकारीके हाथसे उन कमजोर कुत्तोंकी जानें चली गई होतीं। आज उन कुत्तोंको क्या वे सब बातें भूल गईं!

श्रमण—भाई, अब तू अपने उस पापमय जीवनके साथियोंको याद मत कर। इस समय तो अपनी आत्माका चिन्तवन कर और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस अन्तकी घड़ीमें अपना सुधार कर ले। इस कमण्डलुमेंसे थोड़ासा पानी पी ले और मुझे इन घावोंका इलाज करने दे। शायद मैं तेरे इस जीवनदीपकको बुझनेसे बचा सकूँ।

लुटेरेकी शक्ति क्षीण हो गई थी। उसने शक्ति भर प्रयत्न करके कहा—मैंने कल एक साधुको अपने साथियों सहित बहुत बुरी तरह मारा था। क्या तुम वही हो? और क्या तुम मेरे उस अन्यायका बदला इस समय मेरी सहायता करनेके रूपमें दोगे? यह जल तुम क्यों लाये हो? पर अब तुम्हारा यह सब प्रयत्न व्यर्थ है। मेरे भाई, इस जलसे मेरी प्यास तो शायद मिट जायगी परन्तु मेरे जीवनकी अब आशा नहीं। उन कुत्तोंने मुझे इतना घायल कर दिया है कि मैं निश्चयसे मर जाऊँगा। अरे कृतघ्नियो, मेरे सिखलाये हुए दाव पेच आज तुमने मेरे पर ही आजमाये!

श्रमण—"जैसा बोता है वैसा ही लुनता है।" यह अक्षर अक्षर सत्य है। तूने अपने साथियोंको लूट मार सिखलाई थी, इसलिए आज उसी लूट मारकी विद्याको उन्होंने तुझपर आजमायी। यदि तूने उन्हें दया सिखलाई होती तो आज वे भी तुझपर दया करते। ऊपरको फेंकी हुई गेंद जिस तरह लौटकर फैंकनेवाले पर ही आती है उसी तरह दूसरोंके लिए किये हुए बुरे भले कर्म, करनेवालेके ही ऊपर आ पड़ते हैं।

लुटेरा—इसमें जरा भी असत्य नहीं। मुझे आपकी प्रत्येक बात ठीक मालूम होती है। मेरी जो दुर्गति हुई वह उचित ही हुई। परन्तु महाराज मेरे दुःखोंका अन्त अभी कहाँ आ सकता है? मैंने अगणित अन्याय और अत्याचार किये हैं। उन सबका फल मुझे आगे पीछे कभी न कभी अवश्य भोगना पड़ेगा। आप कृपा करके मुझे कोई ऐसा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपाय बतलाइए जिससे इन पापोंका बोझा हलका हो जाय। इस बोझेसे मैं इतना दब गया हूँ कि अब मुझसे श्वास लेते भी नहीं बनता है।

श्रमण—भाई, उपाय तो बहुत ही सुगम है। अपनी पाप प्रवृत्तियोंको जड़मूलसे उखाड़कर फेंक दे, बुरी वासनाओंको छोड़ दे, प्राणी मात्रपर दया करनेका अभ्यास कर और अपने जाति भाइयोंके लिए अपने हृदयको दयाका सरोवर बना दे।

इसके बाद श्रमण लुटेरेके घावोंको जलसे धोने लगा और उनपर एक प्रकारकी हरी पत्तियोंके रसको लगाने लगा। लुटेरा कुछ समयके लिए शान्त हो गया और फिर बोला—हे दयामय, मैंने अबतक सब बुरे ही काम किये हैं, किसीका भला तो कभी किया ही नहीं, अपनी बुरी वासनाओंके जालमें मैं आप ही आप फँसा और ऐसा फँसा कि अब उसमेंसे निकलना कठिन हो गया है। मेरे कर्म मुझे नरकमें ले जा रहे हैं। मुझे आशा नहीं कि इनके मारे मैं मोक्षमार्ग पर चल सकूँ।

श्रमण—इसमें सन्देह नहीं कि जो बोया है उसे तुम्हें ही लुनना पड़ेगा। किये हुए कर्मोंका परिणाम अवश्य भोगना पड़ता है; उससे बचनेका कोई उपाय नहीं। तो भी साहस न छोड़ बैठना चाहिए। तुम्हारे हृदयमेंसे दुष्टताकी मात्रा ज्यों ज्यों कम होती जायगी त्यों त्यों शरीरसम्बन्धी आत्मबुद्धि भी कम होती जायगी और इसका फल यह होगा कि तुम्हारी विषयोंकी लालसा नष्ट होने लगेगी।

अच्छा सुनो, मैं तुम्हे एक बोधप्रद कथा सुनाता हूँ। इससे तुम्हें मालूम होगा कि अपनी भलाईमें दूसरोंकी और दूसरोंकी भलाईमें अपनी भलाई समाई हुई है। दूसरे शब्दोंमें, मनुष्यके कर्म उसके और दूसरोंके सुखरूप वृक्षके मूल हैं:—

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कदन्त नामका एक ज़बर्दस्त डकैत था। वह अपने दुष्टकर्मोंका पश्चात्ताप किये बिना ही मर गया, इससे नरकमें जाकर नारकी हुआ। अपने बुरे कर्मोंके असह्य कष्ट उसने अनेक कल्पपर्यन्त भोगे, परन्तु उनका अन्त नही आया। इतनेमें पृथ्वीपर बुद्धदेवका अवतार हुआ। इस पुण्य समयमें उनके प्रभावकी एक किरण नरकमें भी पहुँची। नारकियोंको आशा होगई कि अब हमारे दुःखोंका अन्त आया। इस प्रकाशको देखकर कदन्त उच्चस्वरसे कहने लगा—हे भगवन्, मुझपर दया करो, मुझपर कृपा करो, मैं यहाँ इतने दुःखोंसे घिर रहा हूँ कि उनकी गणना नही हो सकती। यदि मैं इनसे छूट जाऊँ तो अब सत्यमार्गपर अवश्य चलूँगा। हे भगवन् मुझे संकटसे छुडानेमें मदद करो।

प्रकृतिका नियम है कि बुरे काम नाशकी ओर जाते हैं। बुरे काम या पाप सृष्टिनियमसे विरुद्ध हैं, अस्वाभाविक हैं, इसलिए वे बहुत समय तक नहीं टिक सकते—उनका क्षय होता ही है। परन्तु भले काम, दीर्घजीवन और शुभ आशाकी ओर जाते हैं। क्योंकि वे स्वाभाविक हैं। अर्थात् पापकर्मोंका तो अन्त है, परंतु पुण्यकर्मोंका अन्त नहीं।

जिस तरह बाजरेके एक दानेसे उसके भुट्टेमें हज़ारों दानें लगते हैं और आगे परंपरासे वे और भी अगणित दानोंकी सृष्टि करते हैं, उसी तरह थोड़ासा भी भला काम हजारों भले कामोंकी बढ़वारी करता है और परम्परासे वे भले काम और भी अगणित भले कामोंके सृष्टा होते हैं। इस तरह भले कामोंसे जीवको जन्म जन्ममें इतनी दृढता प्राप्त होती है कि वह अनन्तवीर्य बुद्ध होकर निर्वाण पदका भागी होता है।

कदन्तका आक्रन्दन सुनकर दयासागर बुद्धदेव बोले—क्या तूने कभी किसी जीवपर थोड़ीसी भी दया की है? दया अब शीघ्र ही

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तेरे पास आयगी और तुझे इन दुःखोंसे छुड़ाने शीघ्रका प्रयत्न करेगी। परन्तु जब तक तेरे मनमेंसे देहममत्व, क्रोध, मान, कपट, ईर्षा और लोभ नष्ट नहीं हो जावेंगे, तब तक तू समस्त दुःखोंसे छुटकारा नहीं पा सकेगा!

कदन्त बहुत ही क्रूरस्वभावी था, इसलिए वह यह उपदेश सुनकर चुप हो रहा। बुद्धदेव सर्वज्ञ थे। उन्हें कदन्तके पूर्व जन्मके सारे कर्म हथेली पर रक्खे हुए आँवलेके समान दिखने लगे। उन्होंने देखा कि कदन्तने एक बार थोड़ीसी दया की थी। वह एक दिन जब एक जंगलमेंसे जा रहा था, तब अपने आगेसे जाती हुई एक मकरीको देखकर उसने विचार किया था कि इस मकरी पर पैर देकर नहीं चलना चाहिए, क्योंकि यह बेचारी निरपराधिनी है। इसके बाद बुद्धदेवने कदन्तकी दशा पर तरस खाकर एक मकरीको ही जालके एक तन्तुसहित नरकमें भेजा। उसने कदन्तके पास जाकर कहा,—ले इस तन्तुको पकड़ और इसके सहारे ऊपरको चढ़ चल। यह कहकर मकरी अदृश्य हो गई और कदन्त बड़ी कठिनाईसे अतिशय प्रयत्न करके उस तन्तुके सहारे ऊपर चढ़ने लगा। पहले तो वह तन्तु मज़बूत जान पड़ता था परन्तु अब वह जल्दी टूट जानेकी तैयारी करने लगा। कारण, नरकके दूसरे दुखी जीव भी कदन्तके पीछे उसी तन्तुके सहारे चढ़ने लगे थे। कदन्त बहुत घबड़ाया। उसे जान पड़ा कि यह तन्तु लम्बा होता जाता है और वजनके मारे पतला पड़ता जाता है। हाँ, यह अवश्य है कि मेरा बोझा तो किसी तरह यह सँभाल ही ले जायगा। अभी तक कदन्त ऊपरहीको देख रहा था, परन्तु अब उसने नीचेकी ओर भी एक दृष्टि डाली। जब उसने देखा कि दलके दल नारकी मेरे ही तन्तुके सहारे ऊपर चढ़े आ रहे हैं, तब उसे चिन्ता हुई कि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इन सबका बोझा यह कैसे सँभालेगा ! वह घबड़ा गया और एकाएक बोल उठा—" यह तन्तु मेरा है, इसे तुम सब लोग छोड़ दो।" बस, इन शब्दोंके निकलते ही तन्तु टूट गया और कदन्त फिर नरकभूमिमें जा पड़ा !!

कदन्तका देहममत्व नहीं छूटा था—वह आपको ही अपना समझता था और सत्यके वास्तविक मार्गका उसको ज्ञान न था। अन्तःकरणके कारण जो सिद्धि प्राप्त होती है उसकी शक्तिसे वह अज्ञात था। वह देखनेमें तो जालके तन्तुओं जैसी पतली होती है परन्तु इतनी दृढ होती है कि हजारों मनुष्योंका भार सँभाल सकती है। इतना ही नहीं, उसमें एक विलक्षणता यह भी है कि वह ज्यों ज्यों मार्गपर अधिक चढ़ती है त्यों त्यों अपने आश्रित प्रत्येक प्राणीको अल्प परिश्रमकी कारण होती है; परन्तु ज्यों ही मनुष्यके मनमें यह विचार आता है कि वह केवल मेरी है—सत्यमार्गपर चलनेका फल केवल मुझे ही मिलना चाहिए—उसमें दूसरेका हिस्सा न होना चाहिए, त्यों ही वह अक्षय्य सुखका तन्तु टूट जाता है और मनुष्य तत्काल ही स्वार्थताके गढ़ेमें जा पड़ता है। स्वार्थता ही नरकवास है और निःस्वार्थता ही स्वर्गवास है। अपने देहमें जो 'अहंबुद्धि' या ममत्वभाव है, वही नरक है।

श्रमणकी कथा समाप्त होते ही मरणोन्मुख लुटेरा बोला—महाराज, मैं मकरीके जालके तन्तुको पकड़ूँगा और अगाध नरकके गढ़ेमेसे अपनी ही शक्तिका प्रयोग करके बाहर निकलूँगा।

(६)

लुटेरा कुछ समयके लिए शान्त हो रहा और फिर अपने विचारोंको स्थिर करके बोलने लगा—" पूज्य महाराज, सुनो मैं आपके पास अपने पापोंका प्रायश्चित्त करता हूँ। मैं पहले कोशाम्बीके प्रसिद्ध

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जौहरी पाण्डुके यहाँ नौकर था; मेरा नाम महादत्त था। एक बार उसने मेरे साथ अतिशय क्रूरताका वर्ताव किया, इसलिए मैं उसकी नौकरी छोड़कर चल दिया और लुटेरोंके दलमें मिलकर उनका सरदार बन गया। कुछ समय पीछे मैंने अपने गुप्तचरोंके द्वारा सुना कि पाण्डु इन जंगलोंमेसे एक राजाके यहाँ बहुतसा धन लेकर जाने-वाला है। बस, मैंने उसपर आक्रमण किया और उसका सारा माल लूट लिया। अब आप कृपा करके उसके पास जाइए और मेरी ओरसे कहिए कि तुमने जो मुझपर अत्याचार किया था उसका वैर मैंने अन्तःकरणसे सर्वथा दूर कर दिया है और मैं अपने उस अपरा-धकी क्षमा माँगता हूँ जो मैंने तुमपर डाँका डालके किया था। जिस समय मैं उसके यहाँ नौकरी करता था, उस समय उसका हृदय पत्थरके समान कठोर था और इस लिए मैं भी उसकी नकल करके उसीके जैसा हो गया था। वह समझता था कि जगतमें स्वार्थको ही विजय मिलता है; परन्तु मैंने सुना है कि अब वह इतना परोप-कारी और परार्थतत्पर होगया है कि उसे लोग भलाई और न्यायका अवतार मानते हैं! उसने अब ऐसा अपूर्व धन संग्रह किया है कि न तो उसको कोई चुरा सकता है और न किसी तरह नष्ट कर सकता है। अभी तक मेरा हृदय बुरेसे बुरे कामोंमें एकरंग एकजीव हो रहा था; परन्तु अब मैं इस अन्धकारमें नहीं रहना चाहता। मेरे विचार बिलकुल बदल गये हैं। बुरी वासनाओंको अब मैं अपने हृदयसे धोकर साफ़ कर रहा हूँ। मेरे मरनेमें अभी जो थोड़ीसी घड़ियाँ बाकी हैं, उनमें मैं अपनी शुभेच्छाओंको बढ़ाऊँगा जिससे मर जानेके बाद भी मेरे मनमें वे इच्छायें जारी रहें। तब तक आप पाण्डुसे जाकर कह दीजिए कि तुम्हारा वह कीमती मुकुट जो तुमने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राजाके लिए तैयार कराया था और तुम्हारा और भी सारा धन इस पासकी गुफामें गढ़ा हुआ है सो उसे जाकर ले जाओ। इसका पता मेरे केवल दो विश्वासी साथियोंको ही था; अब वे मर चुके हैं।

यदि एक भी न्यायमूलक काम मुझसे बन जायगा तो उससे मेरे पापोंका कुछ भाग अवश्य कम होगा, मेरी मानसिक अपवित्रताका भी कुछ अंश धुल जायगा और मोक्षमार्गपर चढ़नेका कोई वास्तविक अवलम्बन मुझे मिल जायगा। इस लिए इस समय मुझे इस न्याय-मूलक कार्यके द्वारा ही अपनी भलाईका प्रारंभ कर देना उचित जान पड़ता है।

इसके बाद महादत्तने उस गुफाका पता ठिकाना ठीक ठीक बतला दिया जिसमें कि पाण्डुका धन गड़ा था और कुछ समयमें उसने श्रमण महात्माकी ही गोदमें सिर रक्खे हुए अपनी जीवनलीला समाप्त कर दी।

(७)

श्रमण महात्माने कोशाम्बीमें जाकर पाण्डुसे सारा वृत्तान्त कहा और पाण्डुने तत्काल ही बहुतसे सिपाहियोंके साथ गुफामें आकर अपना सारा धन निकलवा लिया। इसके बाद उसने महादत्त और दूसरे लुटेरोंके मृतक शरीरोंका सन्मानपुरःसर भूमिदाह किया। उस समय महादत्तके चबूतरेके पास खड़े होकर श्रीपान्थक श्रमणने निम्नलिखित उपदेश दिया:—

"हम आप ही बुरा काम करते हैं और आप ही उसका फल भोगते हैं। इसी तरह हम आप ही उस बुरेको दूर कर सकते हैं और आप ही उससे शुद्ध हो सकते हैं। अर्थात् पवित्रता और अपवित्रता दोनों ही हमारे हाथमें हैं। दूसरा कोई भी हमें पवित्र नहीं कर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सकता है, हमें स्वयं ही पवित्र होनेका प्रयत्न करना चाहिए। बुद्ध भगवानका भी यही उपदेश है।

"हमारे कर्म ब्रह्मा विष्णु ईश्वर अथवा और किसी देवके बनाये हुए नहीं हैं। वे सब हमारे ही किये हुए कामोंके परिपाक हैं। माताके गर्भके समान हम अपने ही कर्मरूपी गर्भस्थानमें अवतार लेते हैं और वे कर्म ही हमें सब ओरोंसे लपेट लेते हैं। हमारे इन कर्मोंमेंसे बुरे कर्म तो हमारे लिए शाप तुल्य होते हैं और भले कर्म आशीर्वाद तुल्य होते हैं। इस तरह हमारे कर्मोंके भीतर ही मोक्षप्राप्तिका बीज छुपा हुआ है।"

पाण्डु अपना सब धन कोशाम्बी ले गया और उसका बड़ी सावधानीसे सदुपयोग करने लगा। अपना कारोबार भी अब उसने खूब बढ़ाया और उससे जो आमदनी बढ़ी उसे वह परोपकारके कामोंमें जी खोल करके ख़र्च करने लगा।

एक दिन जब वह मरणशय्यापर पड़ा था, तब उसने अपने घरके सब पुत्रपुत्रियों और पोते पोतियोंको अपने पास बुलाकर कहाः—

मेरे प्यारे बालको, कभी किसी कामको निराश होकर नहीं छोड़ देना। यदि किसी काममें सफलता प्राप्त न हो तो उसका दोष किसी औरके सिर न डालना। अपनी असफलता और दुःखोंके कारणोंका पता अपने ही कर्मोंमें लगाना चाहिए और उनके दूर करनेका यत्न करना चाहिए। यदि तुम अभिमान या अहंकारका परदा हटा दोगे तो उन कारणोंका पता बहुत जल्दी लगा सकोगे और उनका पता लग जायगा तब उनमेंसे निकलनेका मार्ग भी तुम्हें बहुत जल्दी सूझ जायगा। दुःखके उपाय भी अपने ही हाथमें हैं। तुम्हारी आँखके आगे मायाका परदा न आजाय, इसका हमेशा ख़याल रखना और मेरे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीवनमें जो वाक्य अक्षरशः सत्य सिद्ध हुए हैं उनका स्मरण निरन्तर करते रहना। वे वाक्य ये हैं:—

जो दूसरोंको दुःख देता है वह मानो स्वयं आपको ही दुःख देता है और जो दूसरोंकी भलाई करता है, वह अपनी ही भलाई करता है।

देहममत्वका परदा हटते ही स्वाभविक सत्यका मार्ग प्राप्त हो जाता है।

यदि तुम मेरे इन वचनोंको स्मरण रक्खोगे और उनके अनुसार चलनेका प्रयत्न करते रहागे तो अपनी मृत्युके समय भी तुम अच्छे कर्मोंकी छायामें रहोगे और इससे तुम्हारा जीवात्मा तुम्हारे शुभ कामोंसे अमर हो जायगा। *

दानवीर सेठ हुकमचन्दजीकी संस्थायें।

इन्दोरके सुप्रासिद्ध सेठ श्रीमान् हुकमचन्दजीने अपनी चार लाखकी रकमका निम्न लिखित कार्योंमें बँटबारा करनेका निश्चय किया है:—

१००००) तुक्कोगंज—इन्दोरके उदासीनाश्रमके लिए।

६५०००) स्वरूपचन्द हुकमचन्द दि० जैन महाविद्यालयकी इमारतके लिए।

२०००००) उक्त विद्यालयके व्यवनिर्वाहके लिए।

१९०००) कंचनबाई दि० जैन श्राविकाश्रमकी इमारतके लिए।

८५०००) उक्त आश्रमके व्ययनिवाहके लिए। इसके साथ एक औषधालय भी रहेगा।

---

* श्रीयुक्त प० फतेहचन्द कपूरचन्द लालनकृत 'श्रमण नारद' नामक गुजराती पुस्तकके आधारसे परिवर्तित करके गल्परूपमें लिखित।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२५०००) नसियाकी धर्मशालामें लगा दिये गये।

४०००००) सब रकमोंका जोड़।

गत २२ अप्रेलको इस कार्यके लिए इन्दोरमें एक सभाकी गई थी और उसका सभापतित्व रायबहादुर सेठ कस्तूरचन्दजीको दिया गया था। सभामें बाहरी लोगोंकी आई हुई सम्मतियाँ तथा पत्र-सम्पादकोंकी रायें सुनाई गई थीं और पीछे सर्व सम्मतिसे सेठजीने अपना निश्चय प्रकट किया था। सब लोगोंकी रायसे यह भी तय हुआ है कि उक्त सब संस्थायें एक ट्रस्ट-कमेटी और एक प्रबन्धकारिणी कमेटीके अधीन रहेंगी। मंत्रीका कार्य लाला हजारीलालजी अग्रवालको सोंपा गया है।

सेठ स्वरूपचन्द हुकमचन्द विद्यालयमें संस्कृत और अँगरेजीके दो-विभाग रहेंगे। विद्यालयके साथ एक बोर्डिंग भी रहेगा जिसमें लगभग १०० विद्यार्थी रह सकेंगे। संस्कृत विद्यार्थियोंको व्यवहारिक शिक्षा और अँगरेजीके विद्यार्थियोंको प्रतिदिन २ घण्टेकी धर्मशिक्षा आवश्यक होगी। अभी सेठजीकी ओरसे जो 'हुकमचन्द बोर्डिंग स्कूल' चल रहा था, वह इसमें शामिल कर दिया जायगा।

लाला हजारीलालजीकी ओरसे अभी हाल ही जो विज्ञापन प्रकाशित हुआ है, उसके आधारसे हमने उक्त विवरण दिया है। जब सर्व सम्मतिसे उक्त दानविभाग हो चुका है, तब इस विषयमें तर्क वितर्क करनेकी अथवा कुछ रद्दोबदलकी सम्मति देनेकी आवश्यकता नहीं है; किसीको अधिकार भी नहीं है। अपनी अपनी सम्मति जिन्हें देना थी वे सब पहले दे ही चुके हैं। अब हम सब का यही कर्तव्य है कि जो संस्थायें खोली जा रही हैं वे अच्छी तरहसे चलें, उनसे पूरा पूरा लाभ उठाया जाय और उनके लिए योग्य संचा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लक मिल जावें, इन सब बातोंके लिए अपनी शक्ति भर प्रयत्न करें, सदाचारी सुयोग्य कार्यकर्त्ता ढूँढ़ दें, संस्था-संचालन-सम्बन्धी अच्छी सूचनायें दें और यदि बन सके तो संस्थाओंके लिए स्वयं अपना जीवन अर्पण कर दें। सेठजीको भी चाहिए कि वे इस ओर पूरा पूरा ध्यान दें। क्योंकि उनका यह महान् दान तब ही फलीभूत होगा जब उक्त संस्थायें वास्तविक संस्थाओंका रूप धारण करेंगी। हमारी छोटीसी समझमें संस्थाओंके खोलनेकी अपेक्षा उनका अच्छी तरहसे चला देना बहुत ही कठिन है और जैनसमाजमें तो यह कार्य और भी अधिक कठिन है। क्योंकि उसमें सुयोग्य संचालकोंकी बहुत बड़ी कमी है। अपनी इन संस्थाओंकी देखरेखके लिए सेठजीको स्वयं भी प्रतिदिन कमसे कम दो घण्टेका समय देनेका निश्चय कर रखना चाहिए।

संस्थाओंके सम्बन्धमें नीचे लिखी सूचनाओंपर ध्यान देनेकी आवश्यकता है:—

१ जैनियोंके इस समय कई संस्कृत विद्यालय हैं, इसलिए इस संस्कृत विद्यालयमें उनसे कुछ विशेषता होनी चाहिए। एक तो यह कि इसमें उच्च श्रेणीका संस्कृत साहित्य पढ़ाया जाय और वह पुरानी नहीं किन्तु नवीन शिक्षापद्धतिसे पढ़ाया जाय। अभी जिन पाठशालोंमें संस्कृतकी शिक्षा दी जाती है वहाँ पहले संस्कृतका व्याकरण और फिर संस्कृत भाषा पढ़ाई जाती है। परन्तु इस विद्यालयमें पहले संस्कृत भाषा पढ़ाई जाय और पीछे उसका व्याकरण। स्वाभाविक नियम भी यही है। मनुष्य पहले भाषा सीखता है और पीछे उसके नियम। भाषाके बन चुकने पर व्याकरण बनता है। सारी दुनियामें इसी क्रमसे शिक्षा दी जाती है; सब जगह भाषा आजाने पर ही व्याकरण सिखलाया जाता है। फिर संस्कृतके लिए ही यह अनोखा ढँग क्यों? अँगरेज़ी भी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तो हमारे लड़के पढ़ते हैं। उसके स्कूलोंमें भी पहले भाषा और पीछे व्याकरण पढ़ानेकी पद्धति है। तब संस्कृत भी इसी पद्धतिसे क्यों न पढ़ाई जाय? जिस समय बालकोंको संस्कृतका कुछ भी ज्ञान नहीं होता है उस समय उन्हें शुष्क और क्लिष्ट व्याकरण सूत्रोंको रटना पड़ता है। इससे उनका एक तो समय बहुत जाता है, दूसरे उनका संस्कृतका ज्ञान परिपक्व नहीं होता और तीसरे इस अवस्थामें केवल स्मरण शक्तिका उपयोग होते रहनेसे उनकी कल्पनाशक्ति और विचारशक्ति क्षीण निकम्मी हो जाती है। आगे उनकी बुद्धिका विकास नहीं होने पाता है। हमारा अभिप्राय यह नहीं है कि व्याकरणका पढ़ाना ही बुरा है अथवा उसका स्वल्प ज्ञान ही यथेष्ट है। हम चाहते हैं कि संस्कृत भाषाके समझनेकी शक्ति हो जाने पर उसका व्याकरण पढ़ाया जाय और वह सम्पूर्ण पढ़ाया जाय। इस पद्धतिसे बहुत कम परिश्रमसे व्याकरणका अच्छा ज्ञान हो सकता है। इसके सिवा प्रारंभमें जो व्याकरण ग्रन्थ पढ़ाया जाय वह नये ढङ्गका हो—पुराने सूत्रबद्ध व्याकरण शुरूमें न पढ़ाये जावें। इस ढंगके व्याकरणसे एक तो परिश्रम बहुत कम पडता है, दूसरे वे विद्यार्थी जो कि वर्ष दो वर्ष ही पढ़कर विद्यालय छोड़ देते हैं उनको बहुत लाभ होता है। अभी ऐसे विद्यार्थियोंकी बड़ी दुर्दशा होती है। क्योंकि पुराने व्याकरण इतने कठिन हैं कि वर्ष दो वर्षमें उनमें उनका प्रवेश ही नहीं होता है और इसलिए विद्यालय छोड़ देनेपर वे इतना ज्ञान भी साथमें नहीं ले जाते कि उससे सरल संस्कृत ग्रन्थोंका भी स्वाध्याय कर सकें—बेचारे रात दिन घोंट घोंट कर मगज ख़ाली करते हैं पर अन्तमें कोरे रह जाते हैं। प्रो० विनयकुमार सरकार एम. ए. ने थोड़े दिन पहले संस्कृतशिक्षाविज्ञान नामका एक बहुत ही उत्तम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ग्रंथ बनाया है। इसके पढ़नेसे बहुत जल्दी और बहुत थोड़े परिश्रमसे संस्कृतका ज्ञान हो जाता है। यही अथवा इसी ढंगकी दूसरी पुस्तकोंके पढ़ानेका विद्यालयमें प्रबन्ध होना चाहिए।

जहाँ तक हम जानते हैं इस विद्यालयमें संस्कृतके विद्यार्थियोंको व्यवहारोपयोगी अँगरेज़ी शिक्षा देनेका तो प्रबन्ध किया ही जायगा और उसकी ज़रूरत भी है; पर साथ ही हमारी प्रार्थना ग़रीब हिन्दीके लिए भी है। इसकी ओर भी दयादृष्टि होनी चाहिए। हमारी समझमें इसके बिना न तो संस्कृतके विद्वान् देश, धर्म या समाजका कल्याण कर सकते हैं और न अँगरेज़ीके विद्वानोंसे ही हमें कुछ लाभ होता है। पर न इसकी गुजर अँगरेज़ी स्कूलों और कॉलेजोंमें है और न संस्कृतके विद्यालयोंमें! अँगरेजीके विद्यालयोंमें तो वह इस कारण नहीं फटकने पाती कि उनका अधिकार विदेशी या विदेशी भावापन्न अफसरोंके हाथमें है, परन्तु संस्कृतके विद्यालय हमारे हाथमें हैं तो भी आश्चर्य है कि उनके दरवाज़े इसके लिए बन्द हैं? यह बड़े ही दुःखका विषय है। जैनियोंकी संस्कृत पाठशालाओंने इस समय तक जितने संस्कृतज्ञ तैयार किये हैं उनमेंसे एक दोको छोडकर कोई भी इस योग्य नहीं कि अपने विचारोंको लेखों ग्रंथों या व्याख्यानोंके द्वारा अच्छी हिन्दीमें प्रकाशित कर सके। जो कुछ वे पढ़े हैं वह एक तरहसे उनके लिए 'गूँगेका गुड़' है। संस्कृत साहित्यमें क्या महत्त्व है वे उसे दूसरोंके सम्मुख प्रकाशित नहीं करसकते और यदि करनेका प्रयत्न भी करते हैं तो उनकी संस्कृतबहुल विलक्षण 'पण्डिताऊ' भाषाको सर्व साधारण समझ नहीं सकते। तब बतलाइए, ऐसे पण्डितोंको तैयार करके जैनसमाज क्या लाभ उठायगा? इस बड़ी भारी त्रुटिको पूर्ण करनेका इस विद्यालयमें खास प्रयत्न होना चाहिए। प्रत्येक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कक्षामें हिन्दीकी पढ़ाई आवश्यक कर दी जाय और अन्तिम कक्षा तक उसका इतना ज्ञान करा दिया जाय कि विद्यार्थी हिन्दीके अच्छे जानकार और लेखक बन जावें। यदि उचित समझा जाय तो प्रारंभकी कक्षाओंमें धर्मशास्त्र आदि एक दो विषय हिन्दीमें ही पढ़ाये जानेका प्रबन्ध किया जाय।

३. आजकलके जमानेमें केवल न्याय, व्याकरण, काव्य, और धर्मशास्त्रके ज्ञानसे काम नहीं चलसकता—केवल इन्हींके ज्ञाताओंकी विद्वानोंमें भी गणना नहीं हो सकती है। केवल इन्हीं विषयोंके जाननेवाले इस समय कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण नहीं हो सकते। शायद पूर्वकालमें भी इनके सिवा अन्यान्य विषयोंके जाननेकी जरूरत थी। श्रीसोमदेवसूरिने अपने नीतिवाक्यामृतमें कहा है कि "सा खलु विद्या विदुषां कामधेनुः, यत्तो भवति समस्तजगतः स्थितिपरिज्ञानम्। लोकव्यवहारज्ञो हि मूर्खोऽपि सर्वज्ञः अन्यस्तु प्राज्ञोऽप्यवज्ञायत एव। ते खलु प्रज्ञापारमिताःपुरुषाः ये कुर्वन्ति परेषां प्रतिबोधनम्। अनुपयोगिना महतापि किं जलधिजलेन।" अर्थात् "जिससे सारे जगतकी स्थितियोंका ज्ञान होता है—दुनियाकी सारी बातोंकी जानकारी होती है, वह विद्या विद्वानोंके लिए कामधेनु या इच्छित फलोंकी देनेवाली है। वह मूर्ख या बिना पढ़ा लिखा भी सर्वज्ञ है जो लोकव्यवहारज्ञ है—दुनियाकी सारी व्यवहारोपयोगी बातोंको जानता है; परन्तु जो कोरा पण्डित है—उसे कोई नहीं पूँछता; उसकी सब जगह अवज्ञा होती है। जो दूसरोंको समझा सकता है—दूसरोंके अज्ञानको दूर करसकता है वही सच्चा बुद्धिमान् है किन्तु जिसकी विद्या निरुपयोगी है—किसीके काम नहीं आसकती है, वह किसी कामका नहीं। समुद्रके जलका कुछ पार नहीं, परन्तु जब वह किसीके पीनेके कामका नहीं तब उसका होना न होना बराबर है। "श्रीसो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मदेवसूरिके उक्त वाक्योंसे यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो जाती है कि हमें कैसे उपयोगी कार्यक्षम और सच्चे विद्वानोंकी ज़रूरत है। वे केवल न्याय व्याकरणादि रटे हुए पण्डितोंको किसी कामका नहीं बतलाते हैं। लोकव्यवहारज्ञता और दुनियाकी स्थितियोंके ज्ञानपर उन्होंने बहुत ही अधिक ज़ोर दिया है। अत एव न्याय—व्याकरण—काव्य—धर्मशास्त्रके साथ साथ आवश्यक है कि विद्यार्थियोंको गणित, भूगोल, इतिहास, पदार्थविज्ञान आदि व्यवहारोपयोगी विषय भी हिन्दीमें सिखलाये जावें और वर्तमान सामाजिक धार्मिक राजनीतिक और वैज्ञानिक स्थितियोंका भी ज्ञान कराया जाय। इसके बिना पण्डित भले ही तैयार हो जावें, पर सच्चे विद्वान् न हो सकेंगे।

४. जीविकोपयोगी शिक्षा देनेके विषयमें तो कुछ अधिक कहनेकी ज़रूरत ही नहीं है। इसके लिए पहले कई बार लिखा जा चुका है। सब ही जानते है कि 'सर्वारम्भास्तण्डुलाप्रस्थमूलाः'।

५. संभव है कि बहुतसे लोग यह कह उठें कि इतने अधिक विषय एक साथ कैसे पढ़ाये जा सकते है ? जैनसमाजके एक प्रसिद्ध पण्डितजीका तो यह सिद्धान्त है कि अधिक विषयोंकी शिक्षा देनेसे विद्यार्थी विद्वान् बन ही नहीं सकते और इसलिए वे अपनी पाठशालाके विद्यार्थियोंको सूखा न्याय और व्याकरण रटातें हैं—कहनेके लिए थोड़ा बहुत धर्मशास्त्र भी साथ लगा रक्खा है। परन्तु इस प्रकारके विचार उन्हीं लोगोंके हैं जो वर्तमान शिक्षाप्रणालीसे सर्वथा अपरिचित हैं—शिक्षाकी परिभाषा भी जो नहीं जानते और किसी तरहसे ग्रन्थ कण्ठ कर लेनेको ही विद्वत्ता समझते हैं। वास्तवमें विचार किया जाय तो किसी एक विषयको पढ़कर कोई किसी विषयका भी अच्छा मर्मज्ञ नहीं हो सकता है। एक विषयका मर्म समझनेके लिए उसके सहकारी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दूसरे विषयोंको भी जाननेकी ज़रूरत रहती है। व्याकरणका मर्मज्ञ कोई तब तक नहीं हो सकता जब तक साहित्यका ज्ञान प्राप्त न कर ले। धर्मशास्त्रोंका मर्म तबतक नहीं समझा जा सकता जबतक मनुष्यमें इतिहास, विज्ञान, भूगोल, समाजशास्त्र, देशकाल आदिका ज्ञान न हो। काव्यका मर्मज्ञ वह हो सकता है, जो मानसशास्त्रका ज्ञाता हो, मनुष्यसमाजके भीतरी भावोंसे परिचित हो और प्रकृतिके मुक्तक्षेत्रमें जो वर्षोंतक स्वच्छन्द विचरता रहा हो। इसलिए प्रत्येक विषयमें निष्णात करनेके लिए उस विषयके सहकारी विषयोंके साधारणज्ञान-की बहुत बड़ी आवश्यकता है। इसलिए जो ऊँचे दर्जेकी शिक्षासं-स्थायें हैं उनमें मुख्य विषयोंके साथसाथ दूसरे अप्रधान विषयोंका भी साधारण ज्ञान करा देनेका प्रबन्ध रहता है। बालकोंकी प्रकृति भी ऐसी ही होती है कि वे लगातार एक दो विषयोंको जी लगाकर नहीं पढ़ सकते हैं; घण्टे दो घण्टे पढ़नेके बाद एक विषयसे उनका जी ऊब उठता है। तब आवश्यक होता है कि उन्हें कोई दूसरा विषय पढ़ाया जाय और उसके बाद और कोई तीसरा। इस तरह विद्यार्थि-योंकी योग्यताके अनुसार एक साथ कई विषय बहुत अच्छी तरहसे पढ़ाये भी सकते हैं। शिक्षाविज्ञानके ज्ञाता इस बातपर ध्यान रखकर कि विद्यार्थियोंके मस्तकपर अधिक बोझा न पड़ जाय—उन्हें अधिक परिश्रम न करना पड़े—प्रत्येक कक्षामें कई विषयोंके पढ़ानेका प्रबन्ध कर सकते हैं।

६. संस्कृत पाठशालाओंके पठनक्रममें सबसे बड़ा विवाद इस बात पर उपस्थित होता है कि जैनग्रन्थ पढ़ाये जावें या जैनेतर विद्वानोंके बनाये हुए ग्रन्थ पढ़ाये जावें। इस विषयमें भी हम अपनी क्षुद्र सम्मति दे देना चाहते हैं। यह विवाद धर्मशास्त्रोंको लेकर नहीं होता;

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसमें सब ही सहमत हैं कि जैनसंस्थाओंमें जैनधर्मके ही ग्रन्थ पढ़ाये जाना चाहिए। विवाद है व्याकरण, न्याय, साहित्यके ग्रन्थोंको लेकर। कुछ सज्जन यह कहते हैं कि इन तीनोंकी शिक्षा केवळ जैन विद्वानोंके बनाये हुए ग्रन्थोंसे दी जाय और कुछ लोगोंका ख़याल है कि जैनेतर विद्वानोंके ग्रन्थ पढ़ाये जावें। इस पिछले ख़यालके जो लोग हैं वे प्रतिवर्ष सरकारी यूनीवर्सिटियोंकी संस्कृत परीक्षायें दिया करते हैं। पर हमारी समझमें इन दोनोंके बीचका मार्ग अच्छा है। सबसे पहले हमें इस बातपर ध्यान देना चाहिए कि हमारे विद्यार्थी इन विषयोंमें अच्छे व्युत्पन्न हो जावें—अजैन विद्यालयोंके पढ़नेवालोंकी अपेक्षा उनका ज्ञान कम न रह जाय और इसके बाद यह विचार करना चाहिए कि हमारे जैन विद्वानोंके ग्रन्थोंकी अवज्ञा न हो-उनकी प्रसिद्धिके मार्गमें रुकावट न हो। केवल इसी ख़यालसे कि यह जैन विद्वान्का बनाया हुआ है कोई ग्रन्थ पठनक्रममें भरती कर लिया जाय और उससे विद्यार्थियोंको वास्तविक बोध न हो तो यह ठीक नहीं। इसी तरह अमुक ग्रन्थ अमुक यूनीवर्सिटीमें पढ़ाया जाता है, इस लिए हम भी पढ़ावें इस ख़यालसे कोई जैनेतर ग्रन्थ भरती कर लिया जाय और उससे अच्छा बोध न हो तथा उसी विषयका उससे अच्छा जैनग्रन्थ पड़ा रहे, तो यह भी ठीक नहीं है। ग्रन्थोंकी योग्यता, उपयोगिता आदिपर सबसे अधिक दृष्टि रखनी चाहिए, उनके रचयिताओंके विषयमें कम। व्याकरण और साहित्यका धर्मसे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। प्रत्येक व्याकरण 'पुरुषः पुरुषौ पुरुषाः' ही सिद्ध करेगा, चाहे वह जैनाचार्यका बनाया हुआ हो और चाहे वैदिक बौद्ध या ईसाई विद्वान्का। देखना यह चाहिए कि सुगम और अल्पपरिश्रमसाध्य कौन है? यदि शाकटायन या जैनेन्द्र सम्पूर्ण और सुगम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है, तो कोई ज़रूरत नहीं कि दुरूह पाणिनीयके पढ़नेके लिए विद्यार्थी लाचार किये जावें और यदि डा० भाण्डारकरकी मार्गोपदेशिका अच्छी है तो क्या आवश्यकता है कि संस्कृतमें साधारण प्रवेश चाहनेवाले विद्यार्थी कातन्त्र या लघुकौमुदीके सूत्र घोंटा करें ?

जैन विद्वानोंने न्यायके ग्रन्थोंमें अगाध पाण्डित्य प्रदर्शित किया है। इस विषयके हमारे यहाँ सैकड़ों ग्रन्थ मौजूद हैं। अतः इस विषयमें अन्यान्य नैयायिकोंके ग्रन्थोंकी अपेक्षा करनेकी हमें ज़रूरत नहीं। तो भी इस विषयमें हमें इतने कट्टर न बन जाना चाहिए कि दूसरोंके ग्रन्थोंको पास भी न आने दें। यदि प्रारंभिक ज्ञान करनेवाले तर्कसंग्रह जैसे क्रमिक ग्रन्थ हमारे यहाँ न हों और ऐसा न्यायशास्त्रियोंके मुँहसे सुना भी है, तो उन्हें भरती कर लेनेमें संकोच न करना चाहिए। इसके सिवा ऊँची कक्षाओंके विद्यार्थी यदि अन्यमतके न्यायग्रन्थ भी पढ़ना चाहें तो उनके पढ़ानेका प्रबन्ध कर देना बुरा नहीं है। विद्वानोंको सबहीके ग्रन्थ पढ़नेकी आवश्यकता है।

काव्य नाटक अलङ्कारादिके ग्रन्थ भी हमारे यहाँ बहुत हैं; परन्तु हमारा यह विभाग न्यायादि विभागोंके समान पूर्ण नहीं है। यद्यपि हमारे कई काव्यग्रन्थ साहित्याकाशके चमकते हुए तारे हैं तो भी यदि हम चाहें कि अपने विद्यार्थियोंको कालिदास भवभूति आदिके ग्रन्थ बिलकुल ही न पढ़ावें तो हमारी समझमें उनका साहित्य-ज्ञान बहुत अधूरा रह जायगा और यह उनपर एक प्रकारका अन्याय होगा। जब यह कोई धर्मका विषय नहीं है तब इसमें इतना अधिक कट्टर होनेकी ज़रूरत नहीं है। हमारे जो अच्छे अच्छे काव्य हैं उनको प्रसिद्धिमें लाना, उनको पाठ्यग्रन्थ बनाना, यह हमारा कर्तव्य है। क्योंकि फिलहाल उनका आश्रय देनेवाले हम ही हैं। परन्तु साथ ही हमें इस विषयका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विशेष ज्ञान प्राप्त करनेके लिए औरोंके काव्योंको भी पढ़ना चाहिए। हमारा तो यहाँ-तक ख़याल है कि हम अपने काव्योंकी खूबियाँ सर्व साधारणमें तब ही प्रकट कर सकेंगे जब औरोंके काव्योंको अच्छी तरह पढ़ेंगे। नाटक और अलंकारके ग्रन्थ तो हमें औरोंके पढ़ना ही पड़ेंगे। क्योंकि इन विषयोंके हमारे कोई अच्छे ग्रन्थ अभीतक प्रकाशित ही नहीं हुए हैं।

७. उक्त सब बातोंकी व्यवस्था विद्यालयमें तब हो सकेगी जब उसमें एक अच्छे विद्वानकी नियुक्ति हो। यह विद्वान् प्राचीन और अर्वाचीन शिक्षाप्रणालीका ज्ञाता हो, शिक्षाविभागमें काम किया हुआ हो, संस्कृतका शास्त्री और अँगरेज़ीका ग्रेज्युएट हो। जहाँतक हम जानते हैं जैनियोंमें ऐसे विद्वानकी प्राप्ति नहीं हो सकती है। इसलिए किसी अजैनको ही बुला लेना चाहिए। शायद यह बात कुछ लोग पसन्द न करें परन्तु इसे पसन्द किये बिना विद्यालय कदापि उन्नति न कर सकेगा। इस विषयमें सेठजीको अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिए। धर्मशिक्षामें इससे बाधा नहीं आसकती। धर्मशिक्षाका कोर्स कमेटी बना देगी और उसके लिए जैनी पण्डितोंको नियत कर देगी—उसमें उक्त अजैन विद्वान् देखरेख रक्खेगा और पढ़ानेके ढंग आदिके विषयमें सूचना करता रहेगा—इसके आगे और कुछ हस्तक्षेप नहीं करेगा। बस, इससे सब डर दूर हो जायगा।

८. विद्यालयमें वृत्तिप्राप्त छात्र चाहे कम रक्खे जावें, पर एक प्रिंसिपाल (अजैन), एक सुपरिंटेंडेंट, एक धर्मशास्त्री, एक हिन्दी अध्यापक, एक वैयाकरण और साहित्यज्ञ और एक नैयायिक, इतने कर्मचारी बहुत अच्छी योग्यताके अच्छा वेतन देकर रक्खे जावें। इनके सिवा एक दो अध्यापक और भी रहें। यह स्मरण रखना चाहिए कि अध्यापक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गण जितने ही योग्य होंगे, विद्यालय उतना ही अच्छा और आदर्श बनेगा।

९ 'सेठ हुकमचन्द बोर्डिंग स्कूल' अभीतक जुदा चलता था। उसमें लगभग १२५) मासिक खर्च होता था। अब वह विद्यालयमें शामिल कर दिया जायगा; परन्तु यह मालूम न हुआ कि उक्त १२५) मासिक विद्यालय फण्डमें दिया जायगा या नहीं। हमारी समझमें सेठजीके नये दानसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है, इसलिए पहले दानकी रकम इस दो लाखके साथ अवश्य जोड़ देनी चाहिए।

आज इतना ही लिखकर हम विश्राम लेते हैं। उदासीनाश्रम और श्राविकाश्रमके विषयमें आगे लिखा जायगा।

करो सब देशकी सेवा।

बनो मत बन्धुओ न्यारे, प्रभूके हो सभी प्यारे,
इकट्ठे हो, करो सारे, सनातन देशकी सेवा ॥ १ ॥
हृदयकी ग्रन्थियाँ छोड़ो, स्वपरके भेदको तोड़ो,
परस्पर प्रेमको जोड़ो, करो सब देशकी सेवा ॥२॥
प्रगतिके संख बोज हैं, विवेकी वीर जागे है;
पड़े क्यों नींदमें प्यारो, करो सब देशकी सेवा ॥ ३ ॥
न हो यदि धन तो तनहीसे, न हो यदि श्रम तो धनहीसे,
नहीं दोनों तो मनहीसे, करो सब देशकी सेवा ॥४
करोड़ों अन्न बिन रोते, सिसकते प्राण हैं खोते,
बहाकर प्रेमके सोते, करो सब देशकी सेवा ॥५
पड़े लाखों अँधेरेमें, फिरें अज्ञान-फेरेमें,
उजारो ज्ञानके दीपक, करो सब देशकी सेवा ॥६

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हजारों रोग दुख सहते, बिना उपचारके मरते,
दयामृत इन पै बरसाके, करो सब देशकी सेवा ॥७
सुदुस्तर रूढ़ि-दलदलसे, उबारो, सत्यके बलसे,
दिखाओ धर्मके पथको, करो सब देशकी सेवा ॥८
बनो उत्साहसे ताजे, बजाओ ऐक्यके बाजे,
गिरोंको भी उठा करके, करो सब देशकी सेवा ॥९
बनो पहले स्वयं सच्चे, बनाओ और फिर अच्छे,
यही दृढ नीव धर करके, करो सब देशकी सेवा ॥१०
सदा जीता नहीं कोई, मरा परहित जिया सोई,
समझ अमरत्व इसको ही, करो सब देशकी सेवा ॥११
उठो, जागो, कमर कस लो, क्षणिक सुखमोहको तज दो,
कसम भगवानकी तुमको, करो सब देशकी सेवा ॥ १२
परम कर्तव्य 'जन-सेवा,' परम सद्धर्म 'जनसेवा'
समझकर भाइयो मेरे, करो सब देशकी सेवा ॥१३॥

—जैनहितेच्छु ।

मीठी मीठी चुटकियाँ।

१. कैलाशयात्रा।

ख़बर है कि जैनामित्रके सम्पादक ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी कैलाशकी यात्राके लिए जानेवाले हैं। उनके पास ब्रह्मचारी लामचीदासकी मृत आत्माका आग्रहपूर्ण पत्र आया है। वे लिखते हैं कि सगर-राजाके पुत्रोंकी खोदी हुई खाईको हमने आपके लिए पाट कर तैयार कर रक्खा है!

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२. सर्वोच्च डिटेक्टिव।

जैन समाजकी एक प्रसिद्ध धनिकसभाने पं० जवाहरलालजी साहित्य शास्त्रीको अपने डिटेक्टिव विभागके सर्वोच्च पदपर प्रतिष्ठित किया है। सुना है कि आपकी कार्यनिपुणतासे प्रसन्न होकर सभा आपको एक मेडल देने वाली है।

३. अनुसन्धान होना चाहिए।

आजकाल जैनगजटमें पं० सेठ मेवारामजीकी तूती नहीं बोलती। उनकी यशोगाथायें भी आजकल उनके भक्तोंको सुननेके लिए नहीं मिलती। इससे लोक बहुत उद्विग्न हो रहे हैं। क्या कारण है, इसका शीघ्र ही अनुसन्धान होना चाहिए।

४. डेप्युटेशन भेजा जाय।

इन्दौरके एक सेठ लगभग २॥ लाखका दानकर चुके, दूसरे ४ लाखकी संस्थायें खोल रहे हैं और एक तीसरे सेठ भी बहुत जल्दी लगभग २ लाख रुपया ख़र्च करनेवाले हैं। इन ख़बरोंसे कुछ लोगोंमें बड़ी हलचल मची है। अभी उस दिन प्रतिष्ठा करानेवाले पण्डितोंने एक सभा करके इन दानोंके विरुद्धमें एक प्रस्ताव पास किया। उसमें कहा कि ये दान शास्त्रविहित नहीं हैं। कलियुगी या पंचमकालीय दानोंके सिवा इन्हें और कोई नाम नहीं दिया जा सकता। आर्ष ग्रन्थोंमें इस प्रकारके दानोंका कहीं भी उल्लेख नहीं है। इनका परिणाम भी उल्टा होगा। इनकी संस्थाओंमें सब 'एकाकार' के उपासक तैयार होंगे। प्रभावनाका तरीका लोक भूलते जा रहे हैं। अच्छा हो यदि एक डेप्युटेशन उक्त सेठोंके यहाँ भेजा जाय और उनका ध्यान मन्दिरनिर्माणादि कार्योंकी ओर दिलाया जाय। डेप्युटेशनके मंत्री श्रीयुत प्रतिष्ठा-प्रभाकर महाराज नियत किये गये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५. कैफ़ियत तलब की गई।

समस्त शुद्धाम्नायी भाइयोंकी ओरसे मालवा प्रान्तिक सभाके पास एक पत्र भेजा गया है और उसमें इस बातकी कैफ़ियत तलब की गई है कि मालवा प्रान्त शुद्धाम्नायका केन्द्र है, तब उसकी सभाके सभापतिके पदपर सेठ हीराचन्द नेमिचन्दजी क्यों बैठाये गये? क्या सभाको यह मालूम नहीं है कि उक्त सेठजी बीसपंथी हैं और जैनसमाजमें छापेका प्रचार करनेवाले प्रधान आचार्य है। यदि उन्हें सभापति बनाया भी था तो कमसे कम इन्दौरके उस पुराने काग़ज़पर तो उनसे दस्तख़त करा लेना चाहिए था जिसमें छापेके ग्रन्थोंके घरमें न रखनेकी प्रतिज्ञायें लिखी हैं। देखें, सभा इस पत्रका क्या उत्तर देती है।

६. एक और भट्टारक।

सोजित्राकी भट्टारककी गद्दीपर पं० सुन्दरलालजी बहुत जल्दी बैठनेवाले हैं। बिना किसीकी सम्मतिसे एक जैन स्त्री उन्हें शीघ्र ही भट्टारक बना देना चाहती है। 'दिगम्बरजैन' ने इसके विरुद्ध बहुत कुछ लिखा है और चाहा है कि लोग इस अन्यायको रोकें। बिना सबकी सम्मति लिए सुन्दरलाल जैसे महात्माओंको गद्दीपर बिठा देना ठीक नहीं! परन्तु मेरी समझमें उसका यह खयाल ग़लत है। लोग उसकी सुनते भी कहाँ हैं? पिछले वर्ष मोतीलालजीके विषयमें क्या थोड़ी उछल कूद मचाई थी? पर हुआ क्या? वे भट्टारक बन बैठे और लोग उनकी पूजा भी करने लगे जब तक गुजराती भाइयोंमें प्रबल गुरुभक्तिका अस्तित्व है, तब तक वे उसकी बातें क्यों मानने लगे? और यह भी तो सोचना चाहिए कि आजकल स्त्रियोंका बल कितना बढ़ा हुआ है। जब एक स्त्रीने इसके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लिए कमर कसी है, तब गुजराती पुरुषोंमें इतनी शक्ति कहाँ है जो उसमें विघ्न डाल सकें! सुना है भट्टारक मोतीलालजी मंत्रविद्याके जानकार हैं। इस लिए हम पं० सुन्दरलालजीको सलाह देते हैं कि वे उनसे वह मंत्र जल्द सीख लेवें जिसके बलसे सैकड़ों लोगोंके विरुद्ध रहते भी वे ईडरके भट्टारक बन गये। उक्त मंत्रसे आपकी सारी मनोकामनायें सिद्ध हो जावेंगी।

७. श्रुतपञ्चमी आई।

हरसाल श्रुतपंचमी आती है और चली जाती है। जो सदा आती है उसकी हरबार याद दिलानेकी मालूम नहीं क्या ज़रूरत है। जैन-पत्र सम्पादकोंको यह एक तरहका रोग ही हो गया है कि वे वैशाख जेठ आया और लगे अपना वही पुराना राग आलपने। इस रागको सुनकर लोग और तो कुछ करते नहीं, ग्रन्थोंको झाड़झूड़कर ठीकठाक करके रख देते हैं और इस आरंभमें कुछ सूक्ष्म जीवोंको शरीरयातनासे मुक्त कर देते हैं! इससे मैं इस रागको पसन्द नहीं करता। अपने राम तो ठीक इससे उलटा कहते हैं कि भाई, इस श्रुतपंचमीके झग-ड़ेको छोड़ो; ये पढ़े लिखे लोग तुम्हारे गले ज़बर्दस्ती एक नया ज़रवा मढ़ रहे हैं। इन पुराने गले सड़े शास्त्रोंमें रक्खा ही क्या है जो इतनी मिहनत करते हो। यदि इनमें कुछ हो भी, तो उसे समझे कौन? अपने लड़के तो बारहखड़ी, पहाड़े, हिसाब, किताब आदि सीखकर ही अपने कारोबारको मजेसे सँभाल लेते हैं और रहा धर्म, सो मंगल पढ़ लेते हैं, पूजा जानते हैं, व्रत उपवास कर लेते हैं, हरियोंका त्याग तो कराना ही नहीं पड़ता है—स्वयं कर लेते हैं, फिर और क्या चाहिए? मेरी समझमें तो ये 'संसकीरत पराकरत' के शास्त्र पंडितोंको सोंप देना चाहिए, वे चाहे इनकी सुतपंचमी करें चाहे और कुछ करें। अपने

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लिए तो भाखाके पदमपुरानजी ही बहुत हैं और वे अब छप गये हैं इसलिए उनके सँभालनेकी ज़रूरत नहीं। जिस दिन वी. पी. आया अपनी तो उसी दिन सुतपंचमी है।

विविध समाचार।

जैनजातिका ह्रास—दक्षिणम० जैन सभाके सभापति श्रीयुक्त जयकुमार देवीदासजी चवरे वकीलने अपने व्याख्यानमें कहा है कि भारतके दूसरे समाजोंकी जनसंख्या जब बराबर बढ़ती जाती है तब जैनसमाजकी जनसंख्या बड़ी तेजीसे घट रही है। पिछले १० वर्षोंमें हमारी संख्यामें प्रतिशत ६-४ की कमी हुई है। और जिन-जातियोंकी जनसंख्या थोड़ी है उनमे तो यह कमी प्रतिशत १५ से कम नहीं हुई है! हमारे बरार प्रान्तमें तो बहुतसी जातियाँ बिलकुल नाश होनेके सम्मुख हो रही हैं। बरार प्रान्तके प्रायः सब ही लोग जानते हैं कि वहाँकी 'कुकेकरी' नामकी एक जैनजातिका थोड़े वर्ष पहले सर्वथा ही लोप हो गया है! इस पर जैमसमाजके नेताओंको ध्यान देना चाहिए।

जैन गुरुकुलकी स्थापना—पालीताणाकी 'यशोविजय जैन-पाठशाला' 'श्रीमहावीरयशोवृद्धि जैन गुरुकुल' के रूपमें परिवर्तित कर दी गई। गत अक्षय्यतृतीया (वैशाख शुक्ला तृतीया) को गुरु-कुलकी इमारतका मुहूर्त पालीताणाके एड मिनिस्टर मेजर एच. एस. स्ट्रोंग साहबके हाथसे खूब ठाटवाटके साथ किया गया। गुरुकुलमें इस समय ५१ विद्यार्थी हैं।

नई धर्मशाला—सम्मेदशिखर जानेवाले यात्रियोंके आरामके लिए ईसरी स्टेशनपर गुंजेटीवाले सेठ धनजी रेवचन्दकी ओरसे एक धर्मशाला बन गई है। धर्मशाला स्टेशनसे बिलकुल करीब है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक और उदासीनाश्रम—इन्दौरके उदासीनाश्रमके अतिरिक्त कुण्डलपुर, जिला दमोहमें एक और आश्रम खुलनेवाला है। उसका नाम होगा 'श्री महावीर उदासीनाश्रम'। लगभग आठ हजारका चन्दा हो गया है।

हिन्दीमें विश्वकोष—प्राच्यविद्यामहार्णव बाबू नगेद्रनाथने २७ वर्ष लगातार परिश्रम करके बंगला भाषामें 'विश्वकोश' तैयार किया है। उसमें लगभग ७ लाख रुपये खर्च हुए हैं! यह 'इन्साइक्लोपेडिया ब्रिटानिका' के ढँगका है। अब बाबू साहबने हिन्दीमें भी इसी ढँगका 'विश्वकोष' लिखना प्रारंभ कर दिया है। मासिकरूपसे निकलेगा। वार्षिक मूल्य चार रुपया है। इसमें भी उतना ही खर्च होगा। पर यह बंगलाका अनुवाद न होगा--उसकी केवल सहायता लेकर स्वतन्त्र लिखा जायगा। इसे पर्यायवाची शब्दोंका ही कोष न समझना चाहिए यह ज्ञानका भण्डार है। केवल अकबर शब्दही पर इसमें कई पृष्ठोंका महत्त्वपूर्ण निबन्ध है। हिन्दीका अहोभाग्य है।

स्याद्वादपर व्याख्यान—पूनेमें एक संस्था है। उसकी ओरसे प्रतिवर्ष वसन्त ऋतुमें बड़े बड़े विद्वानोंके व्याख्यान होते हैं। इस वर्ष ता० ८ मईको शोलापुर जैनपाठशालाके अध्यापक पं० वंशीधर शास्त्रीका श्रीयुक्त वासुदेव गोविन्द आपटे बी.ए. के सभापतित्वमें 'स्याद्वाद' के विषयमें व्याख्यान हुआ। सार्वजनिक संस्थाओंमें इस तरहके व्याख्यानोंसे बहुत लाभ होनेकी संभावना है।

द्वीपान्तरोंमें भारतीय सभ्यता—पूर्वकालमें भारतवासियोंने भी दीपान्तरोंमें जाकर अपने उपनिवेश स्थापित किये थे। अभी अभी ऐसे कई द्वीपोंका पता लगा है। जावा (यवद्वीप) में प्राचीन भारतवासियोंके वंशज अब तक मौजूद हैं। वे यहाँ सरीखी धोती पहनते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं, खेती आदिके काम मुहूर्त देखकर करते हैं, रामायण और महाभारतकी आख्यायिकाओंपर रचे हुए नाटक खेलते हैं, और बड़के झाड़ोंके नीचे उनके ग्राम्य देवोंके मन्दिर होते हैं। वहाँके मुसलमान तक हिन्दू देवोंकी पूजा करते हैं! वहाँ दो ज्वालामुखी पर्वत हैं उनका नाम उन्होंने अर्जुन और ब्रह्मा रख छोड़ा है। इस द्वीपके पूर्वकी ओर 'वाली' नामका द्वीप है। वहाँके तो प्रायः सबही लोग हिन्दू हैं। वर्ण-व्यवस्था तक उनमें मौजूद है।

विदेशमें हिन्दू-मंदिर—विदेशयात्राके लिए चाहे कितना ही प्रतिबन्ध किया जाय परन्तु वह रुकती नहीं। लोग तो जाते ही हैं अब उनके साथ उनके इष्टदेव भी जाने लगे हैं। नेटालके 'वेरुलम' नामक नगरमें अभी हाल ही गोपाललालका एक विशाल मन्दिर बनकर तैयार हुआ है।

बंगलामें जैनसाहित्य—बंगलाके मासिकपत्रोंमें अब जैनसाहित्यकी थोड़ी बहुत चर्चा होने लगी है। अभी अभी ऐसे कई लेख प्रकाशित हुए हैं। फाल्गुन चैत्रके 'साहित्य'में उपेन्द्रनाथ दत्त नामक किसी सज्जनने 'जैनशास्त्र' शीर्षक एक लेख लिखा है। इसमें चार अनुयोगोंका संक्षिप्त स्वरूप दिया है। लेखमें भूलें बहुत हैं; एक जगह लिखा है कि "श्वेताम्बरी लोग कहते हैं कि जैनशास्त्र जैनसाधु और तीर्थंकरोंके रचे हुए हैं; परन्तु दिगम्बरी कहतें है कि केवल महावीर तीर्थंकर ही इनके प्रणेता हैं।" पर यह भ्रम है। भूलें आगे सुधर जावेंगी—अभी चर्चा होने लगी इतना ही बहुत है।

जैनियोंपर नरहत्याका अभियोग—जयपुरकी जैनशिक्षाप्रचारक समितिके संस्थापक पं० अर्जुनलालजी सेठी बी. ए. इस समय बड़ी विपत्तिमें हैं। उनके माणिकचन्द, मोतीचन्द और जयचन्द

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नामक तीन शिष्योंपर और जोरावरसिंह नामक एक और युवकपर नीमेज जिला शाहबादके महन्त और उसके एक सेवककी हत्या करनेका अपराध लगाया गया है। मुकद्दमा आरामें चल रहा है। माणिकचन्द सरकारी गवाह बन गया है। उसने स्वयं अपने साथियों सहित हत्या करना स्वीकार किया है। और भी कई साक्षियोंसे हत्या करना सिद्ध हुआ है। हत्या महन्तकी सम्पत्ति लेनेके लिए की गई थी। जो सम्पत्ति मिलती वह देशसेवाके काममें ख़र्च की जाती। परन्तु अपराधी तिजोरी न तोड़ सके और भयके मारे भाग गये। सेठीजी इस हत्यामें शामिल नहीं बतलाये जाते हैं, परन्तु पुलिसको विश्वास है कि उनकी भी इसमें साजिश है। कुछ ऐसे सुबूत भी मिले हैं जिससे अनुमान होता है कि सेठीजीने एक राजद्रोह प्रचारक समिति बना रक्खी थी और उसका सम्बन्ध दिल्लीके षड्यन्त्र करनेवालोंसे था। अपराधियोंमेंसे जयचन्द और जोरावरसिंह लापता हैं। शिवनारायण द्विवेदी जो बम्बईमें गिरिफ़्तार किया गया था, उसके द्वारा पुलिसको इस सारे षडयन्त्रका पता लगा है। इस समाचारको पढ़कर हम लोगोंके आश्चर्यका कुछ ठिकाना नहीं रहा है। क्या जैनियोंके द्वारा भी ऐसे घोर पातक हो सकते हैं?

ग्रन्थ लिखाइए—आराके जैन सिद्धान्तभवनमें इस समय कई सुलेखक मौजूद हैं। भवनके संचित ग्रन्थोंमेंसे यदि कोई भाई ग्रन्थ लिखवाना चाहें तो मंत्रीसे शीघ्र ही पत्रव्यवहार करें।

मुंशीजीका देहान्त—गत ता० ८ मईको महासभाके महामंत्री मुंशी चम्पतरायजीका देहान्त हो गया। यह बड़े ही शोकका विषय है। आप कई महीनेसे बीमार थे।

———

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जैनग्रन्थरत्नाकर कार्यालयकी छपी हुई पुस्तकें।

मोक्षमार्गप्रकाश	१॥)	भक्तामरस्तोत्र-सान्वयार्थ और भाषापद्य	)
शाकटायन प्रक्रियासंग्रह (संस्कृत)	३)	सूक्तमुक्तावली	।=)
प्रद्युम्नचरित्र भाषावचनिका	२॥)	श्रुतावतारकथा	=)
बनारसीविलास (कविता)	१॥)	भूधरजैनशतक	=॥
प्रवचनसार परमागम (कविता)	१)	क्षत्रचूडामणि काव्य	॥)
वृन्दावनविलास (कविता)	॥)	उपमिति भवप्रपंचाकथा प्रथम प्रस्ताव	॥)
धूर्त्ताख्यान	=)	उपमितिभवप्रपंचाकथा द्वितीय प्रस्ताव	।=)
नित्यनियमपूजा	)	जैनविवाहपद्धति	=)
भाषापूजासंग्रह	)	बारस अणुवेक्खा	=)
मनोरमा उपन्यास	)	भाषानित्यपाठसंग्रह-रेशमीजिल्दका ॥) सादा	।=)
ज्ञानसूर्योदय नाटक	)	प्राणप्रिय-काव्य	=)
तत्त्वार्थसूत्रकी बालबोधिनी भाषा टीका	॥)	क्रियामंजरी	=)
जैनपदसंग्रह पहला भाग	।=)	सज्जनचित वल्लभ	=)
जैनपदसंग्रह दूसरा भाग	)	सप्तव्यसन चरित्र	॥=)
जैनपदसंग्रह चौथा भाग	॥=)	पंचेन्द्रियसंवाद	=)
जैनपदसंग्रह पांचवां भाग	।=)	जैनसिद्धान्त प्रवेशिका	=)
ज्ञानदर्पण	)	जैनबालबोधक प्रथम भाग	)
रत्नकरण्डश्रावकाचार सान्वयार्थ	)	बालबोधजैनधर्म प्रथम भाग	)
द्रव्यसंग्रह अन्वय अर्थ सहित	)	बालबोधजैनधर्म द्वि० भाग	=)
		बालबोध जैनधर्म तृ० भाग	=)
		बालबोध जैनधर्म च० भाग	।=)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शीलकथा	।)
दानकथा	=)
दर्शनकथा	≡)
निशिभोजनकथा	=)
रविव्रतकथा	-)
दियातले अंधेरा	-)॥
सदाचारी बालक	-)॥
समाधिमरण-दो तरहका	-)
समाधिमरण और मृत्यु महोत्सव	=)
अरहंतपासाकेवली	-)॥
भक्तामर-मूल और भाषा	-)
पंचमंगल	-)
दर्शनपाठ	-)
शिखरमाहात्म्य-भा० व०	-)
निर्वाणकांड	-)
सामायिक और आलोचना	-)
सामायिक पाठ भा०टी०	-)
कल्याणमन्दिर और एकी भावस्तोत्र	)॥।
आरतीसंग्रह	)॥।
छहढाला-दौलतराम कृत	)॥।
छहढाला-बुधजनकृत	-)
छहढाला-द्यानतराय कृत	-)
इष्टछत्तीसी	)॥
मोक्षशास्त्र (तत्त्वार्थसूत्र) मूल	-)॥
मुनिवंश दीपिका	)॥
परमार्थ जकड़ीसंग्रह	-)॥
सामाजिकचित्र	-)
विनतीसंग्रह	≡)
जिनेन्द्रगुणानुवाद पच्चीसी	-)।
आप्तपरीक्षा-मूल पाठमात्र	-)
आप्तमीमांसा ,,	-)
जिनसहस्रनाम	=)
द्यानतविलास	१)
चर्चाशतक	॥)-
न्यायदीपिका भाषाटी०स०	॥)

दूसरोंकी छपाई हुई पुस्तकें।

वृहद्द्रव्यसंग्रह	२)
पुरुषार्थसिद्ध्युपाय	१)
ज्ञानार्णव	४)
आत्मख्याति समयसार	४)
भगवती आराधनासार	४)
सर्वार्थसिद्धि भाषावचनिका	४)
विश्वलोचनकोष	१।≡)-
धन्यकुमारचरित्र	॥)
भद्रबाहुचरित्र	॥=)
षटपाहुड़	१)
धर्मसंग्रहश्रावकाचार	२)
धर्मरत्नोद्योत	१)
स्याद्वादमंजरी	४)
त्रैवर्णिकाचार (मराठी)	३)
इन्द्रियपराजयशतक	=)
अनुभवप्रकाश	।=)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संशयतिमिर प्रदीप ॥)
वाग्भट्टालंकार संस्कृत और भा० टी० १॥)
परमात्म प्रकाश ।=)
पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय— संक्षिप्त अर्थ ।)
देवगुरु शास्त्र पूजा-सार्थ ≡)
सुखानन्द मनोरमा नाटक ॥)
अंजना सुन्दरी नाटक ॥)
सोमासती नाटक -)॥
श्रावक वनिता बोधिनी ।)
कातंत्रपंच संधि-भा० टी० =)
अमरकोश मूल ।=)
अमरकोश भा० टी० १॥)
हिन्दीकी पहली पुस्तक =)॥
हिन्दीकी दूसरी पुस्तक ।)
हिन्दीकी तिसरी पुस्तक ।=)
हिन्दीकी तीसरी पुस्तक नाथूराम प्रेमीकृत ।-)
शील और भावना -)॥
वसुनन्दि श्रावकाचार भाषा टीका सहित ॥)
स्त्रीशिक्षा प्रथम भाग =)
स्त्रीशिक्षा द्वितीय भाग ≡)
यशोधरचरित्र-प्राकृत और भाषा टीका सहित २)
जैननियम पोथी)॥
सृष्टि कर्तृत्व मीमांसा -)
खंडलवाल इतिहास =)॥

पंचस्तोत्र भाषा =)
पंचस्तोत्र संस्कृत =)
मानिकविलास ।)
द्रव्यसंग्रह-सूरजभानु कृत ॥)
धर्मामृत रसायण -)
लावनी रत्नमाला -)
चौबोल चौबीसी -)
वर्ष प्रबोध (ज्योतिष) ॥)
आर्यमतलीला ।=)
जैनसम्प्रदाय शिक्षा ३॥)
चौबीस तीर्थंकर पूजा मनरंगलाल कृत ॥)
आराधना सार कथाकोश ३॥)
जिनेन्द्र गुन गायन =)
जैन उपदेशी गायन =)॥
गृहस्थधर्म १=)
जैनधर्मका महत्त्व ॥)
अनुभवानन्द ॥)
विद्वद् रत्नमाला ॥=)
जिनेन्द्रमत दर्पण प्रथमभाग -)
जैन जगदुत्पत्ति)॥
क्या ईश्वर जगत्कर्ता है)॥
प्रद्युम्नचरित्र (सार) ।=)
यशोधर चरित ।)
नागकुमार चरित ।=)
पवनदूत ।)
धर्मप्रश्नोत्तर २)
यात्रादर्पण २)
हनुमानचरित्र ।=)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रवचनसार	३)
गोम्मटसार कर्मकाण्ड	२)

संस्कृत ग्रन्थ ।

सुभाषित रत्नसंदोह	॥)
जीवन्धर चम्पू	१)
नेमिनिर्वाणकाव्य	॥=)
चन्द्रप्रभचरित	॥)
धर्मशर्माभ्युदय महाकाव्य	१)
द्विसंधान महाकाव्य	१॥)
यशस्तिलकचम्पू महाकाव्य प्रथमखंड	३॥)
,, उत्तरखंड	२॥)
काव्यमाला सप्तमगुच्छक	१)
काव्यानुशासन वाग्भटकृत	।=)
काव्यानुशासन-हेमचन्द्राचार्यकृत	२)
अध्यात्मकल्पद्रुम	॥)
जयन्तविजय	१)
जैननित्यपाठ संग्रह	।=)
पंचस्तोत्र	=)
तिलक मंजरी	२॥)
प्रभावक चरित	१॥)
पांडव चरित	४॥)
हीरसौभाग्य	५॥)
सनातन जैनग्रन्थमाला प्रथम गुच्छक	१)
अलंकार चिन्तामणि	॥)
पार्श्वाभ्युदय सटीक	॥)
परीक्षामुख	॥)
गोम्मट्टसार जीवकांड मूल	।=)
जीवंधर चरित्र	१)
शाकटायन प्रक्रिया संग्रह	३)
आप्तपरीक्षा	)
आप्तमीमांसा	)
मोक्षशास्त्र मूल	)॥
सहस्रनाम	=)
जैनस्तोत्र संग्रह	)
गणरत्न महोदधि	२)
जिनकथा द्वार्विंशति	=॥)
यशोधर चरित काव्य	॥)
जैनेन्द्र पंचाध्यायी	)
जैनेन्द्र प्रक्रिया	॥)
आप्त परीक्षा पत्र परीक्षा	१)

सर्वसाधारणोपयोगी पुस्तकें ।

उपन्यास और कहानियाँ ।

आदर्शदम्पती	॥=)
आश्चर्यघटना (नौकाडूबी)	१)
कादम्बरी	॥)
चन्द्रलोककी यात्रा	१)
ठोकपीटकर वैद्यराज	)
दुःखिनीबाला	)॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवरानीजिठानी ॥)
देवीउपन्यास ॥)
दोबहन ॥)
धर्मदिवाकर ।)
धोखेकी टट्टी ।=)
निःसहायहिन्दू =)
नूतनचरित्र ॥)
प्रणयिमाधव १)
पृथ्वी परिक्रमा ।=)
प्रेमप्रभाकर १)
पारस्योपन्यास १)
महाराष्ट्रजीवन-प्रभात ॥।=)
माधवीकंकण (इंडियन-प्रेसका) ॥)
माधवीकंकण (वेंकटेश्वर-प्रेसका) ॥=)
मुकुट ।)
युगलांगुलीय =)
रमामाधव ॥)
राजपूतजीवनसंध्या ॥)
विचित्रवधूरहस्य ॥)
वीर मालोजी भोंसले ॥=)
शिवाजीविजय ॥)
शेखचिल्लीकी कहानियाँ ॥)
षोड़शी १)
स्वर्णलता १)
समाज (रमेशचन्द्रदत्तकृत ॥)
सासपतोहू ॥)
हिन्दूगृहस्थ ॥=)

नाटक ।

किंगलियर नाटक ॥=)
प्रभासमिलन नाटक ॥=)
प्रेमलीला नाटक ।=)
महाराणा प्रतापसिंह ॥)
वेनिसका व्यापारी ॥)
शकुन्तलानाटक १)

बालकोपयोगी ।

कर्त्तव्यशिक्षा १)
कहानियोंकी पुस्तक ।=)
बच्चोंका खिलौना ।=)
खेलतमासा =)
लड़कोंका खेल =)॥
प्रबोधचन्द्रिका ॥)
बाल आरव्योपन्यास चार भागोंमें प्रत्येक भागका ॥)
बालनिबंधमाला ।=)
बालनीतिमाला ॥)
बालपंचतंत्र ॥)
बालहितोपदेश ॥)
बालविनोद पहला भाग -) दूसरा भाग -)॥ तीसरा भाग =) चौथा भाग ।=) पांचवां भाग ।=)
बालहितोपदेश ॥)
बालहिन्दी व्याकरण ।)
बाल स्वास्थ्य रक्षा ॥)
भाषापत्रबोध -)॥
भाषाव्याकरण =)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हिन्दीव्याकरण ≡)
हिन्दीशिक्षावली पहला भाग -)
दूसरा भाग -)॥ तीसरा भाग =) चौथा भाग ≡)॥ पांचवां भाग ।)॥

स्त्रियोपयोगी पुस्तकें।

आर्यललना ।)
गृहिणी भूषण ॥)
पतिव्रता ॥।)
पाकप्रकाश ≡)
बालापत्र बोधिनी ।-)
बाला बोधिनी पहला भाग =)
दूसरा भाग ≡)॥ तीसरा भाग ।) चौथा भाग ।-) पांचवां भाग ।=)
भारतीय विदुषी ।=)
स्वामी और स्त्री ॥=)
सीताचरित १।)
सुशीलाचरित्र १)
सौभाग्यवती =)॥

कविताकी पुस्तकें।

जयद्रथ-वध ॥)
पद्य-प्रबंध ॥=)
रंगमें भंग ।)
हम्मीरहठ ।)
हिन्दी मेघदूत ।=)

इतिहास।

इंग्लैंडका इतिहास ॥=)
जर्मनीका इतिहास ।=)
जापानका इतिहास ॥)
जापानका उदय ॥।)
जापान दर्पण ॥।)
नैपालका इतिहास ॥)
फ्रांसका इतिहास ।≡)
राजस्थान (राजपूताने) का इतिहास प्र० भाग १०)
,, ,, दू० भा० १०)
रूसका इतिहास ।=)
सिंधका इतिहास ।=)॥

जीवन चरित।

अब्दुलरहमानखां ॥।)
इतिहास गुरुखालसा २)
उम्मेदसिंह चरित १)
औरंगजेबनामा प्र० भा० ।=)
,, द्वि० भा० ।=)
गारफील्ड ॥)
दशकुमार चरित ॥=)
बुद्धका जीवन चरित ॥)
राबिन्सनक्रूसो १।)
हिन्दीकोविदरत्नमाला १॥)

वैद्यक।

आरोग्यविधान =)॥
परिचर्याप्रणाली ।)
सुखमार्ग ।)
क्षयरोग ।-)

पं० महावीरप्रसाद द्विवेदी कृत।

अर्थशास्त्र प्रवेशिका ।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुमारसंभवसार (कविता)	।)	चन्द्रकान्त (वेदान्त)	२॥)
कालिदासकी निरंकुशता	।)	जानस्टुअर्ट ब्लैकी	॥=)
जलचिकित्सा	।)	नवजीवनविद्या	१॥)
नाट्यशास्त्र	।)	नाट्यप्रबंध	।)
महाभारत (सचित्र)	३)	पश्चिमीतर्क	१)
रघुवंश महाकाव्य	२)	भारतभ्रमण (पांचभाग)	९)
बेकनविचार रत्नावली	॥)	मनोविज्ञान	॥)
शिक्षा	२॥)	मानसदर्पण	।=)
हिन्दीभाषाकी उत्पत्ति	।)	राज्यप्रबंधशिक्षा	॥)
विविध विषयोंकी पुस्तकें।		राष्ट्रीयसन्देश	।=)
इन्साफसंग्रह	।=)	व्यवहारपत्रदर्पण	॥)
उपदेशकुसुम	=)	स्वर्गीयजीवन	॥=)
कर्मयोग	।=)	स्वाधीनविचार	।)
ठहरो (उपदेशदर्पण)	।)	समाज (रवीन्द्रनाथकृत)	॥)

नये जैनग्रन्थ।

द्यानतविलास या धर्मविलास–कविवर द्यानतरायजीकी कविताकी प्रशंसा करनेकी जरूरत नहीं। सब ही जैनी उससे परिचित हैं। उनका यह ग्रन्थ जिसमें उनकी प्रायः सब ही कविताओंका संग्रह है बड़ीही मिहनत, शुद्धता और सुन्दरतासे छपाया गया है। इसमें सारे जैनसिद्धान्तका रहस्य भरा हुआ है। मूल्य सिर्फ १) रु०। (इसमें चरचाशतक, द्रव्यसंग्रह शामिल नहीं है क्योंकि ये ग्रन्थ जुदा छप चुके हैं।)

चर्चाशतक—मूलपद्य और सरल हिन्दी टीका सहित। मूल्य ।॥)

न्यायदीपिका—मूल संस्कृत और सरल हिन्दी भाषाटीका। मूल्य ॥।)

गृहस्थ धर्म—श्रावक धर्मका खुलाशा वर्णन है। मूल्य १=)

जैनधर्मका महत्त्व—अजैन विद्वानों, लेखकों, वाख्यातायों द्वारा जैनधर्मका महत्त्व दिखलाया गया है। मूल्य बारह आने।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनुभवानन्द—ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी रचित अध्यात्मका मनन करने योग्य ग्रन्थ है। मूल्य आठ आने।

विद्वद्रत्नमाला—जिनसेन, गुणभद्राचार्य आशाधर, अमितगतिसूरि, वादिराज सूरि, महाकवि मल्लिषेण, और समन्तभद्राचार्य इतने विद्वानोंका बड़ी खोजसे लिखा हुवा इतिहास। मूल्य दश आने।

जिनेन्द्रमत दर्पण प्रथम भाग—ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजी रचित। मूल्य एक आना।

जैन जगदुत्पत्ति—सृष्टि कर्त्ता खण्डन विषयक एक लेख। मूल्य ‌)॥

क्या ईश्वर जगत्कर्त्ता है—अनेक युक्तियोंद्वारा जगत्का कोई कर्त्ता नहीं है यह बतलाया है। मूल्य)॥

उपमिति भवप्रपंचा कथा द्वितीय प्रस्ताव—चारोंगतियोंके दुःखोंका वर्णन है। मूल्य पांच आने।

प्रद्युम्न चरित्र—प्रद्युम्नकी कथा का संक्षेपमें वर्णन। मूल्य छह आने।

यशोधर चरित काव्य—एकीभाव स्तोत्रके कर्त्ता वादिराज सूरिने यशोधर महाराजका सुन्दर चरित वर्णन किया है। ग्रन्थ मूल संस्कृतमें है। मूल्य आठ आने।

यशोधर चरित—उपर्युक्त ग्रन्थका हिन्दी अनुवाद। मूल्य चार आने

नागकुमार चरित—सरल हिन्दीमें नागकुमारका चरित है। मूल्य छह आने।

पवनदूत—मूल संस्कृत और हिन्दी अनुवाद सहित। मूल्य चार आने।

धर्मप्रश्नोत्तर—सकलकीर्ति आचार्य कृत मूल ग्रन्थकी यह हिन्दी भाषाटीका है। इसमें प्रश्नोत्तर रूपसे श्रावकाचारका बर्णन किया गया है। मूल्य दो रु०।

यात्रा दर्पण—यह अभी हालहीमें छपा है। तीर्थक्षेत्रोंके सिवा और भी प्रसिद्ध प्रसिद्ध स्थानोंका वर्णन है। एक तीर्थस्थानोंका नकशा भी अलग दिया गया है जिससे यात्रियोंको बड़ा सुभीता हो गया है। मूल्य दो रु०।

हनुमान चरित्र—हनुमानजीका संक्षिप्त चरित सरल भाषामें लिखा गया है। मूल्य छह आने।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रवचन सार--मूल संस्कृत, छाया अमृतचन्द्र सूरि और जयसेन सूरि कृत दो संस्कृत टीका और-पं० मनोहरलालजी कृत भाषाटीका सहित। मूल्य तीन रु०।

गोम्मटसार कर्मकाण्ड--मूल, संस्कृत छाया और पं०मनोहरलालजीकी बनाई हुई संक्षिप्त भाषा टीकासहित। मूल्य दो रुपया।

सत्यार्थ यज्ञ--दूसरा नाम मनरंगलालजी कृत चौबीस तीर्थंकर पूजा। यह विधान अभी हाल ही में छपा है। मूल्य आठ आने।

यशोधर चरित--मूल प्राकृत और भाषाटीका सहित। मूल्य ३)

आराधनासार कथा कोश--इसमें १०८ कथायें कवितामें वर्णन की गई हैं। मूल्य ३॥)

जिनेन्द्रगुणगायन--इसमें नाटककी चालके हुजूरी नई तर्जके पद, भजन, दादरा, ठुमरी, गजल, रेखता इत्यादि हैं। मूल्य दो आने।

जैन उपदेशी गायन--इसमें नई तर्जके नाटकादिके ५३ भजनोंका संग्रह है। मूल्य ढाई आने।

हितोपदेश वैद्यक--जैनाचार्य श्रीकण्ठसूरि रचित। मुरादाबाद निवासी पं० शंकरलालजी जैन वैद्यने इसकी भाषा टीका की है। मूल्य १॥)

समरादित्यसंक्षिप्त--श्वेताम्बराचार्यकृत प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थ। इसका कथाभाग और कवित्व बहुत सुन्दर है। मूल्य ढाई रुपया।

जैनेन्द्र पंचाध्यायी--मूल सूत्र पाठ मात्र। मूल्य चार आने।

जैनेन्द्र प्रक्रिया--पुर्वार्द्ध, आचार्य वर्य गुणनन्दि रचित व्याकरण ग्रंथ मूल्य बारह आने।

सनातन जैन ग्रंथमाला--प्रथम खण्ड, आप्तपरीक्षा और पत्रपरीक्षा संस्कृत टीका सहित हैं। मूल्य एक रु०

अन्यान्य स्थानोंकी पुस्तकें।

स्वर्गीय जीवन—अमेरिकाके प्रसिद्ध अध्यात्मिक विद्वान् राल्फ वाल्डो ट्राईनकी अंग्रेजी पुस्तकका अनुवाद। अनुवादक, सुखसम्पत्तिराय भंडारी उपसम्पादक सद्धर्म प्रचारक। पवित्र, शान्त, निरोगी, और सुखमय जीवन कैसे बन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सकता है, मानसिक प्रवृत्तियोंका शरीरपर और शारीरिक प्रवृत्तियोंका मनपर क्या प्रभाव पड़ता है आदि बातोंका इसमें बड़ा ही हृदयग्राही वर्णन है। प्रत्येक सुखाभिलाषी स्त्रीपुरुषको यह पुस्तक पढ़ना चाहिए। मूल्य ॥≋)

स्वामी और स्त्री—इस पुस्तकमें स्वामी और स्त्रीका कैसा व्यवहार होना चाहिए इस विषयको बड़ी सरलतासे लिखा है। अपढ़ स्त्रीके साथ शिक्षित स्वामी कैसा व्यवहार करके उसे मनोनुकूल कर सकता है और शिक्षित स्त्री अपढ पति पाकर उसे कैसे मनोनुकूल कर लेती है इस विषयकी अच्छी शिक्षा दी गई है। और भी गृहस्थी संबन्धी उपदेशोंसे यह पुस्तक भरी है। मूल्य दश आना।

गृहिणीभूषण—इस पुस्तकमें नीचे लिखे अध्याय हैं- १ पतिके प्रति पत्नीका कर्तव्य, २ पति पत्नीका प्रेम, ३ चरित्र, ४ सतीत्व एक अनमोल रत्न है, ५ पतिसे बातचीत करना, ६ लज्जाशीलता, ७ गुप्तभेद और बातोंकी चपलता, ८ विनय और शिष्टाचार, ९ स्त्रियोंका हृदय, १० पड़ोसियोंसे व्यवहार, ११ गृहसुखके शत्रु, १२ आमदनी और खर्च, १३ वधूका कर्तव्य, १४ लड़कियोंके प्रति कर्तव्य, १५ गंभीरता, १६ सद्भाव, १७ सन्तोष, १८ कैसी स्त्रीशिक्षाकी जरूरत है, १९ फुरसतके काम, २० शरीररक्षा, २१ सन्तान पालन, २२ गृह कर्म, २३ गर्भवतीका कर्तव्य और नवजात शिशुपालन, २४ विविध उपदेश, प्रत्येक पढ़ी लिखी स्त्री इस पुस्तकसे लाभ उठा सकती है। भाषा भी इसकी सबके समझने योग्य सरल है। मूल्य आठ आने।

कहानियोंकी पुस्तक—लेखक लाला मुन्शीलालजी एम. ए. गवर्नमेंट पेन्शनर लाहौर। इसमें छोटी छोटी ७५ कहानियोंका संग्रह है। बालकों और विद्यार्थियोंके बड़े कामकी है। इसकी प्रत्येक कहानी मनोरंजक और शिक्षाप्रद है सुप्रसिद्ध निर्णयसागर प्रेसमें छपी है। मूल्य पांच आना।

समाज—बंग साहित्यसम्राट् कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरकी बंगला पुस्तकका हिन्दी अनुवाद। इस पुस्तककी प्रशंसा करना व्यर्थ है। सामाजिक विषयोंपर पाण्डित्यपूर्ण विचार करनेवाली यह सबसे पहली पुस्तक है। पुस्तकमेंके समुद्रयात्रा, अयोग्यभक्ति, आचारका अत्याचार आदि दो तीन लेख पहले जैनहितैषीमें प्रकाशित हो चुके हैं। जिन्होंने उन्हें पढ़ा होगा वे इस ग्रन्थका महत्त्व समझ सकते हैं। मूल्य आठ आना।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राष्ट्रीय सन्देश—परमहंस श्रीस्वामी रामतीर्थजी एम्.ए. के अंग्रेजी लेखों-का अनुवाद। अनुवादक बाबू नारायणप्रसादजी अरोड़ा बी. ए. कानपुर। इस पुस्तकमें स्वामी रामतीर्थजीके उत्तम उत्तम लेख और उनकी संक्षिप्त जीवनी है। इनमेंसे अधिकतर लेख स्वामीजीने अमेरिकामें या अमेरिकासे आनेके पश्चात् लिखे थे इसमें स्वामीजीका अमेरिकाका अनुभव भी मौजूद है। इन लेखोंसे स्वामीजीका देश प्रेम और असली वेदान्त टपकता है। पृष्ठ संख्या ९६ मूल्य छः आने।

स्वाधीन विचार—श्रीयुक्त लाला हरदयालसिंहजी एम्.ए. के नामसे देशका शिक्षित समुदाय अपरिचित नहीं। आज कल आप संयुक्त राज्य अमेरिकाके बड़े भारी विश्वविद्यालयमें हिन्दू दर्शन शास्त्रके अध्यापक हैं। इस पुस्तकमें आपके ही लेखोंका संग्रह है। इसमें निम्न लिखित ९ विषय हैं १ पंजाबमें हिन्दीके प्रचारकी जरूरत, २ भाषा और जातिका सम्बन्ध, ३ धर्मका प्रचार, ४ अमेरिकामें भारत-वर्ष, ५ यूरोपकी नारी, ६ राष्ट्रकी सम्पत्ति, ७ कुछ भारतीय आन्दोलनोंपर विचार, ८ भारतवर्ष और संसारके आन्दोलन, ९ महापुरुष। पृष्ठ संख्या ९४ मूल्य सिर्फ चार आना।

राज्यप्रबंध शिक्षा—यह सुप्रसिद्ध देशी राजनीतिज्ञ ट्रावंकोर, बड़ोदा, इन्दौरके भूतपूर्व दीवान सर टी. माधवरावके अँगरेजी ग्रन्थ 'माइनर हिटेस्का हिन्दी अनुवाद है। काशी नागरी प्रचारिणी सभाने छपवाया है। इसमें देशी राजाओं और जमीदारोंको अपनी रियासतोंका प्रबन्ध कैसे करना चाहिए, प्रजाके प्रति उनका क्या कर्तव्य है आदि बातोंका बड़ी सरल भाषामें वर्णन है। मूल्य ॥)

पश्चिमीतर्क—इसे डी. ए. बी. कालेज लाहौरके प्रोफेसर लाला दीवानचन्द एम. ए, ने लिखा है। इसमें पाश्चात्य संसारके दर्शनशास्त्रका प्रारंभसे लेकर अबतकका इतिहास, उसका विकाश, उसके सिद्धान्त और दार्शनिकोंका इति-हास आदि है। पुस्तक इतनी अच्छी है कि पंजाबके शिक्षाविभागने लेखकको प्रसन्न होकर १५००) पारितोषिक दिया है। मूल्य एक रुपया।

प्रेमप्रभाकर—रूसके प्रसिद्ध विद्वान् महात्मा टाल्सटायकी २३ कहानि-योंका हिन्दी अनुवाद। प्रत्येक कहानी दया, करुणा, विश्वव्यापी प्रेम, श्रद्धा और भक्तिके तत्त्वोंसे भरी हुई है। बालक स्त्रियाँ जवान बूढे सब ही इनसे लाभ उठा सकते हैं। मूल्य १)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धर्मदिवाकर—इसमें मनुष्यके जीवनका आदर्श बतलाया गया है। संसारमें कितना दुःख है और परोपकार स्वार्थत्याग प्रेममें कितना सुख है, यह उसमें एक कथाके बहाने दिखलाया है। मूल्य ।)

नवजीवनविद्या—जिनका विवाह हो चुका है अथवा जिनका विवाह होनेवाला है उन युवकोंके लिए यह बिलकुल नये ढंगकी पुस्तक हाल ही छपकर तैयार हुई है। यह अमेरिकाके सुप्रसिद्ध डाक्टर कावेनके 'दी सायन्स आफ ए न्यू लाईन' नामक ग्रन्थका हिन्दी अनुवाद है। इसमें नीचे लिखे अध्याय हैं—१ विवाहके उद्देश्य और लाभ, २ किस उमरमें विवाह करना चाहिए, ३ स्वयंवर, ४ प्रेम और अनुरागकी परीक्षा, ५ स्त्रीपुरुषोंकी पसन्दगी, ७ सन्तानोत्पत्तिकारक अवयवोंकी बनावट, ९ वीर्यरक्षा, १० गर्भ रोकनेके उपाय, ११ ब्रह्मचर्य, १२ सन्तानकी इच्छा, १३ गर्भाधानविधि, १४ गर्भ, १५ गर्भपर प्रभाव, १६ गर्भस्थजीवका पालनपोषण, १७ गर्भाशयके रोग, १८ प्रसवकालके रोग, इत्यादि प्रत्येक शिक्षित पुरुष और स्त्रीको यह पुस्तक पढ़ना चाहिए। हम विश्वास दिलाते हैं कि इसे पढ़कर वे अपना बहुत कुछ कल्याण कर सकेंगे। पक्की जिल्द मूल्य पौने दो रुपया।

चन्द्रकांत प्र० भा०—(वेदान्त ज्ञानका मुख्यग्रंथ) बम्बईप्रान्तके सुप्रसिद्ध 'गुजराती' साप्ताहिक पत्रके गुजराती ग्रंथका अनुवाद, अनेक ग्रंथोंका सार लेकर इस ग्रंथकी रचना हुई है। वेदान्त जैसे कठिन विषयको बड़ी सहज रीतिसे समझाया है। मूल्य २॥)

विद्यार्थीके जीवनका उद्देश—क्या होना चाहिए उसका एक ग्रेटुएट द्वारा लिखित इंग्लिश लेखका हिन्दी अनुवाद। मूल्य एक आना।

विचित्रवधूरहस्य—बंगसाहित्यसम्राट् कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुरके बंगाली उपन्यासका हिन्दी अनुवाद। रवीन्द्रबाबूके उपन्यासोंकी प्रशंसा करनेकी जरूरत नहीं करुणारसपूर्ण उपन्यास है। मूल्य ॥)

स्वर्णलता—बहुत ही शिक्षाप्रद सामाजिक उपन्यास है। बंगाली भाषामें यह चौदह बार छपके छपके बिक चुका है। हिन्दीमें अभी हाल ही छपा है। मूल्य १।)

माधवीकंकण—बड़ोदा राज्यके भूतपूर्व दीवान सर रमेशचन्द्रदत्तके बंगला उपन्यासका हिन्दी अनुवाद। मूल्य ॥।)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

षोड़शी—बंगलाके सुप्रसिद्ध गल्पलेखक बाबू प्रभातकुमार मुख्योपाध्याय बैरिस्टर ऍटलाकी पुस्तकका अनुवाद। इसमें छोटे छोटे १६ खण्ड उपन्यास हैं। मूल्य १)

महाराष्ट्रजीवनप्रभात—सर रमेशचन्द्र दत्तके बंगला ग्रन्थका नया हिन्दी अनुवाद, इंडियन प्रेसका। वीर रसपूर्ण बड़ा ही उत्तम उपन्यास है ॥।=)

राजपूतजीवनसन्ध्या—यह भी उक्त ग्रन्थकारका ही बनाया हुआ है। इसमें राजपूतोंकी वीरता कूट कूट कर भरी है। मूल्य बारह आने।

सुशीलाचरित—स्त्रियोपयोगी बहुत ही सुन्दर ग्रन्थ। मूल्य एक रुपया

शेख चिल्लीकी कहानियाँ। पुराने ढंगकी मनोरंजक कहानियाँ हाल ही छपी हैं। बालक युवा वृद्ध सबके पढ़ने योग्य। मूल्य ॥)

ठोक पीटकर वैद्यराज। यह एक सभ्य हास्यपूर्ण प्रहसन है। एक प्रसिद्ध फ्रांसीसी ग्रन्थके आधारसे लिखा गया है। हंसते हंसते आपका पेट फूल जायगा। आजकल विना पढ़े लिखे वैद्यराज कैसे बन बैठते हैं, सोभी मालूम हो जायगा। मूल्य सिर्फ चार आना।

आर्यललना—सीता, सावित्री आदि २० आर्यस्त्रियोंका संक्षिप्तजीवन-चरित। मूल्य ।)

बालाबोधिनी—पाँच भाग। लड़कियोंको प्रारंभिक शिक्षा देनेकी उत्तम पुस्तक। मूल्य क्रमसे =), ≈), ।), ।-), ।=)।

आरोग्यविधान—आरोग्य रहनेकी सरल रीतियां। मू०≈)॥

अर्थशास्त्रप्रवेशिका—सम्पत्तिशास्त्रकी प्रारंभिक पुस्तक। मूल्य।)

सुखमार्ग—शारीरिक और मानसिक सुख प्राप्त करनेके सरल उपाय। मू०।)

कालिदासकी निःकुशता—महाकवि कालिदासके काव्यदोषोंकी समालोचना। पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदीकृत। मूल्य।)

हिन्दीकोविदरत्नमाला—हिन्दीके ४० विद्वानों और सहायकोंके चरित। मू० १॥)

कर्तव्यशिक्षा—लार्ड चेस्टर फ़ील्डका पुत्रोपदेश। मूल्य १)

रघुवंश—महाकवि कालिदासके संस्कृत रघुवंशका सरल, सरस और भावपूर्ण हिन्दी अनुवाद। पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी लिखित। मूल्य २)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर-सीरीज़ ।

हमने श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकी ओरसे हिन्दी साहित्यको उत्तमोत्तम ग्रन्थरत्नोंसे भूषित करनेके लिए उक्त ग्रन्थमाला निकालना शुरू की है। हिन्दीके नामी नामी विद्वानोंकी सम्मतिसे इसके लिए ग्रन्थ तैयार कराये जाते हैं। प्रत्येक ग्रन्थकी छपाई, सफाई, कागज़, जिल्द आदि लासानी होती है। स्थायी ग्राहकोंको सब ग्रन्थ पौनी कीमतमें दिये जाते हैं। जो ग्राहक होना चाहें उन्हें पहले आठ आना जमा कराकर नाम दर्ज करा लेना चाहिए। सिर्फ ५०० ग्राहकों की जरूरत है। अब तक इसमें जितने ग्रन्थ निकले हैं, उन सबहीकी प्रायः सब ही पत्रोंने एक स्वरसे प्रशंसा की है। हमारे जैनी भाइयोंको भी इसके ग्राहक बनकर अपने ज्ञानकी वृद्धि करनी चाहिए। नीचे लिखे ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं:—

१ स्वाधीनता ।

यह हिन्दी साहित्यका अनमोल रत्न, राजनैतिक सामाजिक और मानसिक स्वाधीनताका अचूक शिक्षक, उच्च स्वाधीन विचारोंका कोश, अकाट्य युक्तियोंका आकर और मनुष्य समाजके ऐहिक सुखोंका पथप्रदर्शक ग्रन्थ है। इसे सरस्वतीके धुरन्धर सम्पादक पं० महावीर प्रसादजी द्विवेदीने अँग्रेजीसे अनुवाद किया है। मूल्य दो रु०।

२ जॉन स्टुअर्ट मिलका जीवन चरित।

स्वाधीनताके मूल लेखक और अपनी लेखनीसे युरोपमें नया युग प्रवर्तित कर देनेवाले मिल साहबका बड़ा ही शिक्षाप्रद जीवन चरित है। इसे जैनहितैषीके सम्पादक नाथूराम प्रेमीने लिखा है। मू० चार आने.

३ प्रतिभा ।

मानव चरितको उदार और उन्नत बनानेवाला, आदर्श धर्मवीर और कर्मवीर बनानेवाला हिन्दीमें अपने ढँगका यह पहला ही उपन्यास है। इसकी रचना बड़ी ही सुन्दर प्राकृतिक और भावपूर्ण है। मूल्य कपड़ेकी जिल्द १॥), सादी १)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४ आँखकी किरकिरी ।

जिन्हें अभी हाल ही सवालाख रुपयेका सबसे बड़ा पारितोषिक (नोबेल प्राइज) मिला है जो संसारके सबसे श्रेष्ठ महाकवि समझे गये हैं, उन बाबू रवीन्द्रनाथ ठाकुरके प्रसिद्ध बंगला उपन्यास 'चोखेर वाली' का यह हिन्दी अनुवाद है। इसमें मानसिक विचारोंके, उनके उत्थान पतन और घात प्रतिघातोंके बड़े ही मनोहर चित्र खींचे हैं। भाव सौन्दर्यमें इसकी जोड़का दूसरा कोई उपन्यास नहीं। इसकी कथा भी बहुत ही सरस और मनोहारिणी है। मूल्य पक्की जिल्दका १॥) और साधीका १) रु०

५ फूलोंका गुच्छा ।

इसमें ११ खण्ड उपन्यासों या गल्पोंका संग्रह है । इसके प्रत्येक पुष्पकी सुगन्धि, सौन्दर्य और माधुर्यसे आप मुग्ध हो जावेंगे । प्रत्येक कहानी जैसी सुन्दर और मनोरंजक है वैसी ही शिक्षाप्रद भी है। मूल्य दश आने ।

६ मितव्ययिता ।

यह प्रसिद्ध अँगरेज लेखक डा० सेमवल स्माइल्स साहबकी अँगरेजी पुस्तक 'थिरिफ्ट' का हिन्दी अनुवाद है । इसके लेखक हैं बाबू दयाचन्दजी गोयलीय बी. ए.। इस फिजूल खर्ची और विलासिताके जमानेमें यह पुस्तक प्रत्येक भारतवासी बालक युवा वृद्ध और स्त्रीके नित्य स्वाध्याय करने योग्य है । इसके पढ़नेसे आप चाहे जितने अपव्ययी हों, मितव्ययी संयमी और धर्मात्मा बन जावेंगे। बड़ी ही पाण्डित्य पूर्ण युक्तियोंसे यह पुस्तक भरी है। इसमें सामाजिक, नैतिक, धार्मिक और राष्ट्रीय आदि सभी दृष्टियोंसे धन और उसके सदुपयोगोंका विचार किया गया है । स्कूलके विद्यार्थियोंको इनाममें देनेके लिए यह बहुत ही अच्छी है। जून महीनेमें तैयार हो जायगी ।

७ चौबेका चिट्ठा ।

वंगभाषाके सुप्रसिद्ध लेखक बाबू बंकिमचन्द्र चटर्जीके लिखे हुए 'कमलाकान्तेर दफ्तर' का हिन्दी अनुवाद । अनुवादक पं० रूपनारायण पाण्डेय। इस पुस्तकके ५–६ लेख जैनहितैषीमें 'विनोद विवेक–लहरी' के नामसे निकल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चुके हैं। जिन पाठकोंने उन्हें पढ़ा है वे इस पुस्तककी उत्तमताको जान सकते हैं। हँसी दिल्लगी और मनोरंजनके साथ इसमें ऊँचेसे ऊँचे दर्जेकी शिक्षा दी है। देशकी सामाजिक धार्मिक और राजनैतिक बातोंकी इसमें बड़ी ही मर्मभेदी आलोचना है। हिन्दीमें तो इसकी जोड़का परिहासमय किन्तु शिक्षा पूर्ण ग्रन्थ है ही नहीं, पर दूसरी भाषाओंमें भी इस श्रेणीके बहुत कम ग्रन्थ हैं। एकबार पढ़ना शुरु करके फिर आप इसे साइकेलसे छोड़ सकेंगे। मूल्य ग्यारह आने।

स्वदेश (रवीन्द्र बाबूकृत), शिक्षा (रवीन्द्रकृत) आदि और कई ग्रन्थ तैयार हो रहे हैं।

क्या ईश्वर जगत्का कर्ता है ?

दूसरी बार छपकर तैयार है। इसके लेखक बाबू ज्ञानचन्द्र जैन बी. ए. ने इस छोटेसे लेखमें अनेक युक्तियों द्वारा इस बातको सिद्ध किया है कि इस जगतका कोई कर्त्ता हर्ता नहीं है। ईश्वरको जगतका कर्ता माननेवाले आर्यसमाजी आदि मतावलम्बियोंमें बांटनेके लिए यह ट्रैक्ट बड़ा अच्छा है। मूल्य)। सैकड़ा २॥) मंगानेका पता—अजिताश्रम—लखनऊ।

मिलनेका पता

जैनग्रन्थरत्नाकर कार्यालय

हीराबाग, पो० गिरगांव—बम्बई।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

छप गया ! छप गया !! छप गया !!!

जैनियोंकी इच्छा पूर्ण ! अपूर्व आविष्कार !! न भूतो न भविष्यति !!!

जैनार्णव

अर्थात्

१) रुपयामें १०० जैन पुस्तकें।

हमारी बहुत दिनोंसे यह इच्छा थी कि एक ऐसा पुस्तकोंका संग्रह छपाया जाय जो कि यात्रा व परदेशमें एक ही पुस्तक पास रखनेसे सब मतलब निकल जाया करे। आज हम अपने भाइयोंको खुशीके साथ सुनाते हैं कि उक्त पुस्तक "जैनार्णव" छपकर तैयार हो गया। हमने सर्व भाइयोंके लाभार्थ इन १०० पुस्तकोंको इकट्ठा कर छपाया है। तिसपर भी मूल्य सिर्फ १) रु० रक्खा है। ये सब पुस्तकें यदि फुटकर खरीदी जावें तो करीब ३) रु० के होंगी। परदेशमें यही एक पुस्तक पास रखना काफी होगा। ये देशी सफेद चिकने पुष्ट कागज पर सुन्दर टाईपमें छपी है। और सबको मिलाकर ऊपरसे मजबूत और सुन्दर टैटिल चढ़ाया है। जल्दी कीजिये क्योंकि हमारे पास अब सिर्फ आधी ही पुस्तकें बाकी रह गई हैं नहीं तो बिक जानेपर पछताओगे। कीमत फी पुस्तक १) रुपया। डांक खर्च ≈) दो आना।

मंगानेका पता:—**चन्द्रसेन जैन वैद्य-इटावा।**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तमोत्तम लेख व कविताओंसे विभूषित

हिन्दी भाषाकी

सचित्र नवीन मासिक पत्रिका

"प्रभा।"

वार्षिक मूल्य केवल ३) रुपये।

प्रति मासकी शुक्ला प्रतिपदाको प्रकाशित होती है। महात्मा स्टेड सम्पादित रिव्यू ऑफ रिव्यूजके आदर्शपर यह निकाली गई है। इसमें नीति, सुधार, साहित्य, समाज, तत्त्व तथा विज्ञानपर गम्भीरतापूर्वक विचार कर हिन्दीकी सेवा करना इसका एकमात्र ध्येय है। हिन्दीके भारी भारी विद्वान् व कवि इसके लेखक हैं। आप पहिले केवल ।-) आनेके पोस्टेज टिकिट भेजकर नमूना मँगाकर देखिये।

आपने प्रभापर की हुई समालोचनाएं पढ़ी ही होंगी। प्रभाके लेखक वे ही महामान्य हैं, जिनके नाम हिन्दीसंसारमें बार बार लिए जाते हैं। तीन रङ्गोंमें विभूषित एक चतुर चित्रकारका अनुपम चित्र कव्हरकी शोभा बढ़ा रहा है। प्रभाके लेखों एवं चित्रोंका स्वाद तो आप तभी पा सकते हैं जब उसकी किसी भी मासकी एक प्रति देख लें।

प्रभाकी प्रशंसामें अधिक कहना व्यर्थ है।

मैनेजर — प्रभा,

खंडवा, (मध्यप्रदेश)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चित्रशाला स्टीम प्रेस, पूना सिटीकी अनोखी पुस्तकें।

चित्रमयजगत्–यह अपने ढंगका अद्वितीय सचित्र मासिकपत्र है। "इलेस्ट्रेटेड लंडन न्यूज" के ढंग पर बड़े साइजमें निकलता है। एक एक पृष्ठमें कई कई चित्र होते हैं। चित्रोंके अनुसार लेख भी विविध विषयके रहते हैं। साल भरकी १२ कापियोंको एकमें बंधा लेनेसे कोई ४००, ५०० चित्रोंका मनोहर अलबम बन जाता है। जनवरी १९१३ से इसमें विशेष उन्नति की गई है। रंगीन चित्र भी इसमें रहते हैं। आर्टपेपरके संस्करणका वार्षिक मूल्य ५॥) डा० व्य० सहित और एक संख्याका मूल्य ॥) आना है। साधारण कागजका वा० मू० ३॥) और एक संख्याका ।)॥ है।

राजा रविवर्माके प्रसिद्ध चित्र–राजा साहबके चित्र संसारभरमें नाम पा चुके हैं। उन्हीं चित्रोंको अब हमने सबके सुभीतेके लिये आर्ट पेपरपर पुस्तकाकार प्रकाशित कर दिया है। इस पुस्तकमें ८८ चित्र सय विवरणके हैं। राजा साहबका सचित्र चरित्र भी है। टाइटल पेज एक प्रसिद्ध रंगीन चित्रसे सुशोभित है। मूल्य है सिर्फ १) रु०।

चित्रमय जापान–घर बैठे जापानकी सैर। इस पुस्तकमें जापानके सृष्टिसौंदर्य्य, रीतिरवाज, खानपान, नृत्य, गायनवादन, व्यवसाय, धर्मविषयक और राजकीय, इत्यादि विषयोंके ८४ चित्र, संक्षिप्त विवरण सहित हैं। पुस्तक अव्वल नम्बरके आर्ट पेपरपर छपी है। मूल्य एक रुपया।

सचित्र अक्षरबोध–छोटे २ बच्चोंको वर्णपरिचय करानेमें यह पुस्तक बहुत नाम पा चुकी है। अक्षरोंके साथ साथ प्रत्येक अक्षरको बतानेवाली, उसी अक्षरके आदिवाली वस्तुका रंगीन चित्र भी दिया है। पुस्तकका आकार बड़ा है। जिससे चित्र और अक्षर सब सुशोभित देख पड़ते हैं। मूल्य छह आना।

वर्णमालाके रंगीन ताश–ताशोंके खेलके साथ साथ बच्चोंके वर्णपरिचय करानेके लिये हमने ताश निकाले हैं। सब ताशोंमें अक्षरोंके साथ साथ रंगीन चित्र और खेलनेके चिन्ह भी हैं। अवश्य देखिये। फी सेट चार आने।

सचित्र अक्षरलिपि–यह पुस्तक भी उपर्युक्त "सचित्र अक्षरबोध" के ढंगकी है। इसमें बाराखडी और छोटे छोटे शब्द भी दिये हैं। वस्तुचित्र सब रंगीन हैं। आकार उक्त पुस्तकसे छोटा है। इसीसे इसका मूल्य दो आने है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सस्ते रंगीन चित्र—श्रीदत्तात्रय, श्रीगणपति, रामपंचायतन, भरतभेट हनुमान, शिवपंचायतन, सरस्वती, लक्ष्मी, मुरलीधर, विष्णु, लक्ष्मी, गोपीचन्द, अहिल्या, शकुन्तला, मेनका, तिलोत्तमा, रामवनवास, गजेंद्रमोक्ष, हरिहर भेट, मार्कण्डेय, रम्भा, मानिनी, रामधनुर्विद्याशिक्षण, अहिल्योद्धार, विश्वामित्र मेनका, गायत्री, मनोरमा, मालती, दमयन्ती और हंस, शेषशायी, दमयन्ती इत्यादिके सुन्दर रंगीन चित्र। आकार ७ × ५, मूल्य प्रति चित्र एक पैसा।

श्री सयाजीराव गायकवाड बड़ोदा, महाराज पंचम जार्ज और महारानी मेरी, कृष्णशिष्टाई, स्वर्गीय महाराज सप्तम एडवर्डके रंगीन चित्र, आकार ८ × १० मूल्य प्रति संख्या एक आना।

लिथोके बढ़ियाँ रंगीन चित्र—गायत्री, प्रातःसन्ध्या, मध्याह्न सन्ध्या, सायंसन्ध्या प्रत्येक चित्र।) और चारों मिलकर ॥), नानक पंथके दस गुरू, स्वामी दयानन्द सरस्वती, शिवपंचायतन, रामपंचायतन, महाराज जार्ज, महारानी मेरी। आकार १६ × २० मूल्य प्रति चित्र।) आने।

अन्य सामान्य—इसके सिवाय सचित्र कार्ड, रंगीन और सादे, स्वदेशी बटन, स्वदेशी दियासलाई, स्वदेशी चाकू, ऐतिहासिक रंगीन खेलनेके ताश, आधुनिक देशभक्त, ऐतिहासिक राजा महाराजा, बादशाह, सरदार, अंग्रेजी राजकर्ता, गवर्नर जनरल इत्यादिके सादे चित्र उचित और सस्ते मूल्य पर मिलते हैं। स्कूलोंमें किंडरगार्डन रीतिसे शिक्षा देनेके लिये जानवरों आदिके चित्र सब प्रकारके रंगीन नकशे ड्राईंगका सामान, भी योग्य मूल्यपर मिलता है। इस पतेपर पत्रव्यवहार कीजिये।

मैनेजर चित्रशाला प्रेस, पूना सिटी

केशर।

काश्मीरकी केशर जगत्प्रसिद्ध है। नई फसलकी उम्दा केशर शीघ्र मंगाईये। दर १) तोला।

सूतकी मालायें।

सूतकी माला जाप देनेके लिए सबसे अच्छी समझी जाती हैं। जिन भाइयोंको सूतकी मालाओंकी जरूरत होवे हमसे मंगावें। हर वक्त तैयार रहती हैं। दर एक रुपयेमें दश माला।

मैनेजर, जैनग्रन्थरत्नाकर कार्यालय, बम्बई।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

[इस अंकके प्रकाशित होनेकी तारीख २०-५-१४।]